संसार में सबसे मूल्यवान 'नोबल-पुरस्कार' द्वारा अब तक सम्मानित देश-विदेश के सभी साहित्यकारों के जीवन और कृतित्व का प्रामाणिक विवरण

ठाकुर राजबहादुर सिंह

# नोबल-पुरस्कार-विजेता साहित्यकार
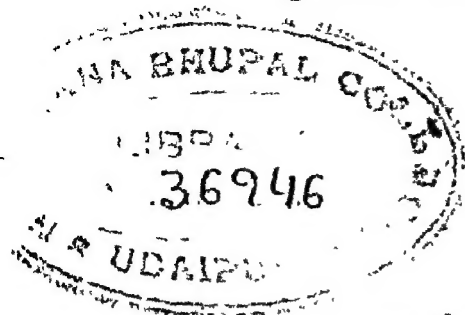
राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

# भूमिका

मानव-जीवन में साहित्य का स्थान सर्वोपरि है। जीवन के हर पहलू से सम्बद्ध होने के कारण साहित्य के अन्तर्गत कला और विज्ञान का समन्वय स्वयं हो जाता है। युगों से मानव को प्रेरणा देनेवाला साहित्य धर्मोपदेश से लेकर कथा-कहानी तक सभी प्रकार की मनोर्मियों से तरंगित होता रहा है।

प्राचीन काल में साहित्य का सत्कार राजा-सामन्त और सम्पन्न व्यक्तियों द्वारा होता था। आज के युग में भी वह प्रथा सर्वथा लुप्त तो नहीं हुई, इसका प्रकार बदल गया है—अब भी सभी प्रतिमानों के राज्य और श्रेष्ठ समाज एवं विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा साहित्य का सम्मान होता है। ढंग बदल गया है, पर उद्देश्य अब भी यही है कि साहित्य को प्रोत्साहन मिले और वह लोकरंजन और लोकहित में सहायक बने।

आज के युग में जीवन की मान्यताएं और मूल्य बदलते जाने पर भी साहित्य का सम्मान समाज से दूर नहीं हुआ है। समृद्ध देशों में भिन्न-भिन्न विषयों के साहित्य पर पुरस्कार देने के लिए कितनी ही संस्थाएँ, प्रतिष्ठान और निधियाँ कायम हैं। अपेक्षाकृत असम्पन्न देशों में भी यह प्रथा न्यूनाधिक रूप में कायम है। इस तरह के विभिन्न पुरस्कारों के बीच नोबल-पुरस्कार एक विश्वव्यापी और सर्वाधिक ख्याति-प्राप्त पुरस्कार है, जो साहित्य और विज्ञान में ख्याति प्राप्त करनेवाले को प्रतिवर्ष दिया जाता है। हमारे देश में—विशेषकर हिन्दी-जगत् में भी इस सुन्दर प्रथा का अनुसरण हुआ है और काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने इस दिशा में स्तुत्य कार्य किया है।

मुझे इस प्रकार की साहित्यिक उपलब्धियां वर्षों से आकर्षित करती रही हैं अतः इस दिशा में साहित्य-सर्जन करने की प्रवृत्ति भी पहले ही से रही है। मैंने पहले पत्र-पत्रिकाओं में लेखों द्वारा और फिर पुस्तकाकार भी, ऐसे विश्वविख्यात साहित्यकारों के जीवन और उनकी रचनाओं की चर्चा शायद हिन्दी में सबसे पहले इस शती के तीसरे दशाब्द से ही आरम्भ की थी। पीछे १९३४ में वे रचनाएं पुस्तकाकार भी प्रकाशित हुईं, जिसकी भूमिका श्री सुकुमार चटर्जी ने लिखी थी।

कालान्तर में, इन साहित्यिक पुरस्कारों की दिशा भी बदली है। जहां पहले सुन्दर काव्य और नाटक ही अधिक आकर्षण की रचना मानी जाती थीं, अब लोकहित और उपयोगिता के साथ-साथ आधुनिक मान्यताओं के अनुसार कथा-साहित्य के

प्रति विशेष अनुराग दिखाया जाने लगा है। इधर के दो दशकों में कथा-प्रवृत्ति अधिक विकसित भी हुई है, इसलिए ऐसे पुरस्कार औपन्यासिकों को ही अधिक मिले हैं। इन औपन्यासिकों में कइयों की रचनाओं के अनुवाद संसार की सभी समुन्नत भाषाओं में व्यापक रूप से हो रहे हैं—हिन्दी में भी अब ऐसी रचनाएँ अधिक आदर और चाव से पढ़ी जाने लगी हैं।

वर्तमान पुस्तक के प्रकाशन का भी एक इतिहास है। मैंने एक दिन बातों-बातों में राजपाल एण्ड सन्ज़ के पण्डित प्रकाशक श्री विश्वनाथजी से कहा था कि जब आप नोबल-पुरस्कार-विजेताओं की कृतियों के अनुवाद प्रकाशित करते हैं, तो स्वयं उनके जीवन और रचनाओं के सम्बन्ध में एक पुस्तक ही प्रकाशित क्यों नहीं कर देते। उन्होंने बात स्वीकार कर ली और इस दिशा में मुझे आगे बढ़ने को कह दिया। इस काम में दो वर्ष के लगभग लग गए जिससे कई महान् औपन्यासिकों की इतिवृत्तियाँ भी इसमें जोड़नी पड़ीं। इस बात का पूरा प्रयत्न किया गया है कि नोबल-पुरस्कार-विजेताओं और उनकी रचनाओं के सम्बन्ध में अद्यतन जानकारी इस रचना में संश्लिष्ट कर ली जाए और मैं समझता हूँ कि पाठक इसका परिचय इन पृष्ठों में स्वयं प्राप्त कर लेंगे।

—राजबहादुरसिंह

गांधी मार्ग,
राजघाट, नई दिल्ली–१

# नोबल-पुरस्कार-विजेता साहित्यकार

# नोबल-पुरस्कार-विजेता साहित्यकार

# अल्फ्रेड नोवल और नोवल पुरस्कार

---

भारत के साहित्यिकों में—विशेषकर हिन्दी के साहित्यिकों में—अभी तक नोवल महोदय और उनके पुरस्कार के सम्वन्ध में वहुत थोड़ा ज्ञान फैल पाया है। वास्तव में कवि-सम्राट श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर और विज्ञान-विशारद चन्द्रशेखर व्यंकट रामन् को नोवल-पुरस्कार मिलने के पूर्व वहुत थोड़े भारतीयों को इस वात का ज्ञान था कि नोवल महाशय कौन थे और उपर्युक्त पुरस्कार कहां से और क्यों दिया जाता है। इधर इन दो भारतीयों को यह पुरस्कार मिलने के कारण हमारे देश में उसकी काफी चर्चा हुई और समय-समय पर हिन्दी के पत्र-पत्रिकाओं में इनके सम्वन्ध में थोड़ा-वहुत उल्लेख होता रहा। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ने तो एक प्रकार से नोवल पुरस्कार का अनुकरण भी कर डाला और स्वर्गीय श्री मंगलाप्रसादजी के नाम पर प्रतिवर्ष पारितोपिक देने का प्रवन्ध कर लिया। किन्तु अभी तक हिन्दी के पाठक-पाठिकाओं को जगत्प्रसिद्ध नोवल महोदय के सम्वन्ध में वहुत अल्प—लगभग नहीं के वरावर—ज्ञान है।

पुरस्कार-विजेताओं और उनकी रचनाओं का परिचय देने के पूर्व हम यहां नोवल महोदय और उनके नाम पर प्रचलित पुरस्कार के सम्वन्ध में कुछ विस्तृत रूप में वतला देना चाहते हैं।

## वंश-परिचय

नोवल महोदय का पूरा नाम अल्फ्रेड वर्नार्ड नोवल था। इनके पूर्वजों का पारिवारिक नाम 'नोविलियस' था। इनके पितामह इमानुएल फ़ौजी डॉक्टर थे और वे अपने पारिवारिक नाम को वदलकर 'नोवल' लिखने लगे थे। अल्फ्रेड नोवल के पिता युवावस्था में स्टॉकहोम में विज्ञान के शिक्षक थे। उनकी अभिरुचि अविष्कार करने की ओर विशेष थी, इसलिए उन्होंने विस्फोटक पदार्थों के सम्वन्ध में प्रयोग करने आरम्भ कर

दिए और संयोगवश चीर-फाड़ में काम आनेवाले यंत्रों तथा रबड़ के ऐसे गद्दों के निर्माण करने के लिए नकशे बनाने में सफल हुए जो आहतों और रोगियों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकते थे। जहाजों की निर्माण-कला में भी वे काफी दिलचस्पी लेते थे और इस सम्बन्ध में उन्होंने अपना कुछ समय मिस्र में व्यतीत किया था। प्रयोग के समय विस्फोटक पदार्थों द्वारा उन्हें बड़ी हानि पहुंची थी। इस प्रकार का पहला विस्फोट १८३७ ई० में स्टॉकहोम में हुआ था, जिसके बाद वे अपने मित्रों के परामर्श से रूस चले गए। रूस में उन्हें सामुद्रिक खानों में प्रयोग करने की नौकरी मिल गई। क्रीमिया के युद्ध के बाद तक वे सपरिवार वहीं रहे, और जल-सेना के लिए युद्धोपयोगी रासायनिक आविष्कार करते रहे। जब वे सपरिवार स्वीडन लौटने लगे, तो उनका बड़ा लड़का लडविग रूस में ही रह गया। लडविग रूस मे प्रख्यात इंजीनियर बन गया और उसने बाकू में तेल की कई खानों का पता लगाया।[1] दूसरी बार स्वीडन के एक कारखाने में १८६४ ई० में फिर एक भयंकर विस्फोट हुआ, जिसमें उनके छोटे लड़के की मृत्यु हो गई और उनके पिता को ऐसी चोट आई, जिससे वे अपने शेष जीवन-भर रोगी बने रहे।

## जन्म और शिक्षा

अल्फ्रेड बर्नार्ड नोबल का जन्म १८३३ ई० में स्टॉकहोम में हुआ था। वह अपने भाइयों की अपेक्षा कम हृष्ट-पुष्ट थे; उनमें स्नायविक दुर्बलता थी और वे कोमल प्रकृति के थे। वे जीवन-भर सिर-दर्द से रुग्ण रहे। उनकी माता कैरोलाइन हेनरीट आलसिल उन्हें बड़ा प्रेम करती थीं और बचपन से ही वे उन्हें वीर और बुद्धिमान मनुष्यों की कहानियां सुनाया करती थीं। बुद्धिमती माता को मानो पहले ही इस बात का पता लग गया था कि अस्वस्थ प्रकृति का होते हुए भी उनका पुत्र किसी दिन एक महान् पुरुष बनेगा। अल्फ्रेड ने अपना विवाह नहीं किया, यद्यपि उनका एक लड़की से प्रेम हो गया था, जो अपनी तरुणावस्था में ही इस संसार से चल बसी थी। वे अन्त तक अपनी माता के भक्त बने रहे। वय-प्राप्त होकर जब वे विदेशों में रहने लगे, तो प्रायः अपनी मां को बड़े ही प्रेम-पूर्ण पत्र लिखा करते थे और कभी-कभी स्वीडन जाकर उनके दर्शन कर आया करते थे।

अपने पिता की तरह अल्फ्रेड ने भी रसायन, प्रकृति-विज्ञान, और यांत्रिक शिल्प का अध्ययन करने में काफी दिलचस्पी ली। लगभग सत्रह वर्ष की ही अवस्था में उनका ध्यान जहाज के निर्माण की ओर गया और वे उसके यंत्रों आदि का यथेष्ट ज्ञान प्राप्त करने के लिए अमेरिका भेजे गए। अल्फ्रेड के पिता ने उन्हें इरिक्सन नामक अपने एक स्वदेशवासी के पास भेजा, जो उन दिनों सूर्य की गर्मी से इंजन चलाने के सम्बन्ध में कुछ प्रयोग कर रहे थे। अल्फ्रेड ने लगभग एक वर्ष वहां रहकर इरिक्सन को उनके आविष्कार में सहायता दी। इरिक्सन के भाग्य में उन दिनों परिवर्तन आरम्भ हो गया था। १८४९

---

१. 'वेस्ट मिन्स्टर रिव्यू' के १५६वें और ६४२वें अङ्कों में प्रकाशित लेख।

ई० में उनके पास १३२ डालर[1] की सम्पत्ति शेष थी, और उस साल उन्हें कुल २,००० डालर की आमदनी हुई थी। किन्तु दो ही वर्ष बाद उनके पास ८७०० डालर के लगभग रकम इकट्ठी हो गई। इस बीच उन्होंने बहुत-से नये आविष्कार करके उनके अधिकार बेच दिए थे और स्वीडन-सम्राट से उन्हें इस सफलता के लिए बधाई प्राप्त हुई थी। किन्तु १८५३ ई० में जब इरिक्सन की ५ लाख डालर की विपुल सम्पत्ति की लागत से उनका नवाविष्कृत इंजन लगाकर तैयार किया हुआ 'दि इरिक्सन' नामक जहाज, जिसे उन्होंने कितने ही वर्षों के लगातार अध्यवसाय के बाद तैयार किया था, परीक्षा के समय समुद्र में डूब गया, तो इरिक्सन का दिल टूट गया। फिर भी इरिक्सन ने साहस नहीं छोड़ा और 'दि मानीटर' नामक एक दूसरा जहाज बनाने का नकशा संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की सरकार को उन्होंने दे दिया, जिसके निर्माण के फलस्वरूप उपर्युक्त सरकार को बड़ी सफलता मिली।[2]

अल्फ्रेड नोबल के दुर्बल स्वभाव पर श्री इरिक्सन के इस भारी उत्थान और पतन का गहरा प्रभाव अवश्य पड़ा होगा। कदाचित् उसी समय नवयुवक नोबल ने यह विचार किया होगा कि वैज्ञानिकों की सहायता के लिए कुछ ऐसा धनकोश होना चाहिए, जिससे परीक्षा के समय असफल हो जाने पर, उन्हें कुछ आर्थिक सहायता मिल सके। जब वे स्वीडन और रूस से लौटे, तो विस्फोटक पदार्थों की निर्माण-क्रिया में अपने पिता और भाइयों का हाथ बटाने लगे। अल्फ्रेड नोबल अब इसी खोज में लग गए कि किसी ऐसे पदार्थ का निर्माण होना चाहिए, जो अधिक शक्तिशाली होते हुए भी कम खतरनाक हो। सन् १८५७ ई० में उन्होंने पीटर्सबर्ग में वाष्प-मापक-यंत्र बनाया और उसके निर्माणाधिकार की रजिस्ट्री अपने नाम से करा ली। कई लेखकों का कथन है कि 'डाइनामाइट' नामक प्रबल स्फोटनशील द्रव्य का आविष्कार उन्होंने अन्य परीक्षणों के समय सन् १८६५-६६ ई० में संयोगवश कर लिया था। इस आविष्कार के पश्चात् अतुल धन कमाने की आशा से उन्होंने कई देशों में इसके निर्माण के लिए कारखाने खोलने के लिए उनकी सरकारों से प्रार्थना की और फ्रांस के बैंकवालों से यह कहकर ऋण मांगा कि उन्होंने एक ऐसा पदार्थ तैयार किया है, जिससे संसार को उड़ा दिया जा सकता है; किन्तु बैंकवालों ने रकम देने से इन्कार कर दिया।

## सफलता और अन्त

अन्ततः नैपोलियन तृतीय ने नोबल के इस आविष्कार में दिलचस्पी ली और फ्रांस में कारखाना खोलने के लिए नोबल को कुछ रकम दे दी। 'डाइनामाइट' के कुछ नमूने थैले में बन्द कर अल्फ्रेड नोबल उसके व्यापार के सम्बन्ध में अमेरिका गए। न्यूयार्क के होटलों ने डरते-डरते उन्हें अपने यहां ठहराया, क्योंकि उनके विस्फोटक पदार्थों की चर्चा

१. डालर आजकल लगभग साढ़े चार रुपये के बराबर होता है।
२. The Life of John Ericsson by W. C. Church, New York, 1901.

वहां पहले ही से हो चुकी थी। न्यूयार्क से वे कैलीफोर्निया गए, जहां उनके बड़े भाई के मित्र डाक्टर बैण्डर्मन रहते थे। उनकी सहायता से नोबल ने 'लास एंजिलस'[1] नगर के पास एक कारखाना खोल लिया। कुछ ही वर्षों में इटली, स्पेन, फ्रांस, स्कॉटलैण्ड, इंगलैण्ड और स्वीडन में नोबल के कारखाने खुल गए। जिस समय अल्फ्रेड नोबल की अवस्था चालीस वर्ष की हुई, उस समय 'जायण्ट पाउडर' नामक पदार्थ के निर्माण से उन्हें बड़ा आर्थिक लाभ हुआ। कई वर्ष पेरिस में रहकर उन्होंने सरेश, वैलेस्टाइट और अनेक प्रकार के धूम्रहीन पाउडरों के आविष्कार के लिए रसायनशालाएं खोलीं। इसके पश्चात् 'सैन रीमो' में रहकर उन्होंने पेट्रोल और कृत्रिम गटापारचे के निर्माणाधिकार की रजिस्ट्री कराई। वैज्ञानिकों और शिक्षितों ने उनका बड़ा आदर किया; किन्तु अर्द्धशिक्षित और अज्ञानी लोग उन्हें भय की दृष्टि से देखते थे।

यद्यपि नोबल महोदय का कार्य उच्चाभिलाषापूर्ण था और उन्हें सफलता, धन और प्रतिष्ठा खूब प्राप्त हुई थी, फिर भी उन्होंने विवाह नहीं किया। उनका स्वास्थ्य ऐसा खराब रहता था कि वे प्रायः सिरदर्द से दबे-से रहते थे। फिर भी वे सिर पर पट्टी बांधे रसायनशाला में डटे रहते थे। उन्हें इस बात का भय था कि लोग उनकी ओर केवल उनके विपुल धन के कारण आकर्षित हो रहे हैं। बैरोनेस बर्था-वॉन-सटनर नामक एक महिला ने, जो कुछ दिनों इनकी सेक्रेटरी रह चुकी थीं, उनके संस्मरण में लिखा है—"वे कद में कुछ छोटे थे; उनके रूप में कोई विशेषता नहीं थी। वे बहुभाषाविद् और दार्शनिकतापूर्ण स्वभाव के थे। बातचीत में पटु और कहानी कहने में अद्वितीय थे। वे उच्छृङ्खल और झूठे लोगों के तीव्र आलोचक थे, और वैज्ञानिकों तथा साहित्यिकों से मिलकर प्रसन्न होते थे।"

बैरोनेस-वॉन-सटनर के संस्मरणों से इस बात का पता लगता है कि नोबल महोदय का उद्देश्य पुरस्कार—और विशेष करके शान्ति-सम्बन्धी पुरस्कार—का विचार निश्चित करने में क्या था। यहां यह बतला देना आवश्यक है कि 'शान्ति-सम्बन्धी' पहला पुरस्कार बैरोनेस-वॉन-सटनर को उनकी प्रख्यात कहानी 'हथियार फेंक दो!'[2] के लिए मिला था। इस कहानी में उक्त महिला ने संसार में शान्ति-स्थापना करने की आवश्यकता का प्रबल समर्थन किया था। इसके प्रकाशन के बाद १८९० ई० में नोबल महोदय ने इसकी बड़ी प्रशंसा की। एक अवसर पर उन्होंने कहा था कि यदि मैं कोई ऐसा यंत्र बना सकता, जिसके द्वारा युद्ध का रोकना सम्भव होता, तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होती। ७ जनवरी, १८९३ ई० को, अपनी मृत्यु के तीन वर्ष पूर्व उन्होंने उपर्युक्त बैरोनेस को पेरिस से लिखा था कि मैं अपने धन का एक भाग प्रति पांचवें वर्ष शान्ति-स्थापना के लिए पुरस्कार के रूप में देना चाहता हूं और इसे तीस वर्ष तक—अर्थात् छः किस्तों में—देना उचित होगा, क्योंकि यदि तीस वर्ष तक सब राष्ट्रों ने वर्तमान अवस्था को सुधारकर युद्ध

१. जिसमें अब हालीवुड के नाम से संसार का सर्वश्रेष्ठ सिनेमाकेन्द्र बन चुका है।
२. Die Waffn enieder.

बन्द करने का प्रवन्ध न किया, तो फिर वे असभ्य और जंगलियों के रूप में परिवर्तित हो जाएंगे। नोवल महोदय धन एकत्रित करके उत्तराधिकारियों के लिए छोड़ जाने के विरोधी थे।

१० दिसंबर, १८९६ ई० को अकस्मात् 'सैन रीमो' के कारखाने में अल्फ्रेड नोवल का देहान्त हो गया। उन्होंने बहुत पहले से ही दुर्बलता का अनुभव करके डॉक्टरों से अनिच्छापूर्वक परामर्श लिया था और बड़ी हिचकिचाहट के साथ उनके आदेशों का पालन करते थे। इस अवस्था में भी वे दिन-भर रसायनशाला का काम करते थे। अपने अन्तिम दिनों में ही उन्होंने अपने धन के उपयोग पर विचार किया था और अन्ततः यह निश्चय किया था कि वे अपना धन विज्ञान, साहित्य और मनुष्य-जाति के कल्याणार्थ सार्वभौम शान्ति की शिक्षा के लिए व्यय करेंगे। उनके मौलिक और आदर्श दान के वसीयतनामे से सारा सभ्य संसार चकित हो उठा। जिस व्यक्ति ने इतनी सफलतापूर्वक संसार के विनाशकारी पदार्थों का आविष्कार किया था, उसने अपना विशाल धन समस्त संसार के मंगल के लिए रचनात्मक साहित्य की सृष्टि में लगा दिया।

## नोवल पुरस्कार का विवरण

यहां नोवल महोदय के वसीयतनामे का सारांश दिया जाता है, जिससे पाठक समझ सकेंगे कि उसमें पुरस्कार की शर्तें क्या-क्या हैं :

"मैं, डॉ० अल्फ्रेड वर्नार्ड नोवल, अपनी चल भू-सम्पत्ति के सम्बन्ध में, जिसका नक्शा २७ नवम्बर, १८९५ ई० को बनाया गया था, आदेश देता हूं कि वह रुपये के रूप में परिवर्तित करके सुरक्षित रूप में जमा करवा दी जाए। इस प्रकार जो धन जमा होगा, उसके व्याज से प्रति वर्ष उन व्यक्तियों को पुरस्कार दिए जाएं, जो उस वर्ष में मानव-जाति के हित के लिए सर्वोत्कृष्ट पुस्तकें लिखें। व्याज की रकम पांच बराबर भागों में बंटेगी, जिसका विभाजन निम्नलिखित ढंग से होगा—इस धन का एक भाग उस व्यक्ति को मिलेगा, जिसने प्रकृति-विज्ञान या पदार्थ-विद्या के सम्बन्ध में किसी नई बात का आविष्कार किया होगा; एक भाग उसको मिलेगा, जिसने रसायन में किसी नये तत्त्व का उद्घाटन किया होगा; एक भाग उस व्यक्ति को दिया जाएगा, जिसने प्राणि-शास्त्र या औषध-विज्ञान में किसी नई बात का आविष्कार किया होगा और एक भाग उस व्यक्ति को प्रदान किया जाएगा, जो साहित्यिक-जगत् में आदर्शपूर्ण सर्वोत्तम नूतन ज्ञान की सृष्टि करेगा; तथा अन्तिम एक भाग उस व्यक्ति को समर्पित किया जाएगा, जो संसार के सब राष्ट्रों में बन्धु-भाव और शान्ति स्थापित करने और युद्ध रोकने का सत्प्रयत्न करेगा।"

आगे चलकर उन्होंने लिखा है : "पदार्थ-विद्या और रसायन के पुरस्कार प्रदान करने का अधिकार स्टॉकहोम-स्थित 'स्वीडिश एकैडमी ऑफ साइन्स' को होगा; प्राणि-

शास्त्र और औषध-विज्ञान-सम्बन्धी पुरस्कार स्टॉकहोम का 'कैरोलिन मेडिकल इन्स्टीट्यूट' प्रदान किया करेगा, साहित्य-सम्बन्धी पुरस्कार देने का अधिकार स्टॉकहोम की एकेडमी (स्वेन्स्का एकेडमीन) को होगा और सार्वभौम शान्ति-सम्बन्धी पुरस्कार का निर्णय पांच व्यक्तियों की एक समिति करेगी, जिनका निर्वाचन 'नार्वेजियन स्टॉरटिंग' के द्वारा होगा। मेरी यह विशेष इच्छा है कि पुरस्कार देने में किसी भी उम्मीदवार के देश, जाति या धर्म आदि का विचार न किया जाए।"

इस प्रकार नोबल महोदय की जमा की हुई सम्पत्ति २० लाख पौण्ड[1] से अधिक थी, जिसमें से प्रत्येक पुरस्कार में प्रतिवर्ष ८००० पौण्ड दिए जाते हैं।

साहित्य-सम्बन्धी पुरस्कार में दो शर्तें और रखी गई थीं, जिनमें से पहली यह थी कि "यदि साहित्य की दो पुस्तकें पुरस्कार-योग्य सिद्ध हों, तो उपर्युक्त पुरस्कार की रकम दोनों में बराबर विभाजित की जा सकती है।" इसके अनुसार १९०४ ई० का पुरस्कार स्पेनी नाटककार जोज एकेगारे और प्रावेन्स के कवि फ्रेडरिक मिस्त्राल में बराबर-बराबर बांट दिया गया था। इसी प्रकार १९१७ ई० में यह पुरस्कार डेन्मार्क के दो लेखकों में समान रूप से विभाजित कर दिया गया था। दूसरी शर्त यह थी कि "यदि किसी वर्ष ऐसा परीक्षाधीन साहित्य उच्चतम कोटि का न सिद्ध हो सके, तो उस वर्ष पुरस्कार किसीको नहीं दिया जाएगा और वह रकम मूलधन में जोड़ दी जाएगी।" इसके अनुसार १९१४ और १९१८ ई० में कोई साहित्यिक पुरस्कार नहीं दिया गया।

पुरस्कारों का निर्णय न्यायपूर्वक हो, इसके लिए वसीयतनामे में यह नियम भी लिखा गया था कि इस कार्य के लिए 'नोबल कमेटी' नामक एक संस्था स्थापित होगी, जिसमें तीन से पांच तक ऐसे सदस्य होंगे, जो पुरस्कार का निर्णय करेंगे। इस 'कमेटी' (समिति) का सदस्य बनने के लिए यह आवश्यक नहीं होगा कि वह व्यक्ति स्वीडन का ही नागरिक हो।

पुरस्कार के उम्मीदवार उपर्युक्त समिति से किस प्रकार लिखा-पढ़ी कर सकते हैं, इसके सम्बन्ध में पुरस्कार-सम्बन्धी नियमावली के सातवें नियम में लिखा है कि वसीयतनामे की शर्त के अनुसार पुरस्कार के लिए उम्मीदवार का नाम किसी सुयोग्य व्यक्ति द्वारा प्रस्तावित होगा। पुरस्कार के लिए सीधे भेजे हुए प्रार्थनापत्र पर विचार नहीं किया जाएगा। 'सुयोग्य व्यक्ति' का मतलब यहां ऐसे मनुष्य से है, जो विज्ञान, साहित्य आदि के क्षेत्र में प्रतिनिधित्व करता हो, चाहे वह स्वीडन का निवासी हो या अन्य देश का। पुरस्कार-सम्बन्धी नियमों को सर्वसाधारण में प्रचारित करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रति पांचवें वर्ष उन्हें सभ्य संसार के प्रभावशाली पत्रों में प्रकाशित कराया जाए।

पुरस्कार के उम्मीदवारों के नाम प्रति वर्ष पहली फरवरी तक स्टॉकहोम पहुंच

१. पौण्ड लगभग १५ रुपये के बराबर होता है।

जाने चाहिए। यद्यपि सफल उम्मीदवारों के नाम समाचारपत्रों द्वारा प्रति वर्ष नवम्बर महीने में प्रकाशित हो जाते हैं, किन्तु संस्था की ओर से इसकी सूचना नियमपूर्वक १० दिसम्बर को प्रकाशित होती है, जो अल्फ्रेड नोवल की निधन-तिथि है। इसी समय निर्णयकर्ता पुरस्कार-विजेताओं को पुरस्कार की रकमों के चेक (जिनमें से प्रायः प्रत्येक ८००० पौण्ड का होता है) देते हैं और साथ ही उन्हें सनद और स्वर्ण-पदक भी प्रदान करते हैं, जिनपर नोवल महोदय की खुदी हुई मुखाकृति और कुछ लिखित मजमून होता है। पुरस्कार के नियमों में एक बात यह भी लिखी हुई है कि पुरस्कार-विजेता के लिए, जहां तक सम्भव हो, यह आवश्यक होगा कि जिस पुस्तक पर उसे पारितोपिक मिला हो, उसके 'विपय' पर पुरस्कार प्राप्त करने के छः मास के अन्दर स्टॉकहोम में व्याख्यान दे और शान्ति-संस्थापना-सम्बन्धी पुरस्कार-विजेता क्रिश्चियना में भाषण दे। पुरस्कार-सम्बन्धी उपर्युक्त नियम साहित्यिक पारितोपिकों पर लागू नहीं हो सका, क्योंकि साहित्यिक पुरस्कार-विजेताओं में से बहुत-थोड़े ऐसे हुए हैं, जो स्वयं उपस्थित होकर पुरस्कार प्राप्त कर सके हों। निर्णयकर्ताओं के निर्णय के विरुद्ध किसी प्रकार की आपत्ति की सुनवाई नहीं हो सकती। यदि निर्णयकर्ताओं में कोई मतभेद होगा, तो उसकी सूचना न तो कार्य-विवरण में प्रकाशित होगी, न सर्वसाधारण को दी जाएगी।

जिस समिति द्वारा पुरस्कार के धन का प्रवन्ध होता है, उसका नाम है 'नोवल फाउण्डेशन'। इसके पांच सदस्य होते हैं, जिनमें से एक—प्रधान—की नियुक्ति स्वीडन-सम्राट करते हैं और शेप चार सदस्यों का चुनाव प्रवन्ध-समिति से होता है। साहित्य-सम्बन्धी पुरस्कार का निदर्शन 'स्वीडिश एकैडमी' करती है, जिसके सदस्य 'नोवल इन्स्टीट्यूट' और उसके पुस्तकालयाध्यक्ष की सहायता से सब प्रवन्ध करते हैं। इस संस्था के पुस्तकालय में पुस्तकों का सुन्दर संग्रह है—खास करके आधुनिक लेखकों की कृतियां यहां सब मिल जाती हैं। पुस्तकें सभी प्रगतिशील भाषाओं की रखी जाती हैं और आवश्यकता पड़ने पर उनके अनुवादों की प्रतियां भी रखी जाती हैं। नव प्रकाशित पुस्तकों के नये से नये विवरण भी यहां प्रस्तुत रखे जाते हैं।

## सुपरिणाम

चाहे और जो हो, किन्तु यह बात सुनिश्चित है कि अल्फ्रेड नोवल की पुरस्कार-सम्बन्धी दो शर्तों का पालन सुचारु रूप से हुआ है। पहली बात यह हुई है कि सभी क्षेत्रों के पुरस्कार-विजेताओं द्वारा मनुष्य-जाति की 'बहुत' नहीं, तो 'कुछ' सेवा अवश्य हुई है, और दूसरी बात यह हुई है कि पुरस्कार के उम्मीदवार की जातीयता पर कोई विचार नहीं किया गया।

पहला नोवल पुरस्कार सन् १६०१ ई० में दिया गया था। तब से १६२५ ई० तक साहित्य-सम्बन्धी पारितोपिक संसार के विभिन्न राष्ट्रों के व्यक्ति प्राप्त कर चुके हैं।

इन पुरस्कारों का अन्तर्राष्ट्रीय प्रभाव अच्छा हुआ है और सभी सभ्य देशों में

इन पुरस्कारों के सम्बन्ध में काफी चर्चा हुई है। इसमें सन्देह नहीं कि इस विशाल विश्व में केवल एक ही अन्तर्राष्ट्रीय विख्यात साहित्य-पुरस्कार नाममात्र का लाभ पहुंचा सकता है, परन्तु आदर्श और उदाहरण के रूप में पहला प्रयत्न होने के कारण महामना नोबल का नाम सदा के लिए अमर रहेगा, और संसार में बहुत-से ऐसे विद्या-व्यसनी धनिक पैदा हो जाएंगे, जो इसका अनुसरण करेंगे और जिस पवित्र उद्देश्य से नोबल महोदय ने अपनी जन्म-भर की कष्टपूर्वक अर्जित सम्पत्ति संसार को प्रदान कर दी है, उसकी पूर्ति के लिए सचेष्ट होंगे।

# सुली प्रूधों

१९०१ ई० में साहित्य का नोबल पुरस्कार सुली प्रूधों को मिला। यूरोप में फ्रांस का साहित्य बहुत पहले से अद्वितीय रहा है। शताब्दियों से फ्रांसीसी भाषा यूरोप की सर्वश्रेष्ठ साहित्यिक भाषा मानी जाती है। साहित्य में जो गौरवपूर्ण पद हमारे देश में बंगभाषा को प्राप्त है, वही—बल्कि उससे भी ऊंचा—यूरोप में फ्रांसीसी भाषा को प्राप्त है। यही कारण है कि पहले-पहल नोबल पुरस्कार जीतने का श्रेय फ्रांसीसी कवि रेनी फ्रांसिस अर्मा को प्राप्त हुआ था।

फ्रांसिस अर्मा का जन्म १६ मई, १८३९ ई० को पेरिस में हुआ था। ये एक अच्छे कवि, और विख्यात फ्रेंच एकेडमी के सदस्य थे। इनका पूरा नाम रेनी फ्रांसिस अर्मा सुली प्रूधों था। १९०१ ई० में जिस समय उन्हें पहले-पहल नोबल पुरस्कार मिला, उस समय फ्रांस के पत्र-पत्रिकाओं में तो इनकी कृतियों की धूम मच ही गई, साथ ही इंगलैंड, जर्मनी, स्कैण्डेनेविया और अमेरिका के साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में भी उनकी खूब समालोचनाएं प्रकाशित हुई। चालीस वर्ष से भी अधिक समय से वे अपने समय के अद्वितीय कवि माने जाते थे। फ्रांस में तो उन्हें उन्नीसवीं सदी का सर्वश्रेष्ठ दार्शनिक कवि माना जाता था। पुरस्कार मिलने तक इनकी रचनाओं के अनुवाद तथा इनके जीवन-सम्बन्धी अन्य बातें अंग्रेजी भाषा में बहुत कम मिलती थीं। अब भी इनकी रचनाएं अंग्रेजी में कम ही अनूदित हुई हैं। फ्रेंच एकेडमी के लिए यह गौरव की बात थी कि उसके एक सदस्य को अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्द्धा में सर्वप्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ।

रेनी सुली प्रूधों अपनी माता के एकमात्र पुत्र थे। इनकी माता का तरुणावस्था के आरम्भ में जिस पुरुष के साथ प्रेम हुआ था, उससे विवाह करने के लिए उन्हें दस वर्ष तक प्रतीक्षा करनी पड़ी, पर विवाह अन्त में उन्होंने अपने उसी प्रेमी से किया, दुर्भाग्यवश विवाह के चार ही वर्ष पश्चात् उनके पति का देहान्त हो गया, और दोनों के प्रेम का अवशिष्ट चिह्न केवल शिशु सुली प्रूधों रह गया। माता ने अपने इस इकलौते बेटे को बड़े लाड़-प्यार से पाला और उसे समुचित शिक्षा देने का प्रबन्ध कर दिया।

बचपन से ही सुली प्रूधों की मेधा का पता लग गया। पेरिस स्थित 'इकोल पॉलीटेकनिक' नामक पाठशाला में भर्ती होकर, इन्होंने गणित-सम्बन्धी विज्ञान में अच्छी योग्यता का परिचय दिया। उस समय ऐसा प्रतीत हुआ कि प्रूधों महाशय आगे चलकर एक अच्छे अध्यापक बनेंगे। किन्तु सहसा उन्हें आंखों की ऐसी भयानक बीमारी हो गई कि वे एकाग्रतापूर्वक आगे अध्ययन नहीं कर सके और उन्होंने कुछ दार्शनिक ढंग की कविताएं लिखनी आरम्भ कर दीं। इनकी आरम्भिक कविताओं में ही 'जीवन के अभिप्राय'-सम्बन्धी गम्भीर प्रश्न[1] पूछे गए हैं।

उनकी कविताओं का पहला संग्रह 'स्टैंजेज-एट पोयम्स' तब प्रकाशित हुआ, जब उनकी अवस्था छब्बीस वर्ष की हो चुकी थी। समालोचकों में इसकी काफी चर्चा रही और इसकी बिक्री इतनी अधिक हुई कि युवक प्रूधों ने वैज्ञानिक या वकील बनने के बदले कविता लिखने में ही अपना समय लगाने का निश्चय कर लिया। इसी संग्रह में उनकी विख्यात कविता 'ली वेस ब्राइस' भी आ गई थी, जिसमें उन्होंने हृदय की उपमा टूटे पात्र से दी है।

दूसरे वर्ष उन्होंने 'ले ए प्रीवेस' नामक काव्य-ग्रन्थ प्रकाशित कराया, जिसका अनुवाद 'दि टेस्ट' नाम से अंग्रेजी में भी प्रकाशित हो चुका है। इसके तीन वर्ष पश्चात् अर्थात् १८७५ ई० में 'ले सालिच्युद' और 'ले वैरेंद टेण्ड्रेसेज' नामक दो पुस्तकें और प्रकाशित हुईं। इन काव्य-ग्रन्थों के रूप में उन्होंने अपने स्वभाव की अभिव्यक्ति के रूप में 'विवेक' और 'भावों' का संघर्ष प्रतिपादित किया है। इसके बाद 'ला जस्टिस' और 'ले बानहूर' नामक दो और रचनाएं प्रकाशित हुईं जिनमें उपर्युक्त संघर्ष और भी उग्र रूप में अभिव्यक्त किया गया। उनके देशवासियों ने प्रूधों को विक्टर ह्यूगो का स्थानापन्न माना और उन्हें १८८१ ई० में फ्रेंच एकेडमी का सदस्य चुन लिया। 'ला जस्टिस' के दो भागों में से पहले का अनुवाद अंग्रेजी में 'हार्ट, बी साइलेंट'[2] नाम से हो चुका है। अपने विचार व्यक्त करने के लिए उन्होंने जो दो माध्यम चुने हैं, उनमें से एक है 'दि सीकर' (जिज्ञासु) है और दूसरा 'ए व्हाइस' (एक आवाज)। इन्हींके द्वारा प्रूधों ने सब वस्तुओं की दार्शनिक यथार्थता का विश्लेषण किया है और संसार की सभी वस्तुओं में 'दैवी रूप' की घोषणा की है। उन्होंने यह सिद्ध किया है कि न्याय और निरपेक्षता संसार में नहीं, मनुष्य के हृदय में मिल सकती हैं, जो उनका पवित्र मन्दिर है।

जिस प्रकार 'ला जस्टिस' में न्याय की खोज के लिए भौतिक प्रकृति के निरीक्षण के दृष्टान्तों पर ध्यान देने को कहा गया है, उसी तरह 'ले बानहूर' में 'चरम आनन्द' तक पहुंचने के लिए तीन मार्ग बतलाए गए हैं, जो क्रमशः उत्सुकता, चेतनता

---

१ वास्तव में ये प्रश्न पाश्चात्य देशवासियों के लिए ही गम्भीर हैं, भारत के तो साधारण लोगों ने भी उनके अन्दर कोई गम्भीरता नहीं दीखेगी। —लेखक

२. 'ओ मेरे हृदय! शान्त हो।'

और ज्ञान तथा बलिदान की निष्ठा हैं। अंग्रेजी में इन तीनों की क्रियाओं को क्रमशः प्रमत्तता[1], विचार[2], और उच्चतम उड़ान[3] कहा गया है। इस काव्य-ग्रन्थ के फास्टस और स्टोला नामक दो पात्र सुख की खोज में लगते हैं और संसार के मायामोह और लोभ से आध्यात्मिक उड़ान भरकर—अर्थात् इनसे पृथक् होकर (आत्म) बलिदान में सुख की सम्भावना प्राप्त करते हैं।

सुली प्रूधों के सहयोगी और सामयिक साहित्यिक श्री अनातोल फ्रांस ने उनके व्यक्तित्व और काव्य—दोनों ही की प्रशंसा की है। अनातोल फ्रांस की जीवनी में प्रूधों महाशय के प्रति उनके प्रेम और प्रशंसा के भाव लिखते हुए लेखक (जेम्स लुई मे) लिखते हैं :

"प्रूधों की बुद्धि, उनका रूप तथा उनका धन तीनों ही सुन्दरता के सम्मिश्रण हैं।" इस प्रकार 'तीन कवि'[4] नामक पुस्तक में महाशय ए० डब्ल्यू० इवान्स ने सुली प्रूधों, फ्रांसिस कोपी और फ्रेडरिक प्लेसी की तुलना करते हुए लिखा है—"उन (प्रूधों) में न केवल कवि के रहस्यपूर्ण गुण ही थे, वरन् उनके हृदय में नितान्त सरलता, नम्रता, करुणा, अकपटता, सादगी और दार्शनिक संशयवादिता भी थी।"

प्रूधों महाशय का स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता था। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में तो उन्हें पक्षाघात की बीमारी हो गई थी। फांसिस ग्रियर्सन महोदय ने लिखा है :

"ये (प्रूधों) सुन्दर और निराले ढंग के व्यक्ति थे। उनकी अन्तर्दृष्टि स्पष्ट थी। उन्होंने अपने वैज्ञानिक मस्तिष्क से संसार के माया-जाल के विरुद्ध युद्ध जारी कर दिया था और अपने कोमल भावों द्वारा कवि के स्वप्न की गहरी अनुभूति प्राप्त की थी। अपने घर पर (जो रू-डी-फावर्ग मुहल्ले में स्थित था) ये नये कवियों का बड़ा सत्कार करते थे। ये सामाजिक जीवन कम पसन्द करते, यद्यपि ये काउण्टेस दियां-डी-बीसाक के घर प्रायः देखे जाते थे। काउण्टेस महोदया एक अनिन्द्य सुन्दरी और स्वच्छंद स्वभाव की कवियित्री थीं। उनके सौंदर्य से अनुप्राणित होकर कवि प्रूधों कविता करते थे। यहीं दोनों मित्र दर्शन और कला पर विचार-विमर्श करते थे।"

फ्रांस और प्रशिया में जो युद्ध हुआ था, उसका प्रभाव कवि सुली प्रूधों की कोमल भावनाओं पर गम्भीर रूप में पड़ा था और उन्होंने राजनीतिक बहस में पड़कर उसपर भी अपने विचार प्रकट किए थे। इसके पश्चात् उन्होंने ललित कला, छन्द-शास्त्र और काव्य-सिद्धान्त पर निबन्ध लिखे। फिर उन्होंने 'मैं क्या जानता हूं ?' नामक पुस्तक लिखी।

---

१. Intoxication
२. Thought
३. Supreme Flight
४. Three Poets

इसके चार वर्ष के अनन्तर उन्हें नोबल पुरस्कार मिला, और मृत्यु के दो वर्ष पूर्व—अर्थात् छासठ वर्ष की अवस्था में—उन्होंने 'ला व्रेई रेलीजन सेलों पास्कल' नामक ग्रंथ लिखा, जिसमें जीवन और साहित्य में आध्यात्मिकता के महत्त्व के सम्बन्ध में खूब प्रकाश डाला गया है।

सुली प्रूधों की स्फुट कविताओं में से अधिकांश का अंग्रेजी अनुवाद आर्थर ओ' शाफ़नेसी, ई० ऐण्ड आर० प्रोथेरो तथा डोरोथी फ्रांसिस गिनी ने किया है।[1]

---

१. जो पाठक अंग्रेजी भाषा का पर्याप्त ज्ञान रखते हों और प्रूधों महाशय की चुनी हुई कविताओं का आनन्द लेना चाहें, वे The Modern Book of French Verse पढ़ें, जिसका सम्पादन एल्बर्ट बोनी (न्यूयार्क) ने किया है।

—लेखक

# थ्योडोर मॉमसन

थ्योडोर मॉमसन को १६०२ ई० में नोवल पुरस्कार मिला था। ये वर्लिन विश्वविद्यालय के इतिहासाध्यापक थे और अपने समय में इतिहास के अद्वितीय विद्वान माने जाते थे। उन्हें अपने प्रसिद्ध ऐतिहासिक ग्रन्थ 'रोमिशे जोशिश्ते' के उपलक्ष्य में वह पुरस्कार प्राप्त हुआ था।

नोवल पुरस्कार प्राप्त करने में फ्रांस के बाद जर्मनी का नाम आया। मॉमसन महोदय इतिहास के अतिरिक्त कानून और प्राच्य-विद्या के भी अच्छे ज्ञाता थे। उन्हें यह पुरस्कार चौरासी वर्ष की अवस्था में प्राप्त हुआ था, और पारितोपिक मिलने के दूसरे ही वर्ष उनका देहान्त हो गया।

जिस समय अध्यापक मॉमसन को पुरस्कार मिलने की खुशी में जर्मन विद्वान आनन्द मना रहे थे, उसी समय कुछ आलोचकों ने इस बात का विरोध किया कि यह पुरस्कार नोवल के वसीयतनामे के शब्दों को ध्यान में रखकर नहीं दिया गया, क्योंकि नोवल महोदय ने 'आदर्शवाद-युक्त' साहित्य के लिए पुरस्कार देने का उल्लेख किया था। इस विरोध से क्या होता था, क्योंकि पुरस्कार प्राप्तकर्ता महोदय तो वयोवृद्ध हो चुके थे; अब वे आदर्श साहित्य लिखने के लिए नहीं जीवित रह सकते थे। हां, इसका यह परिणाम अवश्य हुआ कि स्वीडिश एकैडमी ने 'साहित्य' शब्द का अर्थ अधिक विस्तृत कर दिया और उसके अन्तर्गत विज्ञान तथा कला के अन्तर्गत आनेवाले सभी विषयों का समावेश कर दिया।

मॉमसन महोदय का जन्म श्लेस्विग प्रान्तके अन्तर्गत गार्डिग स्थान में १८१७ ई० में हुआ था। इनकी आरम्भिक शिक्षा-दीक्षा कील नामक स्थान में हुई थी। तीस वर्ष की अवस्था के पूर्व ही वर्लिन एकैडमी ने उनकी अन्वेषण-सम्बन्धी योग्यता और उत्साह देखकर उन्हें अपने यहां नौकर रख लिया। वहां इन्हें इटली और फ्रांस की रोमन लिपि की व्याख्या करने के कार्य पर लगाया गया। साथ ही वे इतिहास और कानून भी पढ़ते रहे और १८४८ ई० में लिपजिग विश्वविद्यालय के कानून-विभाग में ले लिए गए। किन्तु राजनीतिक आन्दोलन में क्रियात्मक रूप में भाग लेने के कारण उन्हें बाध्य होकर १८४६ में ही नौकरी से पृथक् होना पड़ा। दो वर्ष तक यहां रहने के बाद ये ज्यूरिच और वहां से ब्रेसला में कानून के अध्यापक बनकर गए। ये जहां-

जहां गए, छात्रों ने इन्हें प्रेम और श्रद्धा की दृष्टि से देखा। विद्यार्थियों में इन्होंने एक नया उत्साह नया जीवन और नई भावना भर दी और संसार-भर के शिक्षा-विशेषज्ञों में इनका नाम हो गया। अन्ततः १८५८ ई० में ये बर्लिन विश्वविद्यालय में प्राचीन इतिहास के अध्यापक बन गए और वहां के विद्यार्थियों तथा साधारण इतिहास-पाठकों पर इनकी योग्यता का सिक्का जम गया।

यद्यपि इतिहास इनका विशेष विषय था और इनसे उन्हें और विषयों के अध्ययन का अवसर कम मिलता था, फिर भी उनका अध्ययन काफी विस्तृत था और उन्होंने देशाटन भी खूब किया था। उन्हें साहित्य-सम्बन्धी लगभग सभी विषयों का सुन्दर ज्ञान था। वे बड़े ही वाक्पटु और शिष्टभाषी थे। वे प्रायः कहा करते थे कि 'प्रत्येक विद्यार्थी को अपना एक विशिष्ट विषय चुनकर उसमें विशेषता प्राप्त करनी चाहिए, किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि उसे अन्य विषयों की ओर से आंखें मूंद लेनी चाहिए।' उनका लिखा हुआ 'रोम का इतिहास' एक प्रख्यात पुस्तक है। अपनी तीक्ष्ण और तार्किक बुद्धि के बल पर इन्होंने बिस्मार्क तक का सफलतापूर्वक विरोध किया था। बोअर-युद्ध के समय इन्होंने सिद्धान्त के रूप में अंग्रेजों का भी विरोध किया था।

अनुवाद और मौलिक दोनों मिलाकर मॉमसन ने सौ से अधिक ग्रन्थ लिखे थे। एडवर्ड ए० फ्रीमैन नामक प्रसिद्ध आलोचक ने लिखा है कि "मॉमसन हमारे समय के सर्वश्रेष्ठ विद्वान हैं।" विशेषतः कानून, भाषा, रीति-रिवाज, पुरातत्त्व, प्राचीन सिक्के और लिपियां आदि पर लिखी हुई इनकी पुस्तकें विद्यार्थियों के लिए बहुमूल्य हैं। ये बर्लिन एकेडमी से प्रकाशित होनेवाली 'कारपस इंस्क्रप्शनम् लैटिनारम्' नामक पत्रिका के सम्पादक और उपर्युक्त एकेडमी के मन्त्री भी थे। इनकी लेखन-शैली बड़ी सजीव थी। ये प्रायः नाटकीय ढंग की भाषा बड़ी सफलतापूर्वक लिखते थे और घटनाओं तथा पात्रों का रूपक बहुत अच्छा बांधते थे। इनका लिखा हुआ 'रोम का इतिहास' इसका सबसे अच्छा उदाहरण है—रोम के प्रारम्भिक काल से लेकर जूलियस सीजर की मृत्यु तक के इतिहास का उन्होंने जैसा सुन्दर चित्रण किया है, उसे पढ़कर ऐसा प्रतीत होता है कि हम कोई मनोरंजक नाटक पढ़ रहे हैं, जिसके सब पात्र एक-एक करके हमारे मानस-चक्षुओं के सामने अभिनय करने लगते हैं। इतिहास-जैसे अपेक्षाकृत शुष्क विषय को इन्होंने ऐसी सुन्दरता के साथ लिखा है कि केवल इसी एक पुस्तक (रोम का इतिहास) ने उन्हें विख्यात बना दिया। वास्तव में उनकी रचनाओं में यही सर्वश्रेष्ठ भी मानी जाती है। इन्होंने रोमन धर्म, रोमन रीति-रिवाज, रोमन साहित्य और रोमन कला पर अच्छा प्रकाश डाला है।

प्राचीन इतिहासज्ञ होते हुए भी उन्होंने आधुनिक संसार की गतिविधि का अच्छा अध्ययन किया था और उनका मत था कि प्राचीन संस्कृति का चक्र फिर लौटकर आएगा और आधुनिकता के साथ उसका मेल होकर रहेगा तथा इस प्रकार इतिहास

अपने-आपको दुहराएगा।

मॉमसन महोदय की साहित्यिक योग्यता तथा नये ऐतिहासिक अन्वेषण और लेखन-शैली की विशेषता ने मनुष्य-जाति का बड़ा हित किया है और उससे इतिहास के विद्यार्थियों तथा साधारण पाठकों को बड़ा लाभ हुआ है। वे नोबल-पुरस्कार के सर्वथा योग्य थे। पुरस्कार प्राप्त करने के एक वर्ष पश्चात् १ नवम्बर, सन् १९०३ ई० को मॉमसन महोदय का शरीरान्त हुआ था।

# ब्योर्न्सन

शान्ति-सम्बन्धी पुरस्कार प्राप्त करनेवाले ब्योर्न्सन महोदय पहले नार्वे-निवासी थे जिन्हें यह गौरव मिला। वास्तव में ब्योर्न्सन महोदय यह पुरस्कार प्राप्त करने के उपयुक्त पात्र थे, क्योंकि समस्त मानव-जाति के हित के लिए उन्होंने अत्यन्त उपयोगी साहित्य लिखा था। १६०३ ई० में जब उन्हें पुरस्कार प्राप्त हुआ, उसके पूर्व से ही इस विषय में उन्हें काफी ख्याति प्राप्त हो चुकी थी और वे 'नार्वे के पिता' के नाम से प्रसिद्ध थे। उपन्यासकार के रूप में वे अपने देश में सबसे अधिक विख्यात हुए थे। इसके अतिरिक्त वे सार्वजनिक कार्यकर्ता, सुवक्ता, सुप्रबन्धक और शासन-विधानात्मक कार्यकर्ता के रूप में एक सफल व्यक्ति थे।

पुरस्कार-समिति ने ब्योर्न्सन को पारितोषिक देते समय उनकी आरम्भ में लिखी हुई ग्राम्य जीवन-सम्बन्धी कहानियों पर, जिनमें नार्वे के वास्तविक जीवन का सुन्दर और काव्यात्मक चित्रण है, विशेष रूप से ध्यान दिया था। बाद में उन्होंने 'मानवीय शक्ति के बाहर' 'सम्पादक' तथा 'सिगुर्द स्लोम्बे' नामक नाटक लिखे थे, जिनमें उन्होंने बहुत-सी समस्याओं को हल किया, और जिनकी चर्चा अनेक सभ्य देशों में खूब हुई थी। ब्योर्न्सन महोदय में पौरुष और नम्रता का अद्भुत सामंजस्य था। उनमें कवित्व का गुण भी था—विशेषकर नार्वे के ग्राम्य-गीतों को वे अत्यन्त गम्भीर और उत्साहमय प्रेम से पढ़ते थे। उनकी शारीरिक शक्ति प्रशंसनीय थी और वे अवसर आने पर बल-प्रयोग करने से नहीं चूकते थे।

ब्योर्न्सन का जन्म १८३२ ई० में क्विकने नामक स्थान में हुआ था। उनके पिता गड़रिये थे। ब्योर्न्सन अभी छः वर्ष के ही हुए थे कि उनका परिवार क्विकने से राम्सडेल को चला गया। इस स्थान की प्राकृतिक शोभा—पर्वतावली, घाटी और हरियाली—का वर्णन उनकी कविताओं में मिलता है। मोल्ड की पाठशाला में उनके दिन बड़े आनन्द से कटे थे। वे प्राचीनकाल के सत्यनिष्ठ बुद्धिमान पुरुषों की जीवनियां और इतिहास बड़े उत्साह से पढ़ते थे। नार्वे के प्रख्यात कवि वर्गलैण्ड की रचनाएं उन्हें बहुत पसन्द थीं। १७ वर्ष की अवस्था में वे विश्वविद्यालय की परीक्षा की तैयारी के लिए क्रिश्चिआनिया गए। वहां वे इब्सन के सहाध्यायी बने। उन दिनों के संस्मरणों का उल्लेख उन्होंने अत्यन्त हास्यपूर्वक किया है। धीरे-धीरे ब्योर्न्सन और इब्सन के

परिवार में इतनी घनिष्ठता हो गई थी कि ब्योर्न्सन की लड़की बर्गलिवट का विवाह इब्सन के लड़के के साथ हो गया।

क्रिश्चिम्रानिया में ब्योर्न्सन डेनिश[1] साहित्य का अध्ययन करने लगे, और यहीं पर उन्होंने अपने नाटक 'नव दम्पति'[2] का लिखना आरम्भ कर दिया था, जो दस वर्ष बाद जाकर समाप्त हुआ। उसी स्थान पर उन्होंने 'युद्ध में'[3] नामक एकांकी नाटक लिखा जो क्रिश्चिम्रानिया में साधारण सफलता के साथ खेला गया। इसके बाद उन्होंने नार्वे की ग्राम्य कथाएं लिखनी आरम्भ कीं। उन्हें इस बात का बड़ा गर्व था कि उनके पूर्वज कृषक थे और गांवों के रीति-रिवाजों तथा ग्राम-वासियों की अभिलाषाओं से अत्यन्त गहरी सहानुभूति रखते थे। वे वर्तमान जगत् के बुद्धिमान और आदर्श व्यक्तियों का चरित्र-चित्रण करने की विशेष इच्छा रखते थे। सीधे-सादे जीवन की आरम्भिक कहानियों में से इनकी 'आर्ने', 'मछलीवाली', 'सुखी बालक' और 'मिनोव सालबेकन' का नार्वे, डेन्मार्क और जर्मनी में अच्छा स्वागत हुआ। शीघ्र ही इनके अंग्रेज़ी अनुवाद भी प्रकाशित हो गए और इस प्रकार अपने प्रसाद गुण और राष्ट्रीय भावना के कारण इनकी कविताओं का खूब आदर हुआ।

प्रसिद्ध आलोचक श्री जार्ज ब्राण्ड्स लिखते हैं कि ब्योर्न्सन का ग्राम्य चित्रण आरम्भ में बहुत-से लोगों की समझ में नहीं आया और उसे लोगों ने भावुकता-मात्र समझा; किन्तु 'आर्ने' नामक कहानी में जहां उसके नायक को आदर्श के लिए तड़पते दिखलाया गया है, उसे पढ़कर बहुतों को विश्वास हो गया कि जार्नसन की प्रतिभा सर्वतोमुखी और पर्यवेक्षण-शक्ति बहुत गहरी है। इसी प्रकार 'सिनोवा सालबेकन' नामक आख्यायिका भी अपने ढंग की निराली है। इन दोनों कहानियों को काफी ख्याति प्राप्त हुई है। 'आर्ने' में टार्गिट नामक स्त्री का चरित्र-चित्रण इतना सुन्दर हुआ है कि नार्वे की कोई भी स्त्री उसे पढ़कर मुग्ध हुए बिना नहीं रह सकती। 'सुखी बालक' में जार्नसन की सर्वोत्कृष्ट कविता का नमूना पाया जाता है। इनकी कविताओं और गानों का अंग्रेज़ी अनुवाद आर्थर हबेल पागर महोदय ने किया है, जो प्रकाशित हो चुका है। 'सिनोव सालवेकन' के पहले गान में नार्वे देश की स्तुति है, जिसे उस देश का राष्ट्रीय गान कह सकते हैं। यह हमारे देश के 'वन्देमातरम्' की तरह नार्वे में विख्यात है। पाठकों की जानकारी के लिए उनके उस राष्ट्रीय गान के अंग्रेज़ी अनुवाद का हिन्दी पद्यार्थ नीचे दिया जाता है :

करते हैं हम नित्य वन्दना अपने प्यारे देश की।
जहां गगन-चुम्बी पर्वत हैं,
और उदधि की सुन्दर हिलोरें;

---

१. डेन्मार्क-देशीय
२. The Newly Married Couple
३. Between the Battles

जहां वायु के द्रुत प्रवाह नित,
अगणित पर्णकुटी झकझोरें ॥
क्यों न प्रेम में गद्गद होकर, जय बोलें उस देश की ।
अपने प्यारे देश की ॥

जहां हमारी प्यारी माता,
सदा बलैयां लेती थी ।
लोरी दे दे हमें सुलाती,
और सदा सुख देती थी ।
क्यों न सदा विरुदावलि गाएं ऐसे मधुर स्वदेश की ।
अपने प्यारे देश की ॥

यह गान लिखने के तीस वर्ष पश्चात् अपने मित्र हर्मन ऐंकलर के विवाह-दिवस के उपलक्ष्य में ब्योर्न्सन ने देशभक्ति और आदर्शमूलक एक कविता लिखी थी, जिसका भावानुवाद इस प्रकार है :

है यह देश हमारा ।
जहां विपुल अभिलाषा रूपी डांड से,
खेकर हम निज जीवन-तरणी जाएंगे ।
जहां सफलता के अभाव में हाथ मल,
उच्छ्वासों के जलद बना, पछताएंगे ॥
जहां हरित दल-संकुल घाटी और वन,
देख-देख निज नेत्र तृप्त कर पाएंगे ।
ऐसा लुब्धक दृश्य, और भावी सुदिन—
है यह दृढ़ विश्वास एक हो जाएंगे ॥

उपसाला विश्वविद्यालय में जाने और कोपेनहेगन में अधिक काल तक रहने के बाद ब्योर्न्सन महोदय को नाटक लिखने और उसे अपने निरीक्षण में खिलवाने का बड़ा शौक लगा। १८५७ से १८५९ ई० तक बर्गन में उन्होंने यह काम बड़ी धूमधाम से किया।

सन् १८८१ ई० में ब्योर्न्सन महोदय ने इंग्लैण्ड और अमेरिका की यात्रा की। इस यात्रा के बाद जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण तीक्ष्णतर हो गया, किन्तु 'सत्य' के प्रति उनकी आस्था पूर्ववत् ही बनी रही। उनका यह विचार हो गया कि संसार के सभी व्यक्ति और राष्ट्र पृथक् होने के स्थान पर मेल के साथ रह सकते हैं। उन्होंने नार्वे के कपट और प्रपंच की जो कार्यवाहियां देखीं, उनका चित्रण अपने समस्यापूर्ण नाटकों—'राजा', 'सम्पादक' और 'दीवालिया'—में किया। उन्होंने अपने देशवासियों के कुकृत्यों से दुःखी होकर जब उनका चित्रण इस प्रकार किया, तो नार्वे के राजनीतिज्ञ उनसे बिगड़ बैठे ; यही नहीं, बल्कि ब्योर्न्सन महोदय को मारने-पीटने की धमकी भी

दी गई और एक नवयुवक ने उनकी खिड़की पर पत्थर भी फेंका।

ब्योर्न्सन के नाटकों में 'नव दम्पति' विद्यार्थियों को बहुत पसन्द आया। 'लंगड़ी हल्दा' भी उनकी आरम्भ की सुन्दर और मनोविज्ञानपूर्ण कृतियों में से है। पहली रचना में तो यह दिखलाया गया है कि किस प्रकार नवविवाहिता लड़की अपने प्यारे माता-पिता को छोड़कर एक नितान्त अपरिचित व्यक्ति से प्रेम करने को विवश होती है। इसमें इस बात की व्याख्या की गई है कि पैतृक प्रेम और दाम्पत्य प्रेम में क्या अन्तर होता है। दूसरे नाटक में चौबीस वर्ष की लंगड़ी नायिका के ज्वलन्त प्रेम का चित्रण किया गया है जिसका चाहनेवाला किसी अन्य स्त्री को प्रेम करता है। काव्य की दृष्टि से जार्नसन महोदय का 'यंग विकिंग' उच्चकोटि का नाटक है।

ब्योर्न्सन महोदय के सामाजिक नाटकों में 'मानवीय शक्ति के बाहर'[1] सबसे अधिक विख्यात है। यह अपने समय की सर्वोत्तम रचनाओं में से एक कही जाती है। इसके प्रथम भाग में तो धार्मिक विश्वास और कट्टरता की समस्या पर प्रकाश डाला गया है और दूसरे भाग में श्रमजीवी और पूंजीवादी दलों के विचारों की विभिन्नता दिखलाई गई है। इसका पहला भाग अमेरिका में बड़ी सफलतापूर्वक खेला जा चुका है।

ब्योर्न्सन ने बाद में जो नाटक लिखे, उनमें 'लेबोरेमस', 'डैगलानेट', और 'नव मदिरा' विशेष उल्लेखनीय हैं। सत्तर वर्ष की अवस्था हो जाने के बाद उन्होंने 'मेरी' नामक कहानी लिखी। इससे प्रतीत होता है कि वृद्धावस्था में भी उनके अन्दर कैसी सजीवता भरी हुई थी। १९०३ ई० में नोबल पुरस्कार प्राप्त करने के बाद उन्होंने हास्य-रसपूर्ण व्याख्यान दिए थे। उनकी स्त्री अभिनेत्री का काम करती थीं। स्त्री के साथ उन्हें अन्त तक बड़ा प्रेम और सहानुभूति थी। अन्त में २६ अप्रैल, १९१० ई० को उन्नीसवीं शताब्दी के इस प्रकाण्ड साहित्यिक का शरीरान्त हो गया।

---

१. Beyond Human Control

# फ्रेडरिक मिस्त्राल

१९०४ ई० के नोबल पुरस्कार का अर्द्धांश फ्रेडरिक मिस्त्राल महोदय को मिला था। पुरस्कार का शेषार्द्ध एचेगारे नामक स्पेनी नाटककार को मिला था, जिनके सम्बन्ध में आगे चलकर लिखा जाएगा। मिस्त्राल महोदय का जन्म मैला नामक नगर में १८३० में हुआ था। उनकी गणना फ्रांसीसी लेखकों में होती है, यद्यपि उनकी भाषा प्रॉविन्स थी, जो फ्रांसीसी भाषा की ही एक शाखा है। मिस्त्राल महाशय के पिता एक किसान थे, जो अपने पुत्र को वकील बनाने के अभिलाषी थे। बालक मिस्त्राल को 'अविग्नों' की पाठशाला में भेजा गया। बाद में नीम विश्वविद्यालय से उपाधि प्राप्त करके वे 'एक्स' में अध्ययन करने लगे। 'अविग्नों' के अध्यापकों में जोसेफ रूमैनाइल प्रॉविन्स भाषा के बड़े अनुरागी थे और उन्होंने बालक मिस्त्राल में भी उसके प्रति प्रगाढ़ प्रेम उत्पन्न कर दिया था। अध्यापक महोदय ने प्रॉवेंस भाषा के वर्णविन्यास को नया रूप दिया और उसमें जातीयता के भाव भरे। उन्होंने उसे स्कूल में प्रचलित किया। मिस्त्राल ने भी अध्यापक की तरह इस (प्रॉवेंस) प्राचीन भाषा के पक्ष में खूब प्रचार किया। इसके बीस वर्ष पूर्व अगेन-निवासी जैक्स जस्मिन नामक एक नाई ने गांव-गांव घूमकर प्रॉवेंस भाषा की ग्रामीण कविताएं गाकर सुनाई थीं। कहा जाता है कि उपर्युक्त नाई ने इस प्रकार गाने गा-गाकर लगभग १० लाख रुपये का प्रचुर धन एकत्रित किया था और उसने यह सारी रकम दान कर दी थी। उपर्युक्त अध्यापक महोदय ने नवयुवकों की एक समिति इस भाषा और इसकी कविताओं के प्रचारार्थ बनाई। इस समिति ने यह सिद्ध किया कि इस भाषा का उद्गम रोम से हुआ है और इस प्रकार यह इटली, फ्रांस और स्पेन की भाषाओं की जननी है। यद्यपि अनेक भाषा-तत्त्वविदों ने इस समिति के मन्तव्यों में मतभेद प्रकट किए हैं, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इसके अन्वेषण काफी तर्कयुक्त थे।

दूसरी कहानी यह प्रसिद्ध है कि मिस्त्राल बड़े मातृ-भक्त थे, इसलिए वे फ्रांसीसी भाषा में बहुत-से पद्य लिखकर इस आशा से उनके पास ले गए कि वे उन्हें प्रोत्साहन देंगी और उनकी प्रशंसा करेंगी। पर शोक की बात यह थी कि उनकी मां फ्रेंच (फ्रांसीसी) भाषा नहीं समझ सकती थीं। मिस्त्राल जिस उत्साह से अपनी मां के पास अपनी कविताओं का संग्रह लेकर गए थे, उसपर पानी फिर गया—मिस्त्राल को बड़ी निराशा हुई और उन्होंने निश्चय किया कि अब अपनी मातृ-भाषा में कविता लिखूंगा, और अपनी

माता को गाकर सुनाऊंगा। इसके अनुसार उन्होंने प्रॉवेंस की अनेक दन्तकथाओं, कहानियों और औपन्यासिक घटनाओं का संग्रह करके कविता का रूप दिया और १८५८ ई० में उसे 'मीरीओ' नाम से प्रकाशित कराया। इस पुस्तक के प्रकाशन में अध्यापक रूमेनाइल महोदय का काफी हाथ था। दूसरे वर्ष जब मिस्त्राल महोदय ने उसका फ्रांसीसी अनुवाद किया तो उसे पढ़कर पेरिस के नागरिक उसके माधुर्य पर मुग्ध हो गए। इस पुस्तक ने मिस्त्राल की कीर्ति खूब बढ़ाई और आलोचनाओं में उनकी तुलना वर्जिल, थिमोक्रीटस और अरिस्टो से की गई।

अपने काव्य-ग्रन्थ के बारह सर्गों तक तो कवि मिस्त्राल ने स्थानीय रीति-रस्मों का वर्णन किया है और व्यक्तिगत संस्मरण लिखे हैं; फिर खलिहान का वर्णन आया है, जो एक प्रकार से इनके अपने ही घर का चित्रण है। रैमूं को उन्होंने अपने पिता के चरित्र से लिया है। वे बचपन से ही खलिहान के कामों—गेहूं की दंवाई (अनाज को डंठल से अलग करने की क्रिया), सीप एकत्र करना, अंगीठी के पास बैठकर भोजन करने, अनाज की कटाई के समाप्त हो जाने के उपलक्ष्य में नृत्य करने आदि से पूर्णतः परिचित थे। कथानक में कृषक-मुखिया की लड़की 'मीरिओ' डलिया बुननेवाले के लड़के को प्रेम करती थी। दोनों दिन आनन्द में बिताते थे और रात गम्भीर मनोव्यथा में। अन्त में 'होली मेरीज़' के गिरजे में उस तरुण बालिका का शरीरान्त हो जाता है, और इस दुःखान्त के समय उसके ओठों से आशापूर्ण शब्द निकलते हैं।

सबसे अधिक मर्मस्पर्शी स्थल वह है, जहां नायिका, 'ला क्रा' की पथरीली जगह पार करके 'होली मेरीज़' की समाधि में शरण लेने के लिए पहुंचती है। दो सर्गों में इसी बात का विवरण है कि होली मेरीज़ का इतिहास क्या है। जिस समय फिलिस्तीन से महात्मा ईसा की बलि के पश्चात् उनके शिष्यगण वहां से निकाल दिए गए थे, तो, किम्वदन्ती के अनुसार, उन्हें बजरे में बैठाकर छोड़ दिया गया था। उनके पास न डांड थे न पाल। फलतः वायु के झोंकों से वह बजरा उस जगह समुद्र के पवित्र किनारे पर आ लगा था जहां 'सेण्ट्स मेरीज़' गांव आबाद है। उन शिष्यों में लाज़रस और उसकी बहनें भी थीं, जिनके नाम क्रमशः मेरी और मर्था थे। साथ ही उनका नौकर बद्दू साधु 'सारा' भी था। इनके अतिरिक्त मेरी मैगडालेन, जोसेफ ऑफ अरीमाथिआ और ट्रोफीन भी थीं। इनमें से अन्तिम शिष्या सबसे अधिक बुद्धिमती थी और उसने आर्ल्स नगर-निवासियों को खीष्ट धर्म की दीक्षा दी थी।

प्रेम और देश-भक्ति के गानों में मिस्त्राल महोदय की आरम्भिक रचनाएं जो १८७५ ई० में प्रकाशित हुई थीं, विशेष प्रख्यात हैं। इनमें 'ले आइल्स डी ओर' की अधिक प्रशंसा हुई थी। इन रचनाओं में प्रॉवेंस के मुहावरे खूब प्रयुक्त हुए हैं, जिनके उच्चारण में लैटिन की और माधुर्य में अटिका[1] और टस्कानी[2] की छाप है। बयासी वर्ष की अवस्था

1. दोर्ला विशेष।
2. फ्रांस के एक विशेष प्रान्त की बोली।

# एकेगारे

१९०४ ई० को नोवल पुरस्कार का अर्द्धांश स्पेन के प्रसिद्ध नाटककार जोज एकेगारे को प्रदान किया गया था। इसके पहले स्पेनी साहित्य अंग्रेजी भाषा के पाठकों के सम्मुख इतने परिमाण में नहीं आया था जितना एकेगारे को पुरस्कार मिलने के बाद आया। उस समय तक स्पेनी भाषा यूरोप की अन्य भाषाओं के साथ उच्च साहित्यिक भाषा में परिगणित नहीं होती थी। गैलडोज़, वैलेरा, वैलडीज और इवानेज़ के उपन्यासों ने अंग्रेजी पाठकों के मन पर यह छाप लगा दी कि उनकी रचनाओं में यथार्थवाद का पूरा जोर और काव्यात्मक सौन्दर्य है। नाटकों में गैलडोज़ की तीन, मर्टिनेज़ सीरा की नौ, एकेगारे की एक दर्जन और बेनाविन्ते की अनेक रचनाएं उल्लेखनीय हैं। इनकी रचनाओं के अंग्रेजी अनुवाद क्रमशः जॉन गैरेट अण्डरहिल, जेम्स ग्राहम, चार्ल्स निर्टलिगर, हैना लिंच, रूथ लैंसिंग आदि प्रसिद्ध अनुवादकों ने किए हैं।

जोजे एकेगारे को १९०४ ई० में फ्रेडरिक मिस्त्राल के साथ नोबल-पुरस्कार प्राप्त हुआ था। उनका जन्म १८३३ ई० में स्पेन में हुआ था। एकेगारे ने आरम्भिक शिक्षा में अंकगणित पढ़ने में विशेष रुचि दिखलाई थी। आगे चलकर भू-विज्ञान और दर्शन की ओर भी विशेष मनोयोग दिया। प्रजातन्त्र राज्य में उन्होंने कृषि, शिल्प और व्यापार मन्त्री का पद भी ग्रहण किया और शिक्षा-समिति के प्रधान और मंत्रिमण्डल के सदस्य भी बने। उन्होंने नेशनल टेकनिकल स्कूल में शिक्षक का काम भी किया और बाद में मैड्रिड विश्वविद्यालय से सम्बन्ध स्थापित कर लिया।

आरम्भ में इस गणित-विशेषज्ञ और राजनीतिज्ञ के लिए नाटक लिखना एक शौक की चीज ही समझी गई। 'वाइफ आफ दि एवेंजर', 'ऐट दि हिल्ट आफ दि स्वोर्ड' और 'ग्लैण्डियेटर आफ रैवेना' का प्रकाशन सन् १८४७ और १८७६ ई० के बीच में हुआ। यद्यपि ये नाटक उन दिनों स्पेन मे विख्यात हो चुके थे, किन्तु इनके अंग्रेजी अनुवाद प्रसिद्ध नहीं हो सके। १८७७ ई० में उन्होंने एक ऐसा नाटक लिखा जिसकी चर्चा बहुत अधिक हुई। इसका अनुवाद रूथ लैंसिंग ने 'मैडमैन आर सेण्ट' (पागल या साधु) के नाम से किया। इसी पुस्तक का दूसरा अनुवाद हैना लिंच ने 'फाली आर सेण्टलीनेस' (मूर्खता या साधुता) नाम से किया। आगे चलकर इस पुस्तक का एक और तीसरा अनुवाद भी मेरी सरेनो ने 'लाइब्रेरी आफ दि वर्ल्ड्स बेस्ट लिटरेचर'

वैलेरा तथा मेण्डेनेज़ पालायो के भाषण हुए। ये तीनों साहित्यिक किसी समय एकेगारे की रचनाओं के तीव्रतम आलोचक थे। इस अवसर पर पालायो ने कहा था कि तीस वर्ष तक एकेगारे ने विभिन्न क्षेत्रों में अत्यन्त सफलतापूर्वक कर्तव्य-सम्पादन किया है, जो असाधारण प्रतिभावान पुरुष के लिए ही सम्भव है। उनकी यह प्रतिभा साहित्यिक क्षेत्र में भी इसी प्रकार चमकी है। फ्रांस में भी उनका बड़ा आदर हुआ और उन्हें दूसरा विक्टर ह्यूगो कहा गया।

एकेगारे ने अनेक छोटे नाटक—प्रहसन—भी लिखे हैं जिनमें 'आलवेज़ रेडिकुलस' में एक लड़की की व्यंग्य, श्लेष और उत्सुकतापूर्ण बातें बड़े सौन्दर्य के साथ व्यक्त की गई हैं। षोड़शी कन्या सस्पीरो कोलेटो नामक पचास वर्ष के बूढ़े भिक्षुक से बात करती है—

कोलेटो—तुम्हें भीख मांगना नहीं आता।

सस्पीरो—मुझे तो भीख मांगना आता है, पर कठिनाई यह है कि लोगों को देना नहीं आता। मैं कहती हूं—'मेरी बीमार मां के लिए एक पैसा दो, बाबा।' और तुम तो जानते हो वह कैसी बीमार थी—दो साल पहले उसका देहान्त हो गया। इसपर मुझे कुछ नहीं मिलता। फिर कहती हूं—'खुदा के लिए एक पैसा दो। मेरी मां अस्पताल में है—मरियम के नाम पर दो। मेरे दो छोटे भाई हैं।' फिर भी कोई कुछ नहीं देता।

कोलेटो—नहीं देता? अच्छा आज रात को कितने भाई हैं, कहकर भीख मांगोगी?

सस्पीरो—ओह! महाशय कोलेटो! 'मेरे दो भाई हैं' कहने पर तो किसीने कुछ दिया नहीं। कल रात को मैंने 'चार भाई हैं' कहा था, तो छः पैसे मिले। आज रात को 'पांच भाई हैं' कहकर देखूंगी कि लोग क्या देते हैं। कुछ न मिला तो मां थप्पड़ मारेगी।

कोलेटो—और वास्तव में तुम्हारे हैं कितने भाई!

सस्पीरो—वास्तव में दो थे; पर मेरी असली मां की तरह वे भी मर गए। मेरी सौतेली मां उनके साथ भी वैसा ही व्यवहार करती थी जैसा मेरे साथ। दो-तीन डॉलर हो गए तो मैं जाटिवा भाग जाऊंगी और वहां अपनी चाची के साथ रहूंगी।

७२ वर्ष की अवस्था में एकेगारे को नोबल-पुरस्कार प्राप्त हुआ। इसके पूर्व भी उन्हें अपने देश में पर्याप्त ख्याति प्राप्त हो चुकी थी। उनकी गम्भीरता और अन्तर्दृष्टि को लोग टॉल्सटॉय के टक्कर की मानते हैं। टॉल्सटॉय की तरह एकेगारे ने भी आध्यात्मिक स्वतन्त्रता के लिए कष्ट-सहन का महत्त्व दिखलाया है। इस प्रसंग का वर्णन एकेगारे के 'पागल या साधु' में सुन्दर रूप में हुआ है। एकेगारे ने समाज को ऐसा सन्देश दिया है जिसमें आदर्शवाद की सर्वत्र झलक है।

१४ सितम्बर, १९१६ ई० को एकेगारे इस संसार से उठ गए।

# सीनकीविच

सन् १६०५ ई० का नोबल पुरस्कार हेनरिक सीनकीविच को मिला था। एकेगारे और वेनावेन्ते की तरह हेनरिक सीनकीविच और व्लाडिस्लॉ रेमॉण्ट भी एक ही देश के निवासी थे। पोलैंड जैसे छोटे देश को पुरस्कारदाताओं ने काफी महत्त्व दिया, क्योंकि यूरोप के बड़े राष्ट्रों में वह अज्ञात-सा है। यद्यपि इस देश की उपेक्षा कला की दृष्टि से बहुत दिनों से की जा रही थी, किन्तु इसने कला और साहित्य के भण्डार भरने में कसर नहीं रखी। कवि सीनकीविच और स्लोवाकी के सम्बन्ध में लीजूट ने बहुत-कुछ लिखा है। इसी प्रकार रॉय डिवेस्यू ने 'पोलैंड का पुनर्जन्म'[1] नामक पुस्तक में उस देश की शिक्षा और साहित्य-सम्बन्धी उन्नति की चर्चा करते हुए कहा है कि पोलैंड का नाम हेनरिक सीनकीविच ने पश्चिमी यूरोप में अपनी साहित्यिक योग्यता से विख्यात कर दिया।

सीनकीविच को नोबल पुरस्कार मिलने पर यूरोप के समालोचकों को बड़ा आश्चर्य हुआ और रूसी साहित्यिकों पर भी वज्रपात-सा हुआ था, पर पीछे जब सबने इनकी रचनाएं पढ़ी तो शान्त हो गए।

हेनरिक सीनकीविच का जन्म लिथुआनियां प्रदेश के वोला ऑकरेजेस्का नामक स्थान में १८४६ ई० में हुआ था। उनका जन्म एक कुलीन घराने में हुआ था और उन्होंने वारसा विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त की थी। १८६३ ई० में जब पोलैंड में राज्यक्रांति हुई तो उनका परिवार रूस चला गया। रूस जाकर उन्होंने सेण्ट पीटर्सबर्ग में एक पत्रिका का सम्पादन करना आरम्भ किया। उनकी इच्छा संसार देखने की थी, इसलिए उन्होंने जिप्सी या बोहेमियन ढंग की यात्रा आरम्भ की। कोई विशेष लक्ष्य न रखकर वे कमाते-खाते एक देश से दूसरे देश को जाने लगे। पहले दक्षिणी यूरोप का भ्रमण करके सन् १८७६ ई० में अमेरिका पहुंचे। वहां वे लॉस एन्जिलस में ठहरकर अपना यात्रा-विवरण लिखने लगे, जिसमें से 'संगीतज्ञ जांको'[2] और 'पुराना घंटेवाला'[3] नामक दो निबंधात्मक यात्रा-विवरण और कई स्फुट लेख विभिन्न

---

१. Poland Reborn

२. Janko, the Musician

३. The Old Bell Ringer

पत्रों में प्रकाशित हुए।

१८८० ई० में वे उपर्युक्त यात्रा से पोलैंड वापस आए। उस समय तक उनकी स्त्री का देहान्त हो चुका था। इसके पश्चात् वे पोलैंड की ऐतिहासिक कहानियों का अध्ययन करने में लग गए। उन्होंने यह नियम बना लिया कि जाड़े के दिनों में वे वारसा के पुस्तकालयों में अध्ययन किया करेंगे और गर्मियों में कारपाथियान की पर्वतमालाओं पर। इसका परिणाम बड़ा सुन्दर हुआ, क्योंकि इसके पश्चात् उन्होंने कई कल्पनापूर्ण और ऐतिहासिक तथ्य-युक्त लम्बी कहानियां लिखीं। 'आग और तलवार'[1] एक ऐसी कहानी है कि जिसमें पोलैंड की सन् १६४७ से १६६१ ई० तक की घटनाओं का विशद एवं अलंकारपूर्ण वर्णन है। इसी प्रकार उन्होंने 'दि डेल्यूज'[2] नामक दूसरी कहानी भी लिखी, जिसमें १६५२ से १६५७ ई० तक की ऐतिहासिक घटनाओं का समावेश है। 'पैन माइकेल'[3] नामक तीसरी कहानी भी उसी समय की रचनाओं में से है, जिसमें टर्की के आक्रमण का चित्रण किया गया है। इसका कथा-काल १६७० से १६७४ ई० तक है। इसमें सीनकीविच के साहित्यिक कौशल का भली भांति विकास हुआ है। विशेषतः पहली और तीसरी कहानी में तो वार्तालाप बहुत ही स्वाभाविक रखा गया है। लेखक ने पोलैंड-निवासियों को भली भांति समझा है और वहां के निवासी विपत्ति, भय, प्रेम, संघर्ष और अभिलाषा के समय अपने भाव किस प्रकार व्यक्त करते हैं, इसका ज्वलन्त चित्र खींच दिया है। रचनाओं में प्रतिष्ठा, देश-भक्ति और विश्वास का वर्णन बड़ी ओजस्वी भाषा में किया गया है। कज्जाकों, स्वीडन-निवासियों और तुर्कों के आक्रमण से पोलैंड की जैसी अवस्था हुई थी उसका क्रमिक वर्णन भी इन पुस्तकों में है। वास्तव में सीनकीविच ने पोलैंड-निवासियों में आदर्श के भाव भरे हैं और उन्हें आशा का संदेश सुनाया है।

आधुनिक पोलैंड पर उनकी दूसरी पुस्तकें 'सिद्धान्त हीन'[4] और 'संतान'[5] हैं जिनमें से पहली दुःखान्त है। इसमें एक अमीर का वर्णन है, जो अपनी चचेरी बहन अनीला पर आसक्त हो जाता है। उससे पोलैंड के आधुनिक समाज पर काफी प्रभाव पड़ता है। बहुत वर्षों तक सीनकीविच ने ईसाई मत का आरम्भिक इतिहास और उसकी विरोधी शक्तियों का हाल पढ़ा था। सन् १८९६ ई० में उन्होंने अपनी सर्वश्रेष्ठ कृति 'को वाडिस ?'[6] नाम से लिखी। यह पुस्तक युग-प्रवर्तक रचनाओं में से है, और सीनकीविच को नोबल पुरस्कार मिलने के पहले ही इसका प्रचार अच्छी तरह हो चुका था। इसके अतिरिक्त उनकी दो पुस्तकें 'हम उनका अनुकरण करें'[7] और 'हानिया' भी प्रकाशित हुईं। 'को वाडिस' में यह दिखलाया गया है, कि किस प्रकार ईश्वरीय शक्ति ने मूर्ति-

---

१. With Fire and Sword
२. The Deluge
३. Pan Michael
४. Without Dogmas
५. Children of the Soil
६. Quo Vadis ?
७. Let Us Follow Them

पूजकों पर विजय प्राप्त की। यह उपन्यास ऐसा है जिसे धार्मिक और ऐतिहासिक कह सकते हैं। इसके पात्र अत्यन्त सजीव हैं जिनमें से पॉल पेट्रोनियस, उरसस, चिलो और कैदी लड़की लिगिया बहुत आकर्षक हैं। इसमें लेखक ने नीरो का चरित्र-चित्रण किया है। सीनकीविच ने 'किधर को ?'[१] नामक शीर्षक देकर वर्तमान जगत् से, जो अशांति के पंजे में जकड़ा हुआ है, पूछा है कि तुम कहां जा रहे हो ? जिस अंश में रोम-सम्राट् नीरो का चरित्र-चित्रण किय गया है वह कोई विशेप सफल नहीं कहा जा सकता, क्योंकि नीरो के सम्बन्ध में लेखक ने कोई भी नवीन और आधुनिकतापूर्ण दृष्टि-विन्दु नहीं रखा है, किन्तु जिस भाग में लेखक ने आजकल के संतप्त जगत् के मनुष्यों से उपर्युक्त प्रश्न किया है, वह पाठक के मन पर गहरी छाप छोड़ जाता है। इसमें सहानुभूति और अध्यात्मवाद भरा हुआ है। इनकी 'क्रॉस के शूर'[२] में भी उपर्युक्त गुण हैं। इसमें उन्होंने ट्यूटनों के विरुद्ध पोलैंड और लियुआनियां-निवासियों को लड़ाया है। 'रोटी के पीछे'[३] नामक एक दूसरी पुस्तक में उन्होंने अमेरिका-प्रवासी पोलैंड-वासियों का जीवन चित्रित किया है। इस पुस्तक का दूसरा नाम 'रोटी के लिए' और 'देशान्तर-वासी किसान' भी है। 'यश के मैदान में'[४] भी उनकी एक रचना है। उनकी सब रचनाओं का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित हो चुका है। कर्टिन, बीनियन और सीजन्स ने भी इनके ऐतिहासिक और धार्मिक उपन्यासों की प्रशंसा की है। 'चमकीले तट पर'[५], 'जंगल और रेगिस्तान'[६], 'तीसरी स्त्री'[७] और 'व्यर्थ'[८] ये सब सीनकीविच की सुन्दर रचनाएं हैं।

सीनकीविच का देहान्त १६१६ ई० में हुआ और मरते समय तक वे अपनी शक्तिशाली लेखनी चलाते रहे। उनका आदर्श था कि उपन्यास में जीवन, सचेतनता-परिवर्द्धन-शक्ति और उत्तमतापूर्ण नवीनता होनी चाहिए और जहां तक हो उनमें बुराई का वर्णन कम होना चाहिए।

---

१. Whither Goest Thou ?
२. Knight of the Cross
३. After Bread
४. On the Field of Glory
५. On the Bright Shore
६. Desert and Wilderness
७. The Third Woman
८. In Vain

# जिओसुए कार्डूची

१९०६ ई० में नोबल पुरस्कार इटली के तत्कालीन सर्वश्रेष्ठ कवि और साहित्याध्यापक का प्रदान किया गया था। इस समय उनकी अवस्था सत्तर वर्ष की हो चुकी थी और वे बोलोना विश्वविद्यालय में अध्यापन-कार्य कर रहे थे। मिस्त्राल की तरह ये भी देशभक्त कवि थे। कार्डूची महाशय में भावुकतापूर्ण कवित्व की अपेक्षा स्वतंत्रता की प्रवृत्ति अधिक थी।

कार्डूची का जन्म २७ जुलाई, १८३५ ई० को वाल-डी-कैसेलो में हुआ था। उनके पिता गांव में दवा-दारू का काम करते थे और कार्डूची के जन्म के पहले राजनीतिक आन्दोलन में भाग लेने के कारण जेल जा चुके थे। शिशु कार्डूची की अवस्था अभी तीन ही वर्ष की थी कि इनका परिवार टस्कन-मरेमा प्रदेश के वालगेरी नामक स्थान को चला गया। ग्यारह वर्ष की अवस्था तक बालक कार्डूची यहीं पहाड़ियों पर और घाटियों में घूमा करते थे। अपनी एक कविता में इन्होंने अपने बचपन के संस्मरण लिखे हैं। उनकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई थी; इनके पिता उन्हें लैटिन पढ़ाते थे और इनकी माता इन्हें अलफीरी की कविताएं सुनाया करती थीं। सन् १८४८ ई० के अशान्त वातावरण में उनका परिवार वालगेरी से फ्लोरेंस पहुंचा और कार्डूची को स्कूल भेजा गया। अट्ठारह वर्ष की अवस्था में उन्होंने 'सैकिवस और अल्केइक्स' नामक पुस्तक लिखी जिसमें उन्होंने प्राचीन इटली की महिलाओं के आदर्श का चित्रण किया। गिर्जाघरों से सुधार में क्या-क्या बाधाएं पड़ती हैं, इसपर भी उन्होंने हल्का प्रकाश डाला था। उन दिनों वे शिलर, बायरन और स्कॉट की कविताएं विशेष रूप से पढ़ते थे।

सन १८५६ ई० में वे सैन-मनियाटो की व्यायामशाला में अध्यापक नियुक्त हो गए; किन्तु राजनीतिक और साहित्यिक विरोध में पड़ जाने के कारण इन्हें अरेजो में अध्यापक का जो स्थान मिला था, सरकार ने उसके लिए स्वीकृति नहीं दी, इसलिए विवशतः इन्हें फ्लोरेंस को लौटना पड़ा। उस अवस्था तक वे बड़े ही अकिंचन थे और अत्यन्त दरिद्रतापूर्ण जीवन व्यतीत कर रहे थे। पढ़ने के लिए पुस्तकें न खरीद सकने के कारण दूर-दूर के पुस्तकालयों में पढ़ने जाया करते थे और ग्रीक तथा लैटिन साहित्य का अध्ययन करने में लगे हुए थे। उन्हीं दिनों उन्हें बरबेरा नामक एक इटैलियन प्रकाशक के यहां नौकरी भी मिल गई, जिसकी पुस्तकों की भूमिका आदि लिखने का

साहित्यिक कार्य ये करते रहे। दुर्भाग्यवश इनके परिवार पर दो विपत्तियां पड़ीं—एक तो इनके भाई दांते ने आत्महत्या कर ली और दूसरे इनके पिता का शरीरांत हो गया। अपने भाई के विछोह से विकल होकर इन्होंने 'अल्मा मेमोरिया-डी० डो० सी०' नामक सुन्दर पद्य लिखे। पीछे जब उन्होंने अपने सम्बन्धी और मित्र मेनीक की गुणवती कन्या से विवाह कर लिया, तो उनका जीवन काफी सुखपूर्ण हो गया। उनका गार्हस्थ्य जीवन सुख से व्यतीत होने लगा। उसी स्त्री से इनके चार बच्चे पैदा हुए, जिनमें से एक लड़की का नाम इन्होंने 'लिबर्टी' (स्वतंत्रता) रखा। इसके बाद उन-पर पुनः विपत्तियां पड़ीं—जिस वर्ष कार्डूची की माता का देहान्त हुआ, उसी वर्ष उनका तीन वर्ष का छोटा लड़का दांते भी चल बसा। मां तो पर्याप्त रूप से वृद्धा हो चुकी थीं, इसलिए उनके लिए उतना दुःख नहीं हुआ; पर छोटे बच्चे की मृत्यु ने उन्हें विक्षिप्त-सा कर दिया। बच्चे की स्मृति में जो करुणापूर्ण पंक्तियां उन्होंने लिखी हैं, वे अत्यन्त मर्मस्पर्शिनी हैं।

कार्डूची महोदय की १८७० ई० तक की संगृहीत कविताओं से प्रतीत होता है कि वे समय-समय पर राजनीतिक प्रभाव में आकर किस प्रकार उत्तेजित हो उठते थे। उनमें से अधिकांश कविताएं 'इल पोलोजिआनो' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई थीं। १८६० ई० में वे ग्रीक और लैटिन के अध्यापक होकर पिस्टोइआ गए, और वहीं इटली के महावीर देशभक्त गैरीबाल्डी की सिसली-यात्रा पर कविता लिखी। इसके बाद दस वर्ष तक वे राजनीतिक परिवर्तनों से प्रभावान्वित होते रहे। उनकी 'शैतान से प्रार्थना'[1] नामक कविता १८६९ ई० में एनोट्रियो रोमानिओ के हस्ताक्षर से प्रकाशित हुई थी, जिसके कारण वे अत्यन्त शीघ्रता से विख्यात हो गए। उनकी यह कविता पूर्णतः राज-नीतिक थी। उन्होंने नरम साम्राज्यवादी और धर्मवादियों की ऐसी खबर ली कि उन्हें इन दलवालों ने 'अयोग्य प्रजावादी' का नाम दे डाला। इनकी कविता में क्रान्ति भरी हुई थी और उसमें सावोनारोला, लूथर, हस तथा वीक्लिफ आदि सभी विख्यात देशभक्तों की चर्चा थी। इनके पद्य चार-चार पंक्तियों में सुन्दर और गाए जाने योग्य थे, इसलिए इनका प्रचार बहुत जल्दी हुआ।

'शैतान से प्रार्थना' के प्रकाशन के सात वर्ष पूर्व वे बोलोना विश्वविद्यालय के अध्यापक नियुक्त हो चुके थे। यहीं वे शरीरान्त होने तक रहे, और इस प्रकार छियालीस वर्ष तक अध्यापन-कार्य करते रहे। इस बीच उन्हें मैमिआनी से शिक्षा-सचिव के पद का प्रस्ताव मिला, किन्तु कवि कार्डूची ने टस्केनी न छोड़ने का निश्चय कर लिया था। विद्यार्थियों पर इनका अद्भुत प्रभाव था। 'शैतान से प्रार्थना' प्रकाशित होने के पश्चात् उन्हें सरकार का कोप-भाजन बनना पड़ा। सरकार विद्यार्थियों पर उनका अत्यधिक प्रभाव देखकर डर गई और उसने उन्हें वहां से बदलकर नेपिल्स में लैटिन पढ़ाने के कार्य पर लगाना चाहा। कार्डूची ने यह कहकर नेपिल्स जाने से इन्कार कर दिया कि

१. Hymn to Satan

वह अपने-आपको लैटिन पढ़ाने योग्य नहीं समझते। लगातार सरकार का विरोध करते रहने के कारण उन्हें बोलोना में अध्यापन-कार्य करने से रोक दिया गया। इसके बाद इटली के मंत्रिमण्डल में काफी परिवर्तन हो गया और कवि कार्डूची ने भी विश्व-विद्यालय में राजनीतिक आन्दोलन की शिक्षा देनी बन्द कर दी।

इसके बाद उन्होंने व्याख्यान देने का काम खूब जोरों पर आरम्भ किया, और इस रूप में लोग इनकी ओर अधिक आकर्षित होने लगे। कुछ ही दिनों में ये इटली के चुने हुए चार व्याख्यानदाताओं में से हो गए। उन्हीं दिनों में रोम में दांते के नाम पर एक 'चेयर'[1] स्थापित हुई। ये वहां प्रतिवर्ष व्याख्यान देने लगे। दांते के सम्बन्ध में इन्होंने काफी अध्ययन किया और उसपर अधिकारपूर्वक विचार किया। कार्डूची महाशय में विशेषता यह थी कि वे साहित्य के द्वारा क्रान्ति उत्पन्न करना चाहते थे। उनकी 'ओडी बारबेर' (१८७३-७७ ई०) नामक रचना से इस बात की पुष्टि होती है। अपने दो आलोचक मित्रों—चिन्जारिनी और ताजिआनी—से ये कहा करते थे कि संसार के सर्वश्रेष्ठ कवि होमर, पिंडर, थियोक्रिटस, सोफोक्लीज़ और अरिस्टोफेंस हो गए हैं।

कार्डूची महोदय ज्यों-ज्यों बुड्ढे होने लगे, सम्राट के प्रति उनका विरोध-भाव धीरे-धीरे कम होने लगा। इसका कारण कुछ लोग तो स्वाभाविक वृद्धावस्था-जन्य उत्साह-हीनता बतलाते हैं, और कुछ लोग यह कहते हैं कि जिन दिनों कवि कार्डूची बोलोना में थे, उन्हीं दिनों सम्राट और सम्राज्ञी का वहां आगमन हुआ। सम्राज्ञी को कविता से बड़ा प्रेम था और वे एक सफल आलोचक थीं। उन्होंने कवि कार्डूची को बुलवा भेजा। कार्डूची महोदय लोगों से मिलते-जुलते कम थे और केवल विश्व-विद्यालय के सहकारियों तथा पुस्तकों में ही उनका अधिक समय कटता था। अस्तु, किसी प्रकार अनिच्छापूर्वक वे सम्राट के पास गए। सम्राज्ञी ने उनकी कविताओं की काफी प्रशंसा की और एक वास्तविक समालोचक की भांति इनकी उत्तम रचनाओं की कद्र की। इससे कार्डूची सम्राज्ञी की साहित्यिक अभिरुचि पर मुग्ध हो गए और इस घटना के बाद सदा सम्राज्ञी को पत्रादि लिखते रहे। फिर उन्होंने सम्राट का कभी विरोध नहीं किया।

सन् १८९९ ई० में कवि कार्डूची को पक्षाघात की बीमारी हो गई और उनकी आर्थिक अवस्था भी खराब हो गई। फिर भी वे ज्यों-त्यों करके अपने शिष्य सेवेरिनो फेरारी की सहायता से विश्वविद्यालय का काम करते रहे। जब उनकी आर्थिक अवस्था ऐसी हो गई कि उन्हें अपना बहुमूल्य पुस्तकालय बेचने की नौबत आ गई और सम्राज्ञी को इसका पता लगा तो उन्होंने उनका पुस्तकालय अच्छे दामों में खरीद लिया और कवि को इस बात की स्वतंत्रता दे दी कि वह अपने जीवन-भर उस पुस्तकालय का

---

१. किसी विश्वविद्यालय या शिक्षा-संस्था में किसी प्रख्यात व्यक्ति के नाम पर एक 'चेयर' रखी जाती है, और चुने हुए विद्वान विशेषज्ञों के व्याख्यान होते हैं।

उपयोग स्वतंत्रतापूर्वक कर सकते हैं। १९०५ ई० में सरकार ने कार्डूची महोदय को पेन्शन दे दी। दूसरे ही वर्ष कवि के सहायक कार्यकर्ता फेरारी का देहान्त हो गया, जिससे इन्हें अत्यन्त दुःख हुआ। उसके दूसरे ही वर्ष जब इन्हें नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया, तो वे उसे लेने के लिए अपना स्थान छोड़कर जाने में असमर्थ थे। स्वीडन सम्राट ने अपने खास आदमी को बोलोना भेजकर वृद्ध कवि को पुरस्कार-सम्बन्धी प्रमाणपत्र दिलवाया। यह प्रतिष्ठा प्राप्त करने के बाद कार्डूची महोदय केवल दो मास और जीवित रहे और १६ फरवरी, १९०७ ई० को इनका शरीरान्त हो गया। इनकी मृत्यु के बाद सम्राज्ञी ने इनका घर खरीदकर उसे सार्वजनिक स्मारक के रूप में बनवा दिया।

कार्डूची की कविताओं में एक अद्भुत सजीवता और लावण्य का सम्मिश्रण है। उनकी कोई कविता अपूर्ण नहीं रही। इनकी कतिपय रचनाओं में तो शोक, करुणा, आशा और वाञ्छना का अद्भुत प्रवाह है—विशेषकर प्रकृति और जीवन-सम्बन्धी कविताओं में यह भाव विशेष रूप से भरे हैं।

कवि कार्डूची कहा करते थे कि उनके जीवन के तीन खास सिद्धान्त हैं—राजनीति में सबसे पहले इटली की समस्या, कला में सबसे पहले प्राचीन काव्य और जीवन में सबसे पहले अकपट सहृदयता और शक्ति। राजनीतिक उग्रता के साथ-साथ अधिक अवस्था में उन्होंने धार्मिकता और ईसाइयत के विरुद्ध भी विशेष कुछ नहीं लिखा। वास्तव में धार्मिकता के विरुद्ध तो वे कभी नहीं थे। हां, धार्मिक कट्टरता और अन्धभक्ति का उन्होंने अवश्य विरोध किया था। वे काल्पनिक गाथाओं को गढ़ने की अपेक्षा ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर कुछ लिखना अधिक पसन्द करते थे। वृद्धावस्था में उन्होंने प्राचीन इटली और उसके साहित्य की काफी प्रशंसा की है। उन्होंने कथाओं में अद्भुतता का सामंजस्य करने के स्थान पर सत्य और वस्तविकता का आधार लेना अधिक उपयुक्त समझा है। श्री विकरस्टेय नामक आलोचकों ने लिखा है—"कार्डूची ने कला के दृष्टिकोण से सदा मनुष्य-प्रकृति और स्वाधीनता को ही अपनी कविता का विषय बनाया है और इनकी समस्त कविताएं इन्हीं तीन विषयों पर आधारित हैं।" स्त्रियों के सम्बन्ध में कार्डूची की कवितओं को आदर्शवाद की श्रेणी में नहीं रख सकते, क्योंकि वाल्ट व्हिटमैन की तरह उन्होंने स्त्रियों के वाह्य सौन्दर्य—नख-शिख—का वर्णन खूब किया है। श्री विकरस्टेय का कथन है कि अपने देश—इटली—के सम्बन्ध में कवि कार्डूची ने जो कुछ लिखा है, यह वास्तव में आदर्शवाद की श्रेणी में परिगणनीय है।

# रुडयार्ड किप्लिंग

सन् १९०७ ई० में रुडयार्ड किप्लिंग नामक पहले अंग्रेज कवि और कहानी-लेखक को नोबल पुरस्कार मिला। इसके पहले फ्रांस, जर्मनी, नार्वे, स्पेन, इटली और पोलैण्ड को यह प्रतिष्ठा प्राप्त हो चुकी थी। इंग्लैण्ड का नम्बर सातवें वर्ष आया। जिस वर्ष किप्लिंग महोदय को यह पुरस्कार मिला, इंग्लैण्ड के कितने ही अन्य लेखकों के नाम और कृतियां 'नोबल फाउण्डेशन' और 'स्वीडिश एकैडमी' के पास भेजे गए थे। इन लेखकों के नाम क्रमशः स्विनबर्न, जॉर्ज मेरेडिथ, जॉन मार्ले, टॉमस हार्डी, बैरी और रॉबर्ट ब्रिज थे। किप्लिंग महोदय का नाम तो सबसे पीछे और एक पत्र के यह प्रश्न करने पर कि 'किप्लिंग का नाम क्यों न भेजा जाए?' भेजा गया था, और संयोगवश किप्लिंग को ही वह आदर भी प्राप्त हुआ। उन्हें पुरस्कार मिलने के बाद कुछ विरोधियों ने फिर आवाज़ उठाई कि 'आदर्शवाद क्या है, और किप्लिंग की रचनाओं में उसका कहां तक समावेश है?'

रुडयार्ड किप्लिंग का आधुनिक अंग्रेजी-साहित्य में विशेष स्थान है। यद्यपि उनके छोटे-बड़े सभी उपन्यास ब्रिटिश साम्राज्य खासकर भारत के शासकों का चरित्र-चित्रण करने में ही अपना अधिकांश भाग समाप्त कर देते हैं। सम्भवतः यही कारण है कि ब्रिटेन में बहुत-से समालोचक उनके पीछे हाथ धोकर पड़ गए और उनकी हर रचना में दोष-दर्शन ही उनका लक्ष्य प्रतीत होता रहा। विरुद्ध समालोचनाओं के होते हुए किप्लिंग की रचनाएं खूब पढ़ी गई हैं और वे अपने काल में सर्वाधिक सर्वप्रिय, और लोक-विख्यात लेखकों में गिने जाते रहे हैं। सही या गलत, जितने उद्धरण किप्लिंग की रचनाओं के दिए गए हैं उतने और किसी अंग्रेजी लेखक की रचना के नहीं।

✓ किप्लिंग ने लेखन-कार्य भारत में ही आरम्भ किया था और यहां चार-पांच वर्ष व्यतीत करने के पश्चात् १८८९ ई० में वे लन्दन पहुंचे। वहां उन्होंने भारत में अंग्रेज़ी साम्राज्य के मध्याह्नकाल का वर्णन बड़ी ही सजीव भाषा और शैली में अपने उपन्यासों और कहानियों में किया। यही कारण था कि बहुत-से साम्राज्यवादी अंग्रेज़ों ने इनकी रचनाओं की कड़ी आलोचना की। यही नहीं, बहुत-से आलोचकों ने तो इनके उपन्यासों में अभिव्यक्त राजनीतिक विचारधारा के प्रति घृणा-व्यंजक विचार प्रकट किए। फिर भी किप्लिंग ने किसीकी भी परवाह किए बिना अपना लेखन-कार्य ज्यों का त्यों जारी रखा और उसी विचारधारा और शैली पर अनेक सफल उपन्यास प्रकाशित कराए।

किप्लिंग पद्य भी लिखते थे। उनकी पद्यात्मक रचनाओं में से एक तो उन दिनों इतनी प्रसिद्ध हुई कि वह हर हिन्दुस्तानी की ज़बान पर चढ़ गई। उसका हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है :

प्राच्य सदा है प्राच्य
और पश्चिम है पश्चिम
इनका मेल नहीं चाहे,
कल्पान्त भले ही होवे—
चाहे भू-आकाश मिलें,
स्वयं ईश्वर हो सम्मुख,—
किन्तु सत्य है यही कि
पूर्व-पश्चिम का अन्तर
है कोरा काल्पनिक,
जाति, सीमा, वर्णादिक,
जब दो प्रबल मनुष्य सम्मुख खड़े होते नहीं तनिक,
व्यवधान भले हों दूर-दूर के।[1]

केवल इस कविता पर किप्लिंग को इतनी ख्याति मिल गई जितनी उनके समकालीन बर्नार्ड शॉ, एच० जी० वेल्स, जॉन गाल्सवर्दी और ईट्स आदि वर्षों के बाद भी न पा सके। चौबीस वर्ष की अवस्था में ही किप्लिंग को वह यश मिल गया जो अधेड़ होकर भी बड़े-बड़े लेखक नहीं प्राप्त कर सके। यही नहीं, इक्कीस वर्ष की अवस्था में किप्लिंग ने भारत में जो रचनाएं की थीं उनकी सुन्दर कथा-माला बन गई और 'बैरकरूम बैलाड' के नाम से प्रकाशित हुईं। उनकी ८० लघुकथाएं तो भारतीय पत्र-पत्रिकाओं से लेकर पुनर्मुद्रित की गईं। कुछ दिनों तक तो किप्लिंग की ऐसी धूम मची कि हर महीने उनकी कोई न कोई नई पुस्तक प्रकाशित हो जाती थी। किप्लिंग के पद्य भी प्रकाशित होते रहे। तीस वर्ष तक निरन्तर यह क्रम जारी रहा जिससे पुस्तक-संसार में किप्लिंग की रचनाओं की बाढ़-सी आ गई। वास्तव में इसके पूर्व किसी भी साहित्यिक की रचनाओं ने अंग्रेज़ी के पाठकों में ऐसी सनसनी नहीं फैलाई जैसी किप्लिंग की पुस्तकों ने।

किप्लिंग को 'दि लाइट दैट फेल्ड' से बड़ी ख्याति मिली। यद्यपि आलोचकों ने इसकी अश्लीलता पर प्रबल आक्रमण किया और इनकी तुलना फ्रेंच उपन्यासकार गाई-द-मोपासाँ से कर डाली, पर इससे एक बड़ा लाभ किप्लिंग को यह मिला कि आस्कर वाइल्ड जैसे लेखक उनके मित्र और संरक्षक बन गए।

प्रौढ़ लेखक बन चुकने तक किप्लिंग अपनी रचनाओं की त्रुटियों से न तो अव-

---

१. 'ओह ईस्ट इज़ ईस्ट, ऐंड वेस्ट इज़ वेस्ट, ऐंड नेवर दि ट्वीन शैल मीट, टिल अर्थ ऐंड स्काई मीट प्रेज़ेंटली ऐट गाड्स ग्रेट जजमेंट सीट; बट देयर इज़ नीदर ईस्ट नार वेस्ट, बॉर्डर, नार ब्रीड, नार बर्थ, व्हेन टू स्ट्रांग मेन स्टैण्ड फेस-टू-फेस, दो दे कम फ्राम दि एंड आफ दि अर्थ !

गत थे और न उन्हें स्वीकार किया। उस समय तक तो उनकी रचनाओं की सर्वप्रियता ही सबसे बड़ी कसौटी बनी रही। उनको धन की आवश्यकता थी और इसके लिए प्रकाशन का सिलसिला जारी रखना आवश्यक था। उन्हें रुककर यह विचार करने का अवकाश ही नहीं मिला कि उनकी रचनाओं में किन तत्त्वों की कमी है और कहां घटना और वर्णन में अतिरंजना है एवं कुरुचि-सुरुचि का कितना समावेश समीचीन कहा जा सकता है। कुछ समय बाद जब किप्लिंग में कुछ अधिक विवेक का विकास हुआ तो एक नई समस्या उनके सामने उपस्थित हो गई और वह यह थी कि अमेरिका में 'कापीराइट' का कानून विदेशी लेखकों के लिए कुछ न होने के कारण वहां के प्रकाशक इनकी रचनाएं बिना आज्ञा धड़ाधड़ प्रकाशित करने लगे। उन्होंने अमेरिकन प्रकाशकों और वहां के कापीराइट कानून के विरुद्ध लिखने में बहुत-कुछ शक्ति लगाई।

किप्लिंग का विवाह एक अमेरिकन पत्रकार—ओलकाट वालेस्टियर की बहन कैरोलाइन से हुआ। विवाह के बाद वे सपत्नीक जापान-भ्रमण के लिए गए। वे अभी सैर ही कर रहे थे कि उनकी दो वर्ष की बचत एक बैंक का कारबार बन्द हो जाने के कारण डूब गई। वे घबड़ाकर सपत्नीक अपने न्यूइंग्लैंड स्थित घर को लौट आए। यहां किप्लिंग चार वर्ष सपत्नीक सुखपूर्वक रहे और उनके दो बच्चे यहीं पैदा हुए। ब्रैटिल बोरो और वरमाण्ट में उन्होंने अपनी वे पुस्तकें लिखीं जिनके कारण वे और भी विख्यात हुए। दिन का काम (दि डेज वर्क) 'सात-समुद्र' (दि सेवन सीज) गद्य-पद्यमय रचनाएं उन्होंने यहीं पूरी कीं और 'वन-पुस्तक' (जंगल बुक) भी। उनकी इन रचनाओं की बिक्री यूरोप और अमेरिका में बहुत हुई और ये संसार की अनेक भाषाओं में प्रकाशित हुईं। यद्यपि यह अन्तिम पुस्तक बच्चों के लिए लिखी गई थी, पर इसका प्रभाव गत दो पीढ़ियों से सभी पाठकों पर पड़ा है और इसके आधार पर फिल्म का निर्माण भी हो चुका है। इसके एक पद्य का अनुवाद यहां देने का लोभ-संवरण हम नहीं कर सकते :

सभी महापुरुषों का जीवन हमको यही सिखाता है—
हम अपना यह नियम न बदलें—काम करें नित डटकर।
जो कुछ करो, लगन से कर लो—
तन से कर लो, मन से कर लो
टाल-मटोल बिना कर डालो।

किप्लिंग की जो रचनाएं भारतीय पृष्ठभूमि को लेकर लिखी गई हैं इनमें सैकड़ों हिन्दी-शब्दों का प्रयोग अंग्रेजी के साथ इस प्रकार कर डाला है कि वे इटैलिक टाइप में होते हुए भी अंग्रेजी के अंग बन गए हैं—उदाहरण के लिए पंडित, इक्का, बन्दर, सईस, आया आदि। इसके कारण अंग्रेज और दूसरे विदेशी पाठक बहुत-से ऐसे हिन्दी शब्दों से परिचित हो गए हैं।

१८९६ ई० में पर्याप्त धन और ख्याति अर्जित करने के पश्चात् किप्लिंग अमेरिका से इंग्लैंड लौट गए। लौटने का कारण बेंगुला-प्रकरण था जिसके सिलसिले में

इंग्लैंड और अमेरिका में घोर मतभेद हो गया और मोनरो-सिद्धान्त की सृष्टि हुई जिससे सारे अमेरिका में अंग्रेजों के विरुद्ध एक विद्वेष भावना भड़क उठी और ऐसा प्रतीत होने लगा कि दोनों देशों के बीच युद्ध छिड़ जाएगा इससे किप्लिग ने स्वदेश लौट जाने में ही अपना कल्याण समझा।

किन्तु तीन वर्ष बाद १८९९ ई० में जब अमेरिका में ब्रिटेन-विरोधी भावना कुछ दबी तो किप्लिग फिर अमेरिका गए जहां न्यूयार्क के एक होटल में उन्हें निमोनिया रोग हो गया। अपनी पत्नी और मित्रों की शुश्रूषा से किप्लिग जब किसी तरह अच्छे होकर इंग्लैंड लौटे तो उसके बाद अमेरिका जाने का नाम नहीं लिया।

इंग्लैंड लौटकर वे एक गांव में रहने लगे। अन्त में वे सुसेक्स के निकट बुरवाश नामक गांव में रहने लगे। किप्लिग में यह विशेषता थी कि वे किसी भी सैनिक, इंजीनियर या शासनाधिकारी से बातें करते समय बड़े ही कलापूर्ण ढंग से उन्हींके मुंह से उनकी रामकहानी या विचार उगलवा लेते थे। इसीलिए जब उनके निवास-स्थान पर पत्रकार उनसे मुलाकात करने आते तो किप्लिग उन्हें ऐसी बातों में उलझा देते कि वे स्वयं कुछ न कुछ अपनी बात कह जाते और मुलाकात के अन्त में उन्हें ऐसा लगता कि उन्होंने किप्लिग से मुलाकात नहीं की, बल्कि किप्लिग ने ही उनसे भेंट की है और उनसे बहुत-सी ज्ञातव्य बातें जान ली हैं।

भारत में सैनिक-जीवन का जैसा वर्णन किप्लिग ने किया है उससे अंग्रेज-जाति का गौरव कुछ बढ़ा नहीं—उलटे उनके साम्राज्यवाद के प्रति एक तीखा व्यंग्य ही प्रकट हुआ है। 'टामी एटकिन्स' का चरित्र-चित्रण करके उन्होंने युद्ध और सैनिकों के सम्बन्ध में यथार्थ बातें बिना संकोच के लिख डाली हैं। सैनिकों के अज्ञान का वर्णन उन्होंने उस कविता में किया है। जिसमें कहा गया है :

"जानी ! जानी !
सुनूं जरा तेरे मुंह से ही—
तेरी राम कहानी ?"
"ओहो ! मुझे नहीं कुछ मालूम—
पूछो कर्नल ज्ञानी से"
"हमने राजा को तोड़ा
औ' सड़क बनाई एक
खोल अदालत दी कम्पू के थल पर
नदी खून की जहां बही थी
वहां स्वच्छ जलधार
विधवाओं में भी आमंत्रण का
आया अमित उछाह !"

किप्लिग की रचनाओं में देहात का, समुद्र का और जहाजी जीवन का सुन्दर

चित्रण है।

साम्राज्य के निर्माताओं और रक्षकों के प्रति किप्लिंग अपनी रचनाओं में प्रत्यक्ष प्रहार करने की क्षमता रखते थे। उन्होंने अंग्रेजों को प्रकारान्तर से कथा-कहानियों के द्वारा बतलाया कि उपनिवेशों में इनकी शक्ति का रहस्य क्या है। उन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा अमेरिकनों का आह्वान किया कि वे गोरी जाति का बोझ-वहन न करें और अपना एकाकीपन छोड़ें। कुछ साहित्यिक किप्लिंग को साम्राज्य का चारण कहने से नहीं चूके।

१९०६ ई० में किप्लिंग की 'पक आफ पुक्स हिल' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई जो बच्चों से लेकर बुड्ढों तक ने पढ़ी और वह 'जंगल बुक' के समान ही सर्वप्रिय बन गई। इस रचना का विचार किप्लिंग को शिमले में पन्द्रह-बीस वर्ष पहले आया था।

किप्लिंग की अन्तिम महत्त्वपूर्ण रचना 'डैबिट और क्रैडिट' थी जो सन् १९२६ में प्रकाशित हुई। इसकी छः कहानियां; और विशेषकर 'इच्छाग्रह' बहुत प्रसिद्ध हैं।

किप्लिंग की रचनाओं में स्त्री पात्रों का अभाव-सा है और वे प्रगाढ़ प्रेम जैसी किसी अनुभूति का नाम तक नहीं जानते प्रतीत होते हैं। बाद में किप्लिंग पुरानी शैली के लेखक माने जाने लगे किन्तु उनकी पुस्तकों का पठन-पाठन और उनकी ख्याति नहीं घटा। उन्होंने नये युग की प्रवृत्तियों पर काफी आक्रमण किया, फिर भी उनकी रचनाएं पढ़ी गईं। उनके महोद्यम, स्वावलम्बन, कौशल और स्वतंत्रता की कद्र सुरक्षा को पहला स्थान देनेवाले इस युग में इतनी नहीं हुई जितनी पहले थी। यही कारण है कि किप्लिंग का सम्मान पिछली पीढ़ियों की अपेक्षा घट गया, फिर नोबल पुरस्कार ने उनके मिटते नाम को एक बार फिर पुनर्जीवित कर दिया। किप्लिंग ने जिस द्वितीय विश्व-व्यापी महासमर की भविष्यवाणी की थी उसे देखे बिना ही वे १९३६ ई० में इस संसार से चल बसे।

किन्तु मृत्यु के बाद भी अच्छे लेखक तो कुछ समय तक जीवित रहते हैं और इस रूप में भारत आदि पूर्ववर्ती ब्रिटिश उपनिवेशों में अंग्रेजों की करतूत का आधार उनके उपन्यास कहानियों में पाया जा सकता है।

आदर्शवाद के अतिरिक्त किप्लिंग की रचनाओं में साहस और पौरुष का प्रबल स्रोत मिलता है और नवयुवकों एवं कॉलेज के छात्रों को उनसे तेजस्विता, प्रतिष्ठा और वीरतापूर्ण कार्य-कलाप की शिक्षा मिलती है। उनसे साहसपूर्ण वक्तृत्व और क्रिया के लिए उत्तेजना भी मिलती है। उनकी कविताओं और कहानियां 'दि डेज वर्क' और 'किम' और 'लाइट्स हैंडीकैप्स' आदि प्रसिद्ध रचनाओं से निर्भयता का अच्छा पाठ मिलता है।

विख्यात् समालोचक गिलबर्ट चेस्टर्टन ने किप्लिंग महोदय की रचनाओं के सम्बन्ध में लिखा है : "उनकी रचनाएं ऐसी नहीं हैं जिनसे युद्ध की सी उत्तेजना मिलती हो, वरन् उनमें ऐसे साहस और वीरता का सम्मिश्रण है जो इंजीनियरों, नाविकों और खच्चरों में होती है। इस प्रकार की कहानियों में से 'दि ब्रिज बिल्डर्स', 'दि शिप दैट फाउन्ड

हरसेल्फ', "००७', 'विद दि नाइट मेल' और 'वायरलेस' इसी कोटि की हैं।"

किप्लिग की कविताएं पूर्ववर्ती नोवल पुरस्कार-विजेता कवियों से भिन्न हैं। इनकी कविताएं भी देशभक्तिपूर्ण है, किन्तु वे मिस्त्राल और व्योर्न्सन की कविताओं की अपेक्षा कम उद्दीपनमयी हैं। वास्तव में बहुत-सी बातों में किप्लिग अपने देश के प्रति बड़े खरे विचार रखते थे। उत्तरवर्ती जीवन में उनके विचार प्रजावादियों से मिलने लगे हैं और वे अपने पूर्ववर्ती विचारों के कुछ-कुछ विरुद्ध होकर साम्राज्यवाद के विरोधी बन गए जिसका परिचय उनके 'ए पिलिग्रम्स वे' (यात्री का पथ) नामक कविता के प्रत्येक पद से मिलता है। देश की प्रतिष्ठा और सेवा के सम्बन्ध में ऐसी आकर्षक पंक्तियां लिखनेवाले कवि थोड़े ही हुए हैं। उनकी 'इफ' 'फार आल वी हैव ऐण्ड आर' और 'दि चिल्ड्रन्स सांग' शीर्षक कविताएं इस प्रकार के सुन्दर उदाहरणों में से है।

किप्लिग महोदय को संसार का सुन्दर ज्ञान था और उन्होंने काफी यात्रा की थी।

इन्होंने अपने एक लडके के देहान्त पर जो शोकपूर्ण कविता 'माइ ब्वाय जैक (जैक मेरा लडका), १९१४-१८' शीर्षक के अन्तर्गत लिखी है, वह करुणरस से ओत-प्रोत है। उन्होंने १९ मई, १९२१ ई० को सार्बोन मे जो व्याख्यान दिया था, उससे मालूम होता है कि उनमें आध्यात्मिकता का पुट कितना था। उन्होंने कहा है—"कोई भी व्यक्ति टूटे (अधूरे) संसार की पूर्ति उस सरलता के साथ नहीं कर सकता, जिस प्रकार अधूरे वाक्यों की कर सकता है।"

किप्लिग महोदय को नोवल पुरस्कार उनकी आरम्भिक रचनाओं के कारण मिला है। पुरस्कार प्राप्त करने के समय उनकी अवस्था बयालीस वर्ष की थी और इस प्रकार के पुरस्कार-विजेताओं में ये सबसे अल्पवयस्क थे। इस अवस्था के पहले ही उनकी गद्य और पद्य की इतनी रचनाएं प्रकाशित हो चुकी थीं, जितनी इनकी दुगनी अवस्थावालों की न हुई होंगी। इनका जन्म भारत के बम्बई नगर में ३० दिसम्बर, १८६५ ई० को हुआ था। इन्होंने अपने माता-पिता का-सा ही मानसिक उत्कर्ष प्राप्त किया है। इनके पिता जॉन लॉकउड किप्लिग कलाकार थे और इनके जन्म के समय लाहौर स्कूल आफ इण्डस्ट्रियल आर्ट के संचालक थे। जान किप्लिग कहानी कहने की कला में बड़े निपुण थे और उन्हें कला तथा शिल्प-विज्ञान का अच्छा अभ्यास था। उन्होंने अपने पुत्र की आरम्भिक कहानियों में से कुछ के चित्र बनाए थे। उनकी लिखी हुई 'बीस्ट ऐण्ड मैन आफ इण्डिया' (भारत के पशु और मनुष्य) रुडयार्ड किप्लिग के नाम से १८९१ ई० में लन्दन से प्रकासित हुई थी। इसमें चित्राङ्कन असाधारण रूप में किया गया है। रुडयार्ड किप्लिग की माता का नाम एलिस मैकडॉनेल्ड था। उन्होंने अपने पुत्र में उत्साह और अपूर्व हास्य भर दिया था।

किप्लिग का नाम जोजेफ रुडयार्ड रखा गया था। परन्तु उनका पहला नाम कभी-कभी ही लेने में आता था। रुडयार्ड नाम इंग्लैण्ड की एक झील के नाम पर रखा

गया था, जहां किप्लिंग के माता और पिता पहले-पहल मिले थे। उनका शैशव और बाल्यावस्था के आरम्भिक दिन भारत में ही व्यतीत हुए थे, इसलिए इस देश के प्रति उनको प्रेम हो गया था। ये शिक्षा प्राप्त करने के लिए डिवानशायर भेज दिए गए थे, जहां शिक्षा समाप्त करके वे युनाइटेड सर्विसेज़ कॉलिज, वेस्टवर्ड को चले गए। वे अपनी माता की याद में बहुत व्याकुल रहा करते थे और उनके लिए इंग्लैण्ड में पैदा हुए अंग्रेज़ बच्चों के साथ मिलना-जुलना कठिन हो गया। सन् १८८० ई० में वे भारत लौट आए और यहां पत्रकारिता के क्षेत्र में घुसने की चेष्टा करने लगे। वे भारतीय सैनिकों की स्थिति जानने के लिए भी सचेष्ट रहने लगे। उनके सम्बन्ध में यह कहानी प्रसिद्ध है कि जब वे लाहौर में पत्रकार थे, उन्हीं दिनों ड्यूक ऑफ कैनाट भारत-भ्रमण करते हुए उस स्थान पर पहुंचे, और उनसे पूछा कि वे भारत में रहकर क्या काम करना चाहते हैं। नवयुवक किप्लिंग ने तुरन्त उत्तर दिया: "माननीय महोदय, मैं कुछ समय तक सेना के साथ रहना और सीमान्त प्रदेश जाकर एक पुस्तक लिखना चाहता हूं।" ड्यूक ने किप्लिंग की प्रार्थना स्वीकार कर ली और परिणाम-स्वरूप किप्लिंग ने 'हिल्स टु आईज़ आव एशिया' नामक पुस्तक के अन्तर्गत 'डिपार्टमेण्टल डिट्टीज़' 'सोल्जर्स', 'थ्री', 'अण्डर दि देवदार' और कई अन्य सुन्दर कहानियां लिखकर समाप्त कीं।

किप्लिंग ने भारत के सम्बन्ध में—और विशेषकर सैनिकों और उनकी स्त्रियों के बारे में—जो कुछ लिखा, उसको लेकर अंग्रेजों में खूब चर्चा हुई और यह कहा गया कि किप्लिंग की कहानियां अतिशयोक्तिपूर्ण हैं। भारत का भ्रमण किए बहुतेरे समालोचकों ने उनकी रचनाओं की सत्यता प्रमाणित की और कुछ ने उनकी सचाई में सन्देह प्रकट किया। कुछ ऐसे आलोचक भी थे जो भारतीयों से किप्लिंग के लिखे हुए विषयों पर वार्तालाप कर चुके थे और उन्होंने उनकी रचनाओं को अस्वाभाविक बतलाया था।

सन् १८८२ ई० से १८८९ ई० तक वे भारत के कई नगरों—लाहौर, बम्बई और मांडले में रहे और वहां के सैनिक और शासक अफसरों से मिलते-जुलते रहे। इन दिनों उन्होंने जो कहानियां या पद्य लिखे, वे भारत के अंग्रेज़ी समाचारपत्रों में प्रकाशित हुए थे। इनकी पहली पुस्तकाकार रचना इलाहाबाद की ए० एन० व्हीलर ऐण्ड कम्पनी ने प्रकाशित की थी और वह विशेष रूप से रेलवे स्टेशनों पर बिकती थी। किप्लिंग के अपने हाथ से खींचे हुए चित्रों के साथ उनकी कहानियों का सुन्दर संग्रह 'वी विली विकी'[1] नाम से प्रकाशित हुआ था, जिसे उन्होंने अपनी माता को समर्पित किया था। अपने संग्रह के प्रकाशन का अधिकार—जिसमें बहुत-से सुन्दर और अद्भुत चित्र थे—उन्होंने हाल में ही जे० पियरपाण्ट मार्गन को दिया था, जिसका पारिश्रमिक उन्हें पचास हज़ार रुपये से अधिक प्राप्त हुआ था।

जब किप्लिंग की अवस्था पच्चीस वर्ष की हुई तो अपने मस्तिष्क में भारत के

१. Wee Willeie Wikie

वास्तविक चरित्र-चित्रण की सामग्री और वीरतापूर्ण घटनाओं के स्वचित्रित चित्र लेकर वे इंग्लैण्ड गए और वहां उन्हें प्रकाशित कराने की चेष्टा करने लगे। लन्दन से वे इसी उद्योग में प्रशान्त महासागर के मार्ग से कैलीफोर्निया और वहां से न्यूयार्क पहुंचे। उन्हें आशा थी कि अमेरिका के सम्पादक उन्हें प्रोत्साहित करेंगे, क्योंकि उनके पास कुछ इस प्रकार के परिचय-पत्र थे, जिनसे उन्हें ऐसी सहायता मिलने की आशा थी। किन्तु अमेरिका में उनका स्वागत नहीं हुआ। बाद में शायद उपर्युक्त सम्पादक और प्रकाशकों ने इस बात पर खेद भी प्रकट किया कि उन्होंने एक नये प्रतिभाशाली लेखक को खो दिया। लन्दन में भी धीरे-धीरे उनका यश फैला। किप्लिंग की रचनाओं की कद्र सबसे पहले एण्ड्रू लांग नामक समालोचक ने की, यद्यपि बाद में उन्हीं किप्लिंग की कुछ रचनाओं को अत्यन्त त्रुटिपूर्ण भी बतलाया।

किप्लिंग महोदय को उनकी प्रारम्भिक रचनाओं के तीन गुणों पर नोबल पुरस्कार मिला। उन्होंने अपनी रचनाओं में उन्नीसवीं सदी के अन्त के एंग्लो-इंडियन के जीवन का सजीव चित्रण किया है। उन्होंने अंग्रेज और हिन्दुस्तानी फौजी सिपाहियों के रस्म-रिवाज रहन-सहन, बोल-चाल और स्वभाव आदि का सुन्दर वर्णन किया है। जिस तरह मिस्त्राल महोदय ने प्रॉविंस की ग्रामीण भाषा को लुप्त होने से बचाया था, उसी प्रकार किप्लिंग महोदय ने भारत के एंग्लो-इंडियन सैनिकों के सम्प्रदाय की भाषा का साहित्यिक उपयोग किया। उनकी रचनाओं में सैनिकों के जीवन के कर्कश और अभद्र रूप का उल्लेख सुन्दर रूप में हुआ है। उनकी रचनाओं में से 'भूत का रिक्शा'[1], 'तीन सैनिक'[2], 'शहर पनाह पर'[3], 'मांडले'[4] और 'प्रेमी की प्रार्थना'[5] आदि पुस्तकों में बहादुरी, खतरा और आकांक्षाओं की स्मृति का सुन्दर समावेश है। भारत छोड़ने के दस वर्ष के पश्चात् १९०२ ई० तक उन्होंने अत्यन्त सुन्दर कविताएं लिखीं, जिनका संग्रह 'टूटे हुए आदमी'[6] नामक पुस्तक में हुआ है।

अपनी इस सफलता के बाद जब किप्लिंग महोदय पुनः अमेरिका गए, तो वहां उनका बड़ा स्वागत हुआ। अमेरिका में ओलकाट वैलेस्टियर की बहन कैरोलिन वैलेस्टियर के साथ इनका प्रेम हो गया और बाद में १८९२ ई० में लन्दन में उनके साथ इनका विवाह भी हो गया। सर आर्थर कॉनन डायल ने किप्लिंग को पक्का पत्नि-भक्त लिखा है। विवाह के बाद संसार-भ्रमण करते हुए किप्लिंग महोदय अपनी स्त्री के साथ पुनः अमेरिका गए थे।

किप्लिंग की एक छोटी लड़की का अल्पावस्था में ही देहान्त हो गया था। उसकी मृत्यु से दुखी होकर उन्होंने 'जंगल बुक' नामक पुस्तक लिखी। अमेरिका में

---

१. The Phantom Rickshaw
२. Soldiers Three
३. On the City Wall
४. Mandalay
५. The Lover's Litany
६. The Broken Men

रहकर उन्होंने 'सात समुद्र'[१] और 'अनेक अन्वेषण'[२] नामक पुस्तक लिखीं। उनकी बाद की रचनाओं में 'पथ-बाधक'[३], 'खोया हुआ सैन्य दल'[४] और 'स्त्री का प्रेम'[५] प्रसिद्ध हैं। इनकी प्रार्थना-सम्बन्धी पुस्तकों में 'दी रिसेशनल'[६] एक अमर कृति है। इनकी अमेरिका की रचनाओं में 'बुझी रोशनी'[७], 'क्रिया और प्रतिक्रिया'[८] और 'चौथे आयतन की एक भूल'[९] विशेष उल्लेखनीय हैं।

किप्लिग की सन् १८९० ई० से १९०० ई० तक की रचनाओं में विशेष प्रौढ़ता आ गई है। १८९७ ई० में इन्होंने "०७"[१०] और 'दिन का कार्य'[११] नामक दो रचनाएं प्रकाशित कराईं। १८९९ ई० किप्लिग के जीवन में विशेष घटना का वर्ष था। इसी वर्ष अमेरिका जाने पर वे निमोनिया रोग से पीड़ित हो गए और कई सप्ताह तक बीमार रहे। इस रोग से वे स्वस्थ तो हो गए, पर कुछ समालोचकों का कथन है कि इसके बाद उनकी सारी साहित्यिक योग्यता जाती रही, क्योंकि उनकी बाद की रचनाओं में वह सजीवता नहीं रही। किन्तु ऐसी अवस्था में भी उन्होंने भारत के सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा और 'यदि'[१२] तथा 'पृथ्वी का अन्तिम चित्र'[१३] नामक सुन्दर रचनाएं प्रकाशित कराईं।

बालोपयोगी साहित्य लिखने की ओर उनकी अभिरुचि पहले से ही थी—इनकी 'जंगल बुक्स'[१४] और अन्य कहानियां बाल-संसार में काफी पसन्द की गईं। इसी प्रकार इनकी समुद्री कहानियां भी बालकों के मनोरंजन के लिए अच्छी सिद्ध हुईं। इनमें 'साहसी कप्तान'[१५] विशेष रूप से प्रसिद्ध हुई। इस प्रकार की अधिकांश कहानियों के संग्रह[१६] उनकी अधिक प्रचलित पुस्तकों में से है। उन्होंने 'पंचराष्ट्र'[१७] नामक काव्य-संग्रह भी प्रकाशित कराया। इनकी 'किम' या 'किम्बाल ओ हारा' (लाहौर का अनाथ बालक) ने यह सिद्ध कर दिया कि बीमारी के बाद भी उनकी साहित्यिक योग्यता और नाटकीय कौशल में कमी नहीं आई थी। बच्चों को इस कहानी से पर्याप्त उद्वेलन मिलता

---

१. The Seven Seas
२. Many Inventions
३. The Disturber of Traffic
४. The Lost Legion
५. Love o' Women
६. The Recessional
७. The Light That Failed
८. Actions and Re-actions
९. An Error of the Fourth Dimension
१०. ·007
११. The Day's Work
१२. If
१३. When the World's Last Picture is Painted
१४. Jungle Books
१५. Captains Courageous
१६. Puck of Pook's Hill, Rewards and Fairies और Kim
१७. The Five Nations

है। इसमें उन्होंने तिब्बती लामा के साथ यात्रा करने का रोचक वर्णन किया है।

बीसवीं सदी के साथ नये-नये कवियों और कहानी-लेखकों का अभ्युदय हुआ है। जिस समय किप्लिंग को नोवल पुरस्कार मिला, उस समय यद्यपि वे पूरे ओज के साथ अपनी लेखनी चला रहे थे, पर साहित्यिक क्षेत्र में उन्हें पुरानी पीढ़ी का लेखक समझा जाता था और वे आधुनिकता से पिछड़े हुए समझे जाते थे। १९०७ ई० के नोवल-पुरस्कार की घोषणा के बाद संसार के प्रत्येक सभ्य देश में एक नई दिलचस्पी फैल गई। किप्लिंग के ग्रन्थों का अनुवाद डेनिश, डच, फ्रेंच, जर्मन, इटैलियन, नार्वेजियन, पोलिश, रूसी, सर्बियन, स्पेनिश और स्वीडिश भाषाओं में हो गया। साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं ने उनकी १९०७ ई० के पहले की रचनाओं की आलोचना आरम्भ कर दी और उनके 'आदर्श' साहित्य के लिए नोवल पुरस्कार दिए जाने पर स्वीडिश एकडमी की प्रशंसा की जाने लगी। 'लन्दन नेशन' ने लिखा—"अंग्रेज़ी भाषा में किप्लिंग की कोटि का कोई ऐसा लेखक मुश्किल से मिल सकता है जिसने सैनिक वर्णन इतनी सफलता के साथ किया हो।" 'न्यूयार्क वर्ल्ड' ने लिखा—"पाठशाला के लड़कों की भांति किप्लिंग मार-पीट का वर्णन करते हैं पर ऐसा मालूम होता है, जैसे वे किसी घटना का अन्त उन बालकों की ही तरह नहीं करते।" 'शिकागो पोस्ट' ने यह टिप्पणी कसी कि "उन (किप्लिंग) का आदर्शवाद 'शक्ति' का आदर्शवाद है, और उनकी अंग्रेज़ी काफी ज़ोरदार है।"

इस प्रकार उनकी रचनाओं के सम्बन्ध में अनेक मत हैं, किन्तु यह सच है कि उनके ग्रन्थों में दो प्रकार की शैली पाई जाती है। एक तो वह है जिसमें एक दम आदर्शवाद है। इस श्रेणी में 'दीनाशाद की शादी',[१] 'दुखों का द्वार'[२] 'मेरी पुत्रवधू'[३] और 'गैली स्लेव' ( काव्य ) का नाम लिया जा सकता है। किन्तु 'दिन का काम'[४] और 'गहरे समुद्र का शैतान'[५] और कुछ अंशों में 'ब्रशवुड ब्वाय' यथार्थवाद के अच्छे उदाहरण हैं।

नोवल पुरस्कार प्राप्त हो जाने के बाद किप्लिंग ने अपनी कलम ढीली कर दी और फिर बहुत कम लिखने लगे। इनकी बाद की रचनाओं में अधिकांश में युद्धों का ही वर्णन है। इनमें से 'समुद्रीय युद्ध'[६] 'फ्रांस' और 'आयर्लैण्ड के गारद का इतिहास'[७] अधिक उल्लेखनीय हैं। अन्य प्रकार की रचनाओं में 'महान् हृदय'[८] उन्होंने १९१९ ई० में रूज़वेल्ट को श्रद्धांजलि देने के लिए लिखी थी। उन्होंने इंगलैण्ड और अमेरिका से शान्ति-स्थापन

१. The Courtship of Dinah Shadd
२. The Gate of the Hundred Sorrows
३. My Son's Wife
४. The Day's Work
५. The Devil of Deep Sea
६. Sea Warfare
७. History of the Irish Guards
८. Great Heart

के लिए अपील के रूप में भी कविताएं लिखी थीं। 'लार्ड राबर्ट' के प्रति जो शोकोद्गार उन्होंने लिखे हैं, वह भावुकता से परिपूर्ण हैं और उसमें करुणरस का विकास अच्छा हुआ है। इसके कुछ पदों में व्यंग का सम्मिश्रण भी समुचित रूप में हुआ है। १६२३ ई० के आसपास भी इन्होंने अनेक पुस्तकें लिखी थीं, किन्तु उनमें 'एशिया की दृष्टि'[1] (जिसमें पूर्वीय देशवाले यूरोपियनों को किस दृष्टि से देखते हैं, इसका विवरण है) और 'उच्छ्वास'[2] अधिक प्रसिद्ध हैं।

किप्लिग की रचनाओं की आलोचना काफी हुई है और फिलिप गेडाला ने उनकी एक पुस्तक ('मांडले') की समालोचना 'ए गैलेरी' नामक पुस्तक में करते हुए यहां तक लिख दिया है कि किप्लिग ने बहुत-सी बातों को थोड़े से थोड़े शब्दों में कह दिया है और उन्होंने अंग्रेजी भाषा पर शान रखकर उसे तेज कर दिया है। उस तेज धार से उन्होंने अंग्रेजी गद्य के खुरदरे धरातल को काटकर बराबर कर दिया है, किन्तु यह बात भी सच है कि उनकी कविता की शैली में पुरानापन काफी है और नई शैली की कविता के पाठकों को उसे पढ़कर वैसा आनन्द नहीं मिलता।

किप्लिग ने क्रियात्मक रूप में सार्वजनिक जीवन में कम भाग लिया है, और १६२३ ई० में पहले-पहल उन्हें सैण्ट एण्ड्रूज विश्वविद्यालय में भाषण करने का निमन्त्रण मिला था।

किप्लिग का आदर्श कोरी भावुकता से ही पूर्ण नहीं है, उसमें क्रियाशीलता और उत्तरदायित्व की छाप है। 'गोरों का उत्तरदायित्व'[3] में उन्होंने इस बात पर जोर दिया है कि उन्हें अपने युवकों को शुद्ध मनुष्यता की दीक्षा देनी चाहिए। यद्यपि उनकी आरम्भिक रचनाओं में बहुत-सा अंश ऐसा है जिसे कुछ हद तक 'फालतू' कह सकते हैं, पर उनमें भी ध्यानपूर्वक सुनने और देखने के लिए सन्देश है। दो दशाब्दी पहले के कॉलिजों के विद्यार्थी इनकी रचनाओं को जितने चाव के साथ पढ़ते थे, उतने चाव से आज शायद किसीकी रचना नहीं पढ़ी जाती; यही नहीं, अब भी सुशिक्षितों और अपढ़ यूरोपियनों और अमेरिकनों द्वारा इनकी रचनाओं के उद्धरण प्रायः सुनने में आते हैं।

किप्लिग महोदय में यह एक बड़ी विशेषता थी कि उन्होंने आर्थिक लाभ के लिए कभी अपनी साहित्यिक रचना का मान (स्टैंडर्ड) नीचे नहीं गिराया। उन्होंने सदा निर्भीकता और खरेपन के साथ काम लिया है।

---

१. Eyes of Asia  २. The Fumes of the Heart
३. The White Man's Burden

# रुडल्फ यूकेन

१६०८ ई० का नोवल पुरस्कार रुडल्फ यूकेन नामक जर्मन दार्शनिक को मिला। यूकेन महाशय जेना विश्वविद्यालय के दर्शनाध्यपक थे। अध्यापक मॉमसन के वाद यह दूसरे जर्मन विद्वान थे, जिन्हें यह गौरवपूर्ण पद प्राप्त हुआ।

रुडल्फ यूकेन का जन्म १८४६ ई० में ऑरिच नामक स्थान में हुआ था। इनके पूर्व जिन लोगों को नोवल पुरस्कार मिला था, उनकी अपेक्षा इनको अल्प अवस्था में ही पुरस्कार मिला था, इसलिए ये पुरस्कार प्राप्त होने के वाद लिखने तथा व्याख्यान देने का काफी कार्य कर सके थे। अधिक अवस्था हो जाने पर उन्होंने उन दिनों के प्रचलित जड़वाद के विरुद्ध प्रचार करने में अपना समय लगा दिया था। वास्तव में यूकेन महोदय को आदर्शपूर्ण रचनाओं के कारण ही पुरस्कार मिला था। उन्होंने अपनी आत्मकथा में लिखा है: "मेरा जीवन जीवन के वहिर्मुख वनने के विरुद्ध युद्ध करने में लगा है। आजकल वास्तव में यह किसी व्यक्ति का दुर्गुण होने के वदले राष्ट्रों का दुर्गुण वन गया है, और इसमें अव मौलिक परिवर्तन की आवश्यकता है। जो भी व्यक्ति आध्यात्मिक सुधार में विश्वास रखता है, आशा है कि वह मेरी तुच्छ सेवाओं में सहयोग देगा।"

पूर्वी फ्रीसलैंड के सूवे की भूमि, जहां यूकेन महोदय का जन्म हुआ था, कृषि और व्यापार का केन्द्र है। यह प्रान्त हालैण्ड से मिला हुआ है। यहां मछलियां पकड़ने का धन्धा भी खूव चलता है। ऑरिच भी व्यापार का केन्द्र है। वालक यूकेन का वचपन कुछ सुखद ढंग से नहीं व्यतीत हुआ। ये अपने माता-पिता की प्रथम सन्तान थे और ये अभी पांच ही वर्ष के हुए थे कि इनके पिता का देहान्त हो गया। इसके वाद युवावस्था तक इनके ऊपर विपत्ति पर विपत्ति पड़ती गई। वचपन में एक पर्दे में लगा हुआ छल्ला आधा निगल जाने के कारण इनका गला चिर गया और उसे निकालने की चेष्टा में और भी गहरा घाव हो गया। इसके कुछ समय वाद उन्हें लाल वुखार आ गया, जो चिकित्सा खराव होने के कारण अच्छा होने के वदले और वढ़ गया। कुछ समय के लिए तो उनकी आंखें वेकार हो गईं, पर पीछे इन्हें दिखाई देने लगा। इनके कुछ वड़े हो जाने पर इनका एक छोटा भाई मर गया, जिससे परिवार और भी शोक-संतप्त हो उठा।

रुडल्फ यूकेन की प्रवृत्ति लड़कपन से ही पढ़ने-लिखने की ओर थी। इनके पिता डाक-विभाग की नौकरी में थे और वे एक अच्छे गणितज्ञ थे। इनकी माता एक पादरी की लड़की थीं, और उन्होंने विज्ञान का अच्छा अभ्यास किया था। उनकी अभिलाषा यह थी कि उनका पुत्र योग्य बने। अपनी आत्मकथा में यूकेन ने अपनी माता के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की है। ऑरिच की पाठशाला में पढने के समय से ही यकेन गणित और संगीत में दिलचस्पी लेने लगे थे। इनके ऊपर इनके अध्यापक रुटर, लीज और टीशमुलर का अच्छा प्रभाव पड़ा था। कुछ समय तक तो यह बर्लिन विश्वविद्यालय में थे, इसके बाद अध्यापन-कार्य के परीक्षण में सफल हो जाने पर बैसेल में दर्शन पढ़ाने लगे। वहां इनके साथ इनकी माता भी गईं; किन्तु उनका देहान्त हो जाने के कारण इनका सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने का कार्यक्रम बिगड़ गया।

बैसेल विश्वविद्यालय उन दिनों शैशवावस्था मे था। यूकेन ने वहां के विद्यार्थियों से अच्छी घनिष्ठता प्राप्त कर ली। उन्होंने अरस्तू आदि प्राचीन दार्शनिकों की कृतियों पर टीका-टिप्पणी के साथ पुस्तकें लिखनी शुरू कर दी थीं। सन १८७३ ई० में वे जेना विश्वविद्यालय में बुलाए गए, जहां उनका कुनो, फिशर हैकेल और हाइल्ड ब्रैण्ड जैसे प्रख्यात दार्शनिकों के साथ सम्पर्क हुआ। सन १८७८ ई० में इनकी दर्शन-सम्बन्धी पुस्तक 'वर्तमान दार्शनिक विचारों के मौलिक भाव'[1] प्रकाशित हुई, जिसके फलस्वरूप प्रत्येक सभ्य देश में इनका और जेना विश्वविद्यालय का नाम विख्यात हो गया। एल विश्वविद्यालय के प्रेसीडेण्ट नोह पोर्टर के अनुरोध करने पर प्रोफेसर एम० स्टुअर्ट फेल्प्स ने उपर्युक्त जर्मन पुस्तक का अंग्रेजी अनुवाद किया था।

सन् १८८२ ई० में यूकेन महोदय ने आइरेन पैसो नामक लड़की से विवाह किया। इसके कारण उनका सामाजिक नेताओं से अधिक परिचय हो गया। यूकेन का कथन है कि उनकी स्त्री सुशिक्षित नहीं थीं, किन्तु उनमें आध्यात्मिकता, कला-प्रेम और प्रबन्ध-शक्ति अच्छी थी। यूकेन महोदय की सास एथेंस के प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता अलरिच की पुत्री थीं, इसलिए इस विवाह से यूकेन महाशय का परिचय वैज्ञानिकों और इतिहासज्ञों में खूब हो गया। इसके बाद उन्होंने आधुनिक दर्शन और मानव-जीवन पर अनेक पुस्तकें लिखीं। कितने ही जड़वादी और अद्वैतवादी जर्मन विद्वानों ने यूकेन के ग्रन्थों की कड़ी आलोचनाएं कीं—जर्मनी के पत्र-पत्रिकाओं ने उनकी रचनाओं को उपेक्षा की दृष्टि से देखा। यूकेन की ख्याति उस समय हुई जब उन्होंने धार्मिक दर्शन पर पुस्तकें लिखनी आरम्भ कीं। इस प्रकार की पुस्तकों में 'धर्म की सत्यता'[2] और 'क्या हम अब भी ईसाई रह सकते हैं?'[3] ने उन्हें काफी प्रख्यात बना दिया और हालैंड, फ्रांस, इंगलैण्ड तथा अमेरिका से वे इस विषय पर व्याख्यान देने के लिए

१. The Fundamental Concepts of Modern Philosophic Thoughts
२. The Truth of Religion
३. Can We Still Be Christians?

आमंत्रित हुए।

उनकी बाद में लिखी हुई पुस्तकों में से कुछ ने सन् १९०८ ई० में उन्हें नोवल-पुरस्कार-विजेता बनाया। उन्हें इस बात की बिलकुल आशा नहीं थी कि उन्हें कभी नोवल पुरस्कार मिल सकता है; इसीलिए जब यकायक उन्हें पुरस्कार मिलने का समाचार मिला, तो वे अत्यन्त आश्चर्यान्वित हुए। इसके पश्चात इन्हें 'स्वीडिश एकैडमी ऑफ साइन्स' (स्वीडन की विज्ञान-परिषद) ने अपना सदस्य बना लिया। जब फ्रांस, हालैंड और इंग्लैंड ने यूकेन का आदर किया, तो जर्मनी के पत्र-पत्रिकाओं ने उनके ग्रन्थों की तीव्र आलोचना करनी बन्द कर दी। १९११ ई० में वे इंग्लैंड गए और बाद में व्याख्यान देने के लिए अमेरिका भी पहुंचे। अमेरिका में वे अस्थायी रूप से अध्यापन-कार्य करते रहे और क्रमशः हार्वर्ड और कोलम्बिया विश्वविद्यालयों तथा बोस्टन के लॉवेल इन्स्टीट्यूट और स्मिथ कॉलेज के लेक्चरर रहे। उनके साथ उनकी स्त्री और लड़की भी अमेरिका गई और उन्होंने मूर तथा मंस्टरवर्ग का आतिथ्य स्वीकार किया।

यूकेन महोदय की वे रचनाएं जो धर्म से सम्बन्ध रखती थीं, इंग्लैंड और अमेरिका में खूब प्रचलित हुईं। मीरिबूथ ने उनके कितने ही निबन्धों का भी अनुवाद किया था। लुसी जन गिब्सन और डब्ल्यू० आर० ब्वायस गिब्सन ने उनकी 'ईसाई धर्म और नये आदर्श'[1] तथा 'जीवन का अर्थ और मूल्य'[2] नामक पुस्तकों का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित कराया। इनकी अन्य पुस्तकों में 'धर्म और जीवन'[3] काफी प्रसिद्ध है। 'नीति-शास्त्र और आधुनिक विचार'[4] भी उनकी सुप्रसिद्ध पुस्तकों में से है।

यूकेन महाशय की तुलना विद्वानों ने प्रायः दो अन्य आधुनिक विचारकों—राडल्फ हारनक और हेनरी बर्गसन के साथ की है। इनमें से पहले महोदय तो लिपजिग और बर्लिन विश्वविद्यालयों में अध्यापक थे और 'ईसाईपन क्या है ?'[5] और 'पंथों का इतिहास'[6] नामक क्रान्तिकारी पुस्तकें लिखी थीं, और दूसरे महाशय ने दर्शन पर कई अधिकारपूर्ण पुस्तकें लिखी थीं।[7] ई० हर्मन नामक प्रसिद्ध जर्मन विद्वान ने यूकेन और बर्गसन की तुलना करते हुए लिखा है : "यूकेन कदाचित् वर्तमान समय के सर्वश्रेष्ठ विचारक हैं; क्योंकि वे एक ऐसे नये आदर्श के प्रतिपादक हैं, जो हमारी वर्तमान नैतिक मांग की पूर्ति करता है। इस प्रकार का कार्य अब तक किसी भी आदर्शात्मक दर्शन ने नहीं किया था। इन्होंने नैतिक आदर्शवाद की धार्मिक उलझनों को भली प्रकार सुविकसित करके समझाया है। इनकी 'जीवन की दार्शनिकता' आध्यात्मिक उच्चता

---

१. Christianity and the New Idealism
२. The Meaning and Value of Life
३. Religion and Life
४. Ethics and Modern Thoughts
५. What is Christianity ?
६. History of Dogmas
७. इनकी 'Creative Philosophy' अधिक विख्यात है।

को सहायक है, बाधक नहीं।"

नोबल पुरस्कार प्राप्त करने के बाद २७ मार्च, १६०६ ई० को यूकेन ने स्टॉक-होम में व्याख्यान देते हुए कहा था : "हम लोग एक ऐसे जमाने से गुज़र रहे हैं जब 'परम्परा' एक सन्दिग्ध वस्तु मान ली गई है और हमारे जीवन का पथ-प्रदर्शन करने के लिए नये विचारों में संघर्ष हो रहा है।" आगे चलकर 'जड़वाद और आदर्शवाद' पर अपने विचार प्रकट करते हुए यूकेन ने बतलाया है कि जड़वाद का मतलब 'मनुष्य के साथ प्रकृति के सम्बन्ध में विश्वास' है; आदर्शवाद इस विश्वास को स्वीकार करता है; किन्तु यह प्रश्न करता है कि क्या समस्त जीवन यही है, या इस (जीवन) का और भी कोई रूप है। उन्होंने 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' का प्रभाव स्वीकार किया है किन्तु केवल उपयोगितावाद की दृष्टि से नहीं। उन्होंने यह भी कहा कि जीवन केवल एक सीमित तथ्य का प्रतिबिम्ब न होकर कुछ ऊंची चीज़ है, वह दूसरे 'लोक' में जाता नहीं, वरन् उस (दूसरे लोक) का निर्माण करता है। आदर्शवाद, जो दैनिक जीवन के प्रसार से कोई सम्बन्ध रखता है, कोई आदर्श नहीं रखता। आज कोई नया आदर्श ही नहीं रहा, क्योंकि हम जड़वाद की निर्दिष्ट सीमा को पार कर चुके हैं। हमें अब क्षण-स्थायी संस्कृति से ऊपर उठकर किसी अधिक हृदयग्राही और चिरस्थायी वस्तु की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है।

यूकेन के उपर्युक्त आदर्शात्मक विचारों ने ही उन्हें शिक्षक, दार्शनिक और लेखक के रूप में ऐसा प्रख्यात बना दिया कि अन्त में उन्हें नोबल पुरस्कार-समिति ने पारितोषिक देने में अपनी प्रतिष्ठा समझी और इस प्रकार उनका सार्वभौम आदर बढ़ाया। यूकेन महोदय का देहान्त १४ सितम्बर, १६२६ ई० को हुआ और इस प्रकार उन्होंने दार्शनिक की पूर्ण अवस्था का उपभोग किया।

# सेल्मा लागरलोफ

१९०९ ई० का साहित्यिक मुकुट सेल्मा लागरलोफ नामक स्वीडिश महिला के सिर बंधा। सेल्मा के पिता लेफ्टिनेंट लागरलोफ बड़े ही खुशदिल, साहसी और विख्यात पुरुष थे। सेना से अवकाश प्राप्त करके वे घर पर ही रहते थे और प्रायः अपने पुराने साथियों की मेहमानदारी और आव-भगत में लगे रहते थे। सेल्मा की शिक्षा का उन्हें खास खयाल था और वे उन्हें स्वीडन का प्राचीन इतिहास और अपने वंश की परम्परागत कथाएं बड़े चाव से सुनाते थे। आगे चलकर सेल्मा ने अपनी पहली कहानी में गोस्टा बर्लिंग नामक नायक का जो चित्रण किया, उसका मूल रूप उन्होंने अपने पिता की कही हुई एक कहानी से लिया था। उस मनुष्य का चित्रण इतना आकर्षक है कि पाठक उसपर मुग्ध हुए बिना नहीं रह सकते। वह आदमी गायक है, कवि है, नृत्यकला-विशारद है, और जब वह सामाजिक सम्मेलन में नाचने लगता है तो दर्शकों के अंग थिरक उठते हैं; किन्तु यह सब होते हुए भी उसमें एक बड़ी त्रुटि है और वह है पुरुषोचित गुणों का अभाव। सेल्मा लागरलोफ की माता एक राजमंत्री की कन्या थीं और उनके पितृगृह में दो पीढ़ी से राज-मंत्रित्व का ही कार्य होता था। इसलिए वह गृह-प्रबन्ध तथा मेहमानदारी करने में पूर्णतः पटु और सक्षम थीं। 'दुलहिन का मुकुट'[1] नामक रचना में सेल्मा ने अपने घरेलू अनुभव का सुन्दर चित्र खींचा है और घर में बुढ़िया दादी छोटे बच्चों को जो कहानियां, किम्ब-दन्तियां और पारिवारिक इतिहास सुनाया करती हैं, उनका उन्होंने अनुभवपूर्ण वर्णन किया है।

सेल्मा की अवस्था जब केवल साढ़े तीन वर्ष की ही थी तभी अपने पिता के साथ एक तालाब में नहाने के कारण उन्हें एक प्रकार के लकवे की सी बीमारी हो गई थी। इससे स्वस्थ होने में काफी समय लग गया और इसका कुछ न कुछ असर तो उनके जीवन भर रहा। 'मारबाका' नामक रचना में उन्होंने अपने बाल्यजीवन की छाप-सी लगा दी है। उनमें पर्यवेक्षण शक्ति कैसी तीव्र थी, इसका अनुमान उनकी पुस्तकों में वर्णित पशु-पक्षियों के जीवन से किया जा सकता है। फूलों के सौन्दर्य का वर्णन उन्होंने बड़े ही आकर्षक ढंग से किया है।

बचपन में कुमारी सेल्मा लागरलोफ पर सबसे अधिक प्रभाव बेलमैन की स्फुट

१. The Bridal Crown

कविताओं का पढ़ा था, क्योंकि उनमें हास्य, करुणा और संगीत का अद्‌भुत सामंजस्य है। जिस समय कुमारी लागरलोफ स्टॉकहोम के 'शिक्षक महाविद्यालय'[1] के पच्चीस चुने हुए उम्मीदवारों में हो गईं और उन्होंने वेलमैन, रयूनवर्ग तथा उनकी कविताओं के सम्बन्ध में व्याख्यान सुने तो अकस्मात् भावुकता के अतिरेक से वे अनुप्राणित हो उठीं और उन्होंने निश्चय किया कि वे इस प्रकार की कहानियां स्वयं लिखेंगी और उनमें प्रचलित किस्से, कहानियों और किम्वदन्तियों का प्रचुर रूप में उपयोग करेंगी। उनके मन में कविता और नाटक लिखने की अभिलाषा अल्पावस्था में ही हो गई थी। अपने चाचा के पास स्टॉकहोम जाकर उन्होंने उसी अवस्था में नाटक देखने के बाद यह निश्चय कर लिया था और जिस रात को नाटक देखा था, उस रात ऐसी ही भावना में जागकर 'प्रार्थना' आदि सम्बन्धी पद्य लिख डाले थे।

स्नातिका होने के पश्चात् वे लैंडूस्कोना नामक स्थान में अध्यापिका का काम करती रहीं और समय बचाकर कुछ लिखने का विचार भी किया करती थीं; किन्तु पाठशाला के कार्य से उन्हें अवकाश ही नहीं मिलता था। ऐसी अवस्था में वे विद्यार्थियों को अपनी कहानियां जबानी सुनाकर ही सन्तोष कर लिया करती थीं। छुट्टियों में वे अपने पुराने घर में आकर कुछ न कुछ लिखने का अवसर प्राप्त करती रहती थीं। उनकी 'गोस्टा बर्लिंग की कहानी' का पहला अध्याय बड़े दिन की छुट्टियों में घर पर ही लिखा गया था। पहले उन्होंने इस कथा को पद्यात्मक रूप में लिखा, फिर उसे नाटक का रूप देना चाहा और अन्त में उसे संक्षिप्त कहानी के रूप में लिखकर तैयार किया। बाद में उन्होंने इसी प्रकार की अन्य कहानियां भी लिखीं और १८९० ई० में अपनी बहन के अनुरोध पर इन्होंने ये कहानियां एक पुरस्कार की प्रतिस्पर्द्धा के लिए भेज दीं। यह पुरस्कार 'आइडन' नामक पत्रिका की ओर से दिया जानेवाला था। जब उक्त पत्रिका ने यह विज्ञप्ति निकाली कि कई कहानियां तो ऐसे अस्पष्ट रूप में लिखी हुई आई हैं कि उन्हें प्रतिस्पर्द्धा के लिए रखा भी नहीं जा सकता, तो कुमारी लागरलोफ ने समझा कि वे उन्हींकी कहानियां होंगी पर बाद में उन्हें बधाई का तार मिला कि वह सफल हुई हैं।

फिर क्या था! उस पत्रिका के सम्पादक महोदय ने प्रस्ताव किया कि कुमारी लागरलोफ उस कहानी के कथानक पर शीघ्र ही एक उपन्यास लिख डालें। अन्ततः सेल्मा ने पाठशाला से छुट्टी ले ली और स्वीडन की किम्वदन्तियों के आधार पर एक उपन्यास लिख डाला जिसमें हास्य के साथ-साथ कोमल आदर्शवाद भी सम्मिलित था, किन्तु कुमारी लागरलोफ को उससे स्वयं भी सन्तोष नहीं हुआ और वह उन्हें असम्बद्ध-सा लगा। इसके बाद उन्होंने 'जेरुसलम' और 'पोर्टूगालिया के सम्राट'[2] की रचना की। 'लन्दन टाइम्स' में ये दोनों ही उपन्यास प्रकाशित हुए और इनसे कुमारी सेल्मा का काफी

१. Teacher's College

२. The Emperor of Portugallia. बहुत-से लोग इसे सेल्मा की सर्वश्रेष्ठ कृति मानते हैं।

नाम हुआ। उनकी लेखन-शैली और विचार-धारा ने सबको अपनी ओर आकर्षित कर लिया। उनकी रचनाओं में 'पियक्कड़ और फक्कड़ कवि गोस्टा बर्लिंग' 'बेला बजानेवाली लिलीक्रोना' ('पोर्टूगालिया के सम्राट' की नायिका) और 'गोल्डन सनोकैसिल' का चरित्र-चित्रण बड़ा ही विमोहक है।

उनकी संक्षिप्त कहानियों का संग्रह सन् १८९४ ई० में 'अदृश्य शृङ्खला'[1] के नाम से प्रकाशित हुआ था। इनमें किसानों, मछुओं, बच्चों और पशुओं के सन्तारात्मक सम्बन्ध का विश्लेषण सुन्दर रूप में किया गया है। इसके बाद कुमारी लागरलोफ को साहित्यिक सेवाओं के बदले स्वीडिश एकेडमी, सम्राट आस्कर और उनके पुत्र राजकुमार यूजेन से वार्षिक पुरस्कार मिलने लगे। इसके बाद एक मित्र के साथ वे इटली और सिसली गई और वहां के पर्यवेक्षणों और अनुभवों को 'ख्रीष्ट-विरोधी के चमत्कार'[2] नामक रचना में लिखा, जो १८९७ ई० में प्रकाशित हुई थी और दो ही वर्ष बाद जिसका अंग्रेजी अनु-वाद भी पालिन बैंक्राफ्ट फ्लैच ने कर डाला था। उपर्युक्त दो पुस्तकें 'स्टोरी आफ गोस्टा बर्लिंग'[3] तथा 'अदृश्य शृङ्खलाएं' का अनुवाद भी उन्होंने किया था। 'ख्रीष्ट-विरोधी के चमत्कार' में उन्होंने प्राचीन सिसिली की परम्पराओं और कविताओं तथा आधुनिक साम्यवाद और धर्म पर उसके प्रभाव का संघर्ष सुन्दर रूप में चित्रित किया है। इसके लिखने में उन्होंने अपनी सुकुमार कल्पना और तीव्रता दोनों ही का सुन्दर उपयोग किया है। इसमें एक अंग्रेज स्त्री के चातुर्य का वर्णन है, जो हजरत ईसा की बाल-मूर्ति देखकर रोम के किसी गिरजे में लुब्ध हो जाती है और उसे अपना समस्त वैभव देकर भी प्राप्त करना चाहती है। चमत्कार-वश कुछ ही सप्ताह बाद कृत्रिम मूर्ति गिर पड़ती है और उसकी जगह भगवान ईसा का वास्तविक बालरूप सामने खड़ा हो जाता है। ख्रीष्ट-विरोधी को इस घटना के बाद सिसिली भेज दिया जाता है। कुमारी लागरलोफ ने पोप के मुंह से—फादर गोण्डो से—यह कहलवाया है कि ख्रीष्ट-धर्मावलम्बियों और उनके विरोधियों में एकता इस प्रकार स्थापित हो सकती है कि आप अपने कार्यों द्वारा विरोधियों पर यह प्रमाणित कर दें कि वे जो कुछ कर रहे हैं वह ईसा का अनुकरणमात्र है। इससे वे ईसा की शरण में आ जाएंगे।

१८९९ ईस्वी में उन्होंने अपनी सुन्दर कृति 'फ्राम ए स्वेडिश होमस्टीड'[4] प्रकाशित कराई जिसमें 'देहाती घर की कहानी' भी थी। 'सम्राट का खजाना'[5] भी इस संग्रह की प्रसिद्ध कहानियों में से है।

नोबल पुरस्कार मिलने के पूर्व उनकी दो सुन्दर रचनाएं—'जेरूसलम' और 'नाइल्स का महोद्यम'[6] और प्रकाशित हो गई थीं। उनकी इस दूसरी रचना का फल

---

१. Invisible Links
२. Miracles of Antichrist
३. Story of Gosta Berling
४. From a Swedish Homestead
५. The Emperor's Money-Chest
६. The Wonderful Advanture of N

यह हुआ कि १८९९ ई० में स्वीडिश सरकार ने उन्हें अपनी ओर से पलेस्टाइन भेजा। वहां उन्हें यह कार्य दिया गया कि वे स्वीडिश प्रवासियों का, जो 'नास' से जाकर वहां बसे हैं, वृत्तान्त लिखें। वहां वालों की बीमारी और दरिद्रता की अफवाह उड़ने के कारण स्वीडिश सरकार ने ऐसा किया था। कुमारी लागरलोफ ने वहां का वास्तविक हाल लिखते हुए बतलाया कि अवस्था उतनी भयावह नहीं है जितनी कि अफवाह से मालूम होती है—पर ये दोनों कष्ट उक्त उपनिवेश के स्वीडिश प्रवासियों को अवश्य हैं। इसी यात्रा में उन्होंने 'जेरूसलम' लिखने का कथानक और उपकरण प्राप्त किया। 'क्राइस्ट दन्तकथाएं'[1] भी इसी यात्रा के बाद लिखी गई जो श्रीमती हॉवर्ड द्वारा अनुवादित होकर १९०८ ई० में प्रकाशित हुई थी।

'एलिस इन वण्डरलैण्ड' और 'डाक्टर डुलिटिल' की तरह 'दि वण्डरफुल एडवेंचर्स आफ नील्स' और 'फर्दर एडवेंचर्स आफ नील्स' भी विद्यार्थियों के लिए बड़ी ही उपयोगी पुस्तकें हैं और समस्त सभ्य संसार में चाव से पढ़ी जाती हैं।

इस प्रकार पाठक देखेंगे कि नोबल पुरस्कार प्राप्त करने के पूर्व कुमारी सेल्मा लागरलोफ ने पर्याप्त रूप से साहित्यिक उन्नति कर ली थी। १९०९ ई० में यह पुरस्कार प्राप्त करने के पहले ही उन्हें स्वीडिश एकेडमी ने स्वर्णपदक प्रदान किया था। उपसाला विश्वविद्यालय ने उन्हें एल-एल० डी० की उपाधि से भी पहले ही विभूषित कर दिया था। जिस समय स्टॉकहोम में इन्हें पुरस्कार दिया गया तो वहां मेला लग गया था और सम्राट गस्टेव पंचम ने ग्राण्ड होटल में इन्हें दावत दी थी। इस अवसर पर कुमारी लागरलोफ ने जो भाषण किया उसमें उन्होंने बतलाया कि किस प्रकार लड़कपन में उनके पिता ने उनकी साहित्यिक भावनाओं को जाग्रत किया था।

कुमारी लागरलोफ को इक्यावन वर्ष की अवस्था में नोबल पुरस्कार प्राप्त करने की प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। उनके पुरस्कार-पत्र में उनकी जन्मतिथि १८५८ ई० लिखी है। इन्हें पुरस्कार देने का कारण यह बतलाया गया है कि इनकी रचनाओं में आदर्शवाद और आध्यात्मिकता के साथ-साथ सुन्दर कल्पना-शक्ति का अद्भुत सामंजस्य है।

१९११ ई० में जब अन्तर्राष्ट्रीय स्त्री-सुधार कांग्रेस का अधिवेशन हुआ तो इन्होंने एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाषण किया था, जो संसार-भर के प्रमुख पत्रों में अनुवादित होकर प्रकाशित हुआ था। इस भाषण में उन्होंने यह बताया कि गार्हस्थ्य सुख किस प्रकार समस्त ऐहिक सुखों की कुञ्जी है। इसी वर्ष उनका 'लिलिक्रोना का घर'[2] भी प्रकाशित हुआ जो तीन वर्ष बाद एनाबार्वेल द्वारा अनूदित होकर अंग्रेजी में भी प्रकाशित हुआ। इसमें बेला बजाने की मधुर और काव्यपूर्ण कल्पना की गई है। वह संगीत को ही अपना घर समझती है, और उसे ही विश्राम-स्थल; उसे छोड़कर वह संसार में और किसी वस्तु को कुछ मानती ही नहीं। तन्मयता का जैसा मनोमुग्धकारी वर्णन उपर्युक्त पुस्तक में है, वैसा शायद ही कहीं अन्यत्र मिलेगा।

---

1. Christ Legend 2. Lilliecrona's Home

यूरोपीय महायुद्ध के अन्त में उनकी 'बहिष्कृत'[1] नामक पुस्तक स्वीडिश भाषा में प्रकाशित हुई, जिसका अनुवाद १९२२ ई० में अमेरिका से प्रकाशित हुआ। इसके कथानक के उत्तरार्द्ध में संसार-व्यापी महायुद्ध का भी प्रासंगिक वर्णन है। यद्यपि सेल्मा का देश स्वीडन उस युद्ध में तटस्थ ही रहा था पर लेखिका के मन पर नर-संहार का कैसा प्रभाव पड़ा था, इसका परिचय इस पुस्तक से मिल जाता है। उन्होंने पवित्र मनुष्य-जीवन पर आए हुए घोर संकट की निन्दा की, और युद्ध के कुप्रभावों का चित्रण किया है। इसके बाद उनकी आरम्भिक कहानियों का भी अंग्रेजी अनुवाद 'ख़जाना'[2] नाम से प्रकाशित हुआ है। ये कहानियां साधारण कोटि की हैं।

कुमारी लागरलोफ को आरम्भ में ही नाटक लिखने की अभिलाषा थी; और यह अभिलाषा हमेशा जागृत रही। उनके कुछ नाटक स्वीडन, डेनमार्क और नार्वे में सफलतापूर्वक खेले गए। इनमें से 'मार्शक्राफ्ट की लड़की'[3] की फिल्म भी बन गई और वह अमेरिका आदि सभी देशों में दिखलाई गई। 'गोस्टा बर्लिंग की कहानी' की भी फिल्म बन गई जो स्वीडन तथा यूरोप के अन्य देशों में अच्छी चली। उनका देहान्त १९४०ई० में हुआ।

कुमारी लागरलोफ छः भाषाएं अच्छी तरह पढ़-लिख लेती थीं और वे सभी देशों की समस्याओं का थोड़ा-बहुत ज्ञान रखती थीं। यद्यपि रचनाओं की दृष्टि से वे एक जातीय या राष्ट्रीय विचार की कही जा सकती हैं, किन्तु जीवन की समस्याओं की अन्तर्दृष्टि और सहानुभूति की दृष्टि से वे एक अन्तर्राष्ट्रीय विभूति कही जा सकती हैं। पुरस्कार-प्राप्ति के बाद वे स्वीडिश एकेडमी की सदस्या भी चुन ली गईं जो संसार में स्त्री-जाति का अपने ढंग का पहला सम्मान था। एडविन जार्कमैन ने अपने 'वाइसिज ऑफ टुमारो' में उनके सम्बन्ध में लिखा है, कि वे एक स्वप्नदर्शी, भावनामयी और अभिलाषापूर्ण महिला थीं।

लागरलोफ की आरम्भिक रचनाओं में 'लावेनस्कोल्ड्स की अंगूठी' भी है जिसमें जनश्रुतियों, रीति-रिवाजों और हास्य-परिहासों का जीवित चित्र खींचा गया है—यह चित्र स्थानीय होते हुए भी विश्व-भर के पाठकों के लिए मनोरंजन की चीज है।

---

१. The Outcast

२. The Treasure

३. The Girl from the Marshcraft. इस पुस्तक का हिन्दी अनुवाद 'बहिष्कार' नाम से विश्व-वाणी ग्रंथमाला, प्रयाग से प्रकाशित हो चुका है।

# पॉल हीज़

१६१० ई० में साहित्य का नोवल पुरस्कार पॉल हीज को मिला। जॉन लड्विग पॉल हीज का जन्म १५ मार्च, सन् १८३० ई० में बर्लिन में हुआ था। इनके पिता भाषा-तत्त्व-विशारद और बर्लिन विश्वविद्यालय के अध्यापक थे। इनकी माता एक धनिक यहूदी परिवार की लड़की थीं। अपनी माता के जो संस्मरण हीज महोदय ने लिखे हैं, उसमें उन्होंने अपनी माता के सम्बन्ध में लिखा है कि वे बड़े ही उत्तेजनापूर्ण और भावुक स्वभाव की थीं। कहानी कहने और सनसनीपूर्ण ढंग की बातें सुनने में यह गुण इनकी माता को अपने पिता से मिला था। युक्तिवाद और तर्कवाद के गुण भी इन्हें अपने पिता से ही प्राप्त हुए थे। हीज-परिवार में प्रायः विद्वान लेखक और कलाविद् इकट्ठे हुआ करते थे, इसलिए बालक हीज के लिए पहले से ही उत्तम विकास के साधन प्रस्तुत थे। कुगलर नामक एक प्रसिद्ध इतिहासज्ञ से बालक पॉल हीज की मित्रता हो गई और आगे चलकर कुगलर महोदय की ही लड़की के साथ पॉल का विवाह हुआ।

बर्लिन से हीज़ जब बॉन विश्वविद्यालय में गए तो वे स्पेनी भाषा की ओर आकर्षित हुए और उसमें कर्वेटस और कलडेरों की रचनाओं से बहुत प्रभावान्वित हुए। बाद में १८४६ और १८५२ ई० में उन्होंने इटली का भी भ्रमण किया और दांते, बोकैसियो तथा लिवोपार्डी की रचनाओं में विशेष रस लेने लगे। इटली के कलाविदों ने योग्य पिता की इस योग्य सन्तान का अच्छा आदर किया और उन्होंने भी इटली को बहुत पसन्द किया। उन्होंने इटली के लिए लिखा है कि वास्तव में यह रंग और सौन्दर्य का देश है। शेक्सपियर की रचनाओं के वे प्रशंसक थे। नाटक तथा प्रेम-काव्य लिखने की ओर उनकी विशेष प्रवृत्ति थी। खण्ड-काव्य लिखने की ओर भी इन्होंने विशेष रूप से ध्यान दिया था। १८५४ ई० में बवेरिया के बादशाह ने इन्हें म्यूनिच के न्यायालय में १५०० फ्लोरिन[1] प्रति मास पर जगह दी। म्यूनिच वास्तव में ऐसी जगह थी जहां उनका सौन्दर्य-प्रेम सन्तुष्ट हो सकता था और उनकी मेधाशक्ति का विकास हो सकता था। लुई प्रथम के समय में म्यूनिच में सुन्दर भवनों का निर्माण हुआ था। वैसे भी म्यूनिच एक सुसंस्कृत स्थान था। हीज की मित्रता गीवल, वाडेनस्टट, विलब्रैंट, लॉग आदि कवियों और विद्वानों से हो गई। प्रसिद्ध इतिहासज्ञ रेंक ने भी

१. [illegible]

इनकी काफी घनिष्ठता हो गई। १८६८ ई० में जब बादशाह मैक्स के उत्तराधिकारी लुई द्वितीय ने गीवल का अपमान किया और उन्हें नगर छोड़ देने की आज्ञा दे दी, तो हीज को इस बात से बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने म्यूनिच को मृत्यु (१९१४ ई०) पर्यन्त नहीं छोड़ा।

जीवन के आरम्भ से सम्पन्न घराने में पलने और सदा सुखपूर्ण जीवन व्यतीत करते रहने पर भी उन्होंने अपनी रचनाओं में मछुओं, किसानों और अन्य देहातियों का चित्रण करने में काफी सफलता प्राप्त की थी। उनकी रचनाओं में 'सलामनदर', 'संसार के बच्चे'[1] तथा 'ला अरेबियाटा' सर्वश्रेष्ठ समझी जाती हैं। एँटोनियो नामक नाविक से एक कुमारी का प्रेम हो जाता है; पर जब तक कि उस (नाविक) की बांह में चोट नहीं लग जाती, तब तक वह उस प्रेम को रोकती है। फिर अपनी माता की स्मृति में उसकी क्या अवस्था होती है और उस प्रेम का कैसा अद्भुत परिणाम होता है, यह वर्णन पढ़ने योग्य है। पच्चीस वर्ष बाद हीज सॉरेण्टो वापस आए।

हीज महोदय की रचना-शैली वालज़ाक और तुर्गनेव की शैली से मिलती-जुलती है, क्योंकि उनका वर्णन प्रायः संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित होता है और एक ऐसा वातावरण पैदा कर देता है जो स्मृति में जीवित रहता है। इस प्रकार की कहानियों के उदाहरण 'बारबरोसा', 'एट दी घोस्ट आवर'[2] और 'मृतक झील'[3] हैं।

बाद के उपन्यासों में हीज महोदय ने अद्भुतता के बदले अधिकांश रूप में यथार्थ-वाद दिखलाने की चेष्टा की है, परन्तु इन्द्रिय-ग्राह्य सौन्दर्य को उन्होंने सदा और सर्वत्र प्रधानता दी है। वह कभी तबियत पर जबर्दस्ती दबाव डालकर नहीं लिखते थे; जब मन में उमंग उठती थी और कुछ लिखने की इच्छा होती थी तभी लिखने को बैठते थे। उनकी 'सुख के बाद यात्रा'[4] जैसी छोटी कहानी से लेकर 'संसार के बच्चे' और 'स्वर्ग में'[5] जैसे बड़े नाटकों तक में प्रायः यह बात दिखलाई गई है कि प्रकृति के विरुद्ध जाना ही पाप है। ये भाग्यवादी और भोगवादी दोनों ही थे। इनकी रचनाओं में और विशेषतः 'दि सेबाइन ओमन'[6] में स्त्री के अन्दर आत्म-दमन और आत्म-समर्पण की मात्रा कितनी अधिक होती है, यह दिखलाया गया है। 'संसार के बच्चे' में उन्होंने बतलाया है कि बाह्य रूप से कष्ट होते हुए भी जीवन सुख से पूर्ण है और हम उसे न केवल उद्बोधित कर सकते हैं वरन् हम भूत और भविष्य का अनुभव भी कर सकते हैं और सब मिलाकर जीवन में आनन्द की अनुभूति अच्छे रूप में कर सकते हैं।

हीज महोदय ने साठ से अधिक नाटक जर्मन भाषा में लिखे हैं; किन्तु उनमें से बहुत थोड़े नाटकों का अंग्रेजी में सुन्दर और सफल अनुवाद हुआ है और रंगमंच पर वे

---

१. Children of the World
२. At the Ghost Hour
३. Dead Lake
४. Journey After Happiness
५. In Paradise
६. The Sabine Woman

प्राय: असफल रहे हैं—'हैंस लैंज', 'हैड्रिजन कोलवर्ग' और 'मेरी ऑफ मागदला' (लेखक के अन्तिम नाटक) का अनुवाद विलियम विंटर और लायनल वेल ने अंग्रेजी में अच्छा किया है। कोलवर्ग में जीपफेल नामक बुड्ढे दार्शनिक का चित्रण उन्होंने अपने पिता के चरित्र के आधार पर किया है। 'लिवोनिडास' में उन्होंने फारस, जर्मनी और फ्रांस के युद्धों का वर्णन ऐसे सजीव ढंग से किया है कि उसे पढ़कर उत्साह और आत्मबलिदान की भावना प्रज्ज्वलित हो उठती है। 'फेलिस' नामक कहानी में उन्होंने एक किसान की लड़की का चरित्र-चित्रण किया है जो इन्द्रिय-लिप्सा की अपेक्षा बुद्धिवाद की ओर अधिक ध्यान देती है। इससे लेखक के इस सिद्धान्त का प्रतिपादन जोरदार ढग से हो जाता है कि हृदय की उत्तेजना के अनुसार कार्य कर बैठना अवाञ्छनीय है। बाद में उन्होंने जो कहानियां लिखी हैं, उनमें 'लास्ट सेण्टॉर' में तत्कालीन जड़वाद के विरुद्ध काफी विद्रोहात्मक भाव प्रकट किए गए हैं। 'असाध्य'[1] और 'अन्धा'[2] भी उनकी सुन्दर कृतियों में से हैं। हीज महाशय पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों के चरित्र-चित्रण में अधिक सफल हुए हैं। इसीलिए उनको बहुत-से जर्मन साहित्यिक 'तरुणियों के प्रेमी' कहा करते थे। उनकी रचनाओं में कहीं-कहीं महाकवि गेटे के विचारों की झलक स्पष्ट दिखाई देती है—विशेषकर 'फाइण्डर-डर-वेल्ट', 'दि ग्रॉइटरर ग्राफ ट्रेविसो', 'उड़ाऊ पूत'[3] और 'स्पेन ग्राफ रादेनवर्ग' में तो उक्त बात पर्याप्त मात्रा में पाई जाती है।

हीज महोदय की गद्य-रचना पद्य की अपेक्षा अधिक सफल हुई है। इनके पद्य-ग्रन्थों में तो केवल 'सलामनन्दार', 'दि फ्यूरी' और 'दि फेयरी चाइल्ड' अधिक ख्याति पा सके हैं। इनके अन्दर कोमल भावना, सौन्दर्य और आदर्श पर्याप्त परिमाण में पाए जाते हैं।

हीज का शरीरान्त १९१४ ई० में हो गया।

---

१. The Incurable २. The Blind

३. Prodigal Son

# मटरलिंक

मॉरिस मैटरलिंक को १९११ ई० में नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ था, इसलिए इस पुरस्कार की दशाब्दी हो चुकने के कारण काफी ख्याति प्राप्त हो चुकी थी और नये-नये लेखक साहित्यिक प्रतिद्वन्द्विता में आने लगे थे। मैटरलिंक को नोबल पुरस्कार उनकी बहुमुखी साहित्यिक क्रियाशीलताओं और विशेषकर उनकी उन नाटकीय रचनाओं के लिए मिला है जो कल्पना और काव्योचित आदर्श से ओतप्रोत हैं। उनकी कृतियां ऐसी रहस्यपूर्ण रीति से लिखी गई हैं कि सहृदय पाठक उनसे अनुप्राणित होकर भावाकुल हुए बिना नहीं रह सकता।

१९११ ई० के पुरस्कार के सम्बन्ध में साहित्यिक जगत् यह आशा कर रहा था कि इस बार वह किसी रूसी या अमेरिकन लेखक को मिलेगा किन्तु यह गौरव बेल्जियम जैसे छोटे देश को प्राप्त हुआ। इनके अधिकांश नाटक फ्रेंच भाषा में लिखे गए और उन्होंने मैटरलिंक को साहित्यिक जगत् में शीघ्र ही विख्यात बना दिया। इसके पहले बेल्जियम के कुछ ही लेखक साहित्यिक क्षेत्र में थोड़े-बहुत प्रसिद्ध हो पाए थे। चार्ल्स-वान-लर्बर्ग, हेनरी माबेल और एडमाण्ड पिकार्ड नामक बेल्जियन लेखकों की रचनाएं प्रकाश में आ चुकी थीं।

मैटरलिंक का जन्म सन् १८६१ ई० में बेल्जियम के घेण्ट नामक स्थान में एक अच्छे घराने में हुआ था। इन्होंने बाल्यकाल में अपने चारों ओर जो वातावरण देखा था, उसका दिग्दर्शन इनकी रचनाओं में मिलता है—वाटिका, समुद्र और जहाजों का वर्णन इन्होंने पूरी दिलचस्पी के साथ किया है। धुआं फेंकते हुए छोटे-से चिराग के धुंधले प्रकाश में अपनी कुटिया के द्वार पर बैठे हुए किसानों का चित्रण उन्होंने सुन्दर रूप में किया है, और यह उनके बचपन के निरीक्षण का ही फल है। छोटे-छोटे बच्चों को स्कूल जाते देखकर उन्हें अपने बचपन की याद आ गई और उन्होंने युवावस्था में बालकों के मनोविज्ञान का अध्ययन किया और उसे अपनी रचना में स्थान दिया। बच्चों की अद्भुत परम्परा और उनके अकारण भय का प्रतिबिम्ब उनके कुछ नाटकों में स्पष्ट झलकता है।

मैटरलिंक के पिता की यह इच्छा थी कि उनका पुत्र कानून पढ़े इसलिए पहले उन्होंने कानून का ही अध्ययन करके कुछ समय तक घेण्ट में उसकी 'प्रैक्टिस' की। सात

वर्ष तक जेसूट कॉलिज में अध्ययन करने पर उनकी विचारधारा दार्शनिकता की ओर झुकती प्रतीत हुई और उन्होंने विचार किया था कि पेरिस में रहकर वे साहित्यिकों और विद्वानों की संगति का सुअवसर प्राप्त कर सकते हैं। वहां उन्होंने विलियर्स से काफी घनिष्ठता प्राप्त कर ली थी। इनका दूसरा भावुक मित्र ग्रापटेव मिरावां था जिसे बाद में मैटरलिंक ने अपनी 'प्रिंसेज मैलीन' और 'पेलियस ऐण्ड मेलीसांदे' नामक रचनाएं समर्पित की थीं। मिरावां मैटरलिंक का बड़ा प्रशंसक था और उसे 'बेल्जियन शेक्सपियर' कहा जाता था।

१८८९ ई० में अपने पिता की मृत्यु के पहले मैटरलिंक बेल्जियम वापस गए और उसके बाद सात वर्ष तक वहीं रहकर प्रकृति और तत्त्वविद्या का अध्ययन करते रहे तथा साथ ही प्रहसन और नाटक भी लिखते रहे। इसी बीच उन्होंने कुछ अंग्रेजी रचनाओं के फ्रेंच अनुवाद भी किए और इस प्रकार अंग्रेजी की ओर आकर्षित हो गए। उन्होंने इमर्सन नोवालिस और रुइसब्राक की मध्यकालीन गूढ़ रहस्यमय रचनाओं का अंग्रेजी से फ्रेंच में उसी समय अनुवाद कर लिया था जब ये जेसूट कॉलिज में पढ़ते थे। इमर्सन की दार्शनिक रचनाओं के उस भाग की इन्होंने विशेष रूप से प्रशंसा की है जिसमें उन्होंने 'मनुष्य की आध्यात्मिक प्रकृति की उच्चता और आत्मबल' का वर्णन किया है। उन्होंने इमर्सन की प्रशंसा करते हुए लिखा है : "इमर्सन ने हमारे जीवन की महत्ता बताने के लिए जन्म धारण किया था।...उन्होंने हमें स्वर्ग और पृथ्वी की सभी शक्तियों का दिग्दर्शन कराया है।"

१८९६ ई० में मैटरलिंक बेल्जियम से फिर पेरिस लौट आए और वहीं उन्होंने अपना घर बना लिया। फ्रेंच एकेडमी का सदस्य बनने के लिए उन्होंने अपनी बेल्जियम की नागरिकता का परित्याग नहीं किया। महायुद्ध के दिनों में उन्होंने अनेक प्रकार से अपने स्वदेश—बेल्जियम—की सेवा की। अधिकांश जीवन पेरिस में व्यतीत करने पर भी उनकी स्वदेश-भक्ति कम नहीं हुई और उन्होंने अपने को गौरवपूर्वक बेल्जियम-निवासी कहा है।

१८८९ ई० से १८९६ ई० तक जिन दिनों वे बेल्जियम में थे उन्होंने 'दि ब्लाइंड', 'दि इण्ट्रूडर,' 'दि सेवेन प्रिंसेज', 'अलादीन ऐण्ड पैलोमाइड्ज़' और 'दि डेथ ऑफ टिंटाजिल्स' की रचना की थी। इनकी कृतियां रंगमंच पर लाने योग्य भी सिद्ध हुईं और पाठोपयोगी भी। 'पेलियस और मेलीसांदे' में मेलीसांदे की दुखद मृत्यु का उस समय दिखाना, जब वह अपने प्रणयी का वध और लड़की की पैदाइश देख चुकती है, नाट्य-कला की शक्ति का परिचय देता है। इनकी भाषा-शैली सरल और वर्णन का प्रवाह अत्यन्त परिमार्जित है।

मैटरलिंक की रचनाओं का अंग्रेजी अनुवाद पहले-पहल रिचार्ड होवी नामक एक अमेरिकन कवि ने किया था, जिसकी युवावस्था में ही अकाल मृत्यु हो गई थी। अनुवादक ने मैटरलिंक से सहमति प्रकट करते हुए पहली जिल्द की भूमिका में कहा है कि आत्मसंवाद

तथ्यवाद से नितान्त पृथक् वस्तु है। और मैटरलिंक में पहले गुण का पूर्ण विकास हुआ है। मैलार्म गिलबर्ट पार्कर और क्लिस कार्मन ने भी इनके इस कथन का समर्थन किया है। मैटरलिंक की कृतियों में भाव-धारा निश्चित सीमा के भीतर चलती है; किन्तु जहां उन्होंने दुखान्त और अद्भुतता को मिलाने का यत्न किया है, वहां उन्हें उतनी सफलता नहीं मिली। श्री हॉवी का कथन है कि वे (मैटरलिंक) सदा भय और दुःख का चित्रण करते हैं······उन्हें कब्र का कवि कहना अधिक ठीक होगा, क्योंकि एडगर ऐलेन पो की तरह इनकी शैली भी अत्यन्त प्रभावशाली है। उनके 'दि ब्लाइण्ड' और 'होन टू ज्वायज़ील' में भावी क्लेश का पूर्वाभास विशिष्ट रूप से मिल जाता है।

पेरिस में अपने साहित्यिक मित्रों द्वारा प्रोत्साहित होकर और जार्जेट-ली ब्लैंक (एक अभिनेत्री, जिसने बाद में उनसे शादी कर ली थी) के सम्पर्क में आकर उन्होंने तीन ऐसे नाटक लिखे जिनमें उनकी नाटकीय प्रतिभा चरम सीमा पर पहुंच गई। इनके नाम क्रमशः 'ज्वायज़ोल,' 'मोनावाना' (१६०३ ई०) और 'दि ब्ल्यू बर्ड' है। सम्भवतः उनकी यह अन्तिम पुस्तक ही उन्हें नोबल पुरस्कार दिलाने में सफल हुई है। इस नाटक में आदर्शवाद, कोमल भावना, विचारप्रवणता, प्रत्येक दृश्य के आकर्षक पात्र, प्रत्येक देश और प्रत्येक काल के लिए उनके व्यापक सन्देश आदि ऐसे हैं, जो मनुष्य के हृदय पर स्थायी प्रभाव डालते हैं। सम्भव है कि रंगमंच पर इस नाटक की रहस्यमय पारदर्शिता कुछ नष्ट हो जाए, पर चित्रपट के रूप में उसका वह सौन्दर्य पूर्णतः प्रदर्शित हुआ है। उनके इस 'दि ब्ल्यू बर्ड' जैसे पूर्ण नाटक के बाद भी उसके उपसंहार के रूप में 'सगाई'[1] नामक नाटक क्यों निकला, यह अनेक आलोचकों का आलोच्य विषय वर्षों तक बना रहा है।

'मोनावाना' की रचना उन्होंने खास तौर पर अपनी स्त्री के लिए की थी। इसमें भावों की प्रचुरता है और पात्र ऐसे सन्धि-क्षण पर रखे गए हैं, जो बुद्धि का आह्वान पूर्ण रूप से करते हैं। गिवोवाना या मोनावाना 'पीसा' की सैनिक टोली के संचालक गीडो कोलोना की स्त्री है। यही इस कथानक की नायिका है। फ्लोरेन टाइन्स का सेनापति प्रिंजिवेल जो उपर्युक्त नायिका का बचपन का प्रेमी है, खल-नायक का कार्य करता है। मध्यकालीन वातावरण और नाटकीय भाव-भंगी के कारण इस नाटक के संवाद में सजीवता आ गई है। इसके लिखने के दस वर्ष बाद १६१३ ई० में 'मेरी मेगदालेन' प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक की भूमिका में मैटरलिंक ने अपने प्रति पॉल हीज के सद्भाव की चर्चा की है और लिखा है कि इसी पुस्तक के कथानक पर क्वचित स्थिति-परिवर्तन के साथ उन्होंने भी नाटक लिखने का निश्चय किया है।

गत यूरोपीय महासमर का प्रभाव मैटरलिंक पर खूब पड़ा था, इसका पता उनके पांच रचनाओं[2] से लगता है। उनकी अन्य पुस्तकें जिनके द्वारा उन्होंने अपनी मनो-

---

१. The Betrothal

२. Wrack of the Storm, Belgeum at War, Burgomas'er at Stilemonde, The Cloud that Lifted, The Power of the Dead

विज्ञानात्मक योग्यता प्रदर्शित की है, 'बड़ा रहस्य'[1], 'हमारी अमरता'[2], 'अज्ञात अतिथि'[3] और 'उस ओर का प्रकाश'[4] हैं। मनुष्य अज्ञात शक्तियों का उत्पादक है और मनुष्यता और प्रकृति सदा एक-दूसरे से विशृङ्खलित रहती हैं, इसका प्रतिपादन उनकी 'विनम्र का धन',[5] 'जीवन और फूल'[6] और 'मधुमक्षिका का जीवन' नामक रचनाओं में हुआ है। मधुमक्षिकाओं की कार्य-शैली का विशिष्ट अध्ययन करके उसे मानव-जीवन पर घटित करने के लिए उन्होंने मधुमक्षिकाओं को स्वयं पाला था। मधुमक्षिकाओं के छत्ते का अध्ययन करके उन्होंने मक्खियों की कार्य-प्रणाली की तुलना मनुष्य की कार्य-प्रणाली से की है।

जीवन की स्पर्श्य वस्तुओं से परे जाने के लिए बड़े साहस की आवश्यकता होती है। मैटरलिक ने 'एरिआन और नीली चिड़िया',[7] 'बहन बीट्रिस'[8] और 'सन्त अन्थोनी के चमत्कार'[9] में संसार को उस उपेक्षित जादू की चाबी की ओर ध्यान देने को कहा है जिसके द्वारा स्पर्श्य संसार के निषिद्धात्मक क्षेत्रों में भी प्रवेश प्राप्त हो सकता है। जीवन की उपमा उन्होंने 'वाटिका' या 'भीतरी मन्दिर' से दी है और वानस्पतिक संसार तथा मधुमक्षिकाओं के छत्ते से भी उसका सादृश्य सिद्ध किया है। उन्होंने अपनी रचनाओं में उग्र भावनाओं का चित्रण थोड़े स्थलों पर किया है, किन्तु उन्होंने सत्य की खोज और नैतिक आत्मसंयम के सौन्दर्य पर अधिक दृष्टान्त-प्रदर्शन किया है। इन्होंने सहज ज्ञान के द्वारा अज्ञात और रहस्यपूर्ण गुत्थियों में प्रविष्ट होकर उसे सुलझाने की चेष्टा की है। उनकी बहुत-सी रचनाओं में उदासीनता और शोक की छाया देखने में आती है; उनके पात्र प्रायः अपने चारों ओर के वातावरण से संघर्ष लेने में दुर्बल सिद्ध होते हैं। उनके तीन नाटकों 'दि इंट्रूडर'[10] 'टिटाजिल्स की मृत्यु'[11] और 'भीतर'[12] में अदृष्टवाद की ओर काफी इंगित है, किन्तु परिपक्वावस्था और परिपक्व बुद्धि के बाद उन्होंने जो नाटक लिखे हैं उनमें आध्यात्मिक उन्नति और रहस्यमय आदर्शवाद की प्रचुरता है।

उनके बाद के नाटकों में 'शून्य का जीवन'[13] और 'नक्षत्रों का जादू'[14] में उक्त विचारों का विकसित रूप देखने में आता है।

उनकी प्रारम्भिक रचनाओं में से 'दीमकों का जीवन'[15] का अनुवाद भी १९३०ई० में प्रकाशित हो गया है। मैटरलिक सदा गम्भीर विचार के साथ लेखनी उठाते थे और संख्या-वृद्धि के लिए साहित्यिक रचना नहीं करते थे।

उनकी मृत्यु १९४९ में हुई।

---

१. The Great Secret
२. Out Eternity
३. Unknown Guest
४. The Light Beyond
५. Treasure of the Humble
६. Life and Flowers
७. Ariadne and Bule Beard
८. Sister Beatrice
९. The Miracles of Saint Anthony
१०. The Intruder
११. The Death of Tintagiles
१२. Interior
१३. Life of Space
१४. Magic of the Stars
१५. The Life of the White Ants

# गर्हार्ट हॉप्टमैन

१९१२ ई० का साहित्यिक पुरस्कार गर्हार्ट हॉप्टमैन नामक प्रख्यात जर्मन उपन्यासकार और नाटककार को प्राप्त हुआ था। इनका जन्म १८६२ ई० में हुआ था और यह दूसरे जर्मन साहित्यिक थे जिन्हें हीज़ के बाद नोबल पुरस्कार मिला। नोबल पुरस्कार के इतिहास में प्रायः ऐसा होता आया है कि एक ही राष्ट्र के दो प्रतिनिधियों को बराबर पुरस्कार मिला है। नार्वे के उपन्यासकार ब्योन्संन और हैमसन, स्पेन के नाटककार एकेगारे, बेनाविन्ते तथा जर्मन साहित्यिक हीज़ और हॉप्टमैन इसी प्रकार के उदाहरण हैं। हीज़ की रचनाओं में अपेक्षाकृत प्राचीनता, काव्य और अद्भुतता पाई जाती है। उन्होंने मनुष्य की सदाशयता और सन्तोषवृत्ति की प्रशंसा की है। दो ही वर्ष बाद पुरस्कार प्राप्त करनेवाले गर्हार्ट हॉप्टमैन को कुछ समालोचकों ने आधुनिक काल के उच्च कोटि के यथार्थवादियों की श्रेणी में रखा है। समाज की जैसी चुटकी इन्होंने ली है, वह खलबली मचा देनेवाली थी। १९०० ई० के बाद जब हीज़ की रचनाएं नवयुग के नवयुवकों को कम प्रिय हो चली थीं और प्रगतिशील एवं उदीयमान लेखकों के मन में उनका आदर कम हो चला था, तो उन्हें अस्सी वर्ष की अवस्था में पुरस्कार प्रदान करके पुरस्कारदात्री समिति ने एकबार फिर उनकी रचनाओं के प्रति लोक-रुचि उत्पन्न कर दी थी।

यद्यपि हॉप्टमैन के दादा एक जुलाहे थे और वे जन्म-भर सम्पन्नता और समृद्धि से वञ्चित रहे थे, पर उनके पिता तीन होटलों के मालिक थे और आगे चलकर गर्हार्ट हॉप्टमैन एक काफी सुसम्पन्न व्यक्ति हो गए। उनका जन्म साल्ज़बर्न में १८६२ ई० में हुआ था। इस प्रकार वे हीज़ से बत्तीस वर्ष छोटे थे और इसीलिए इनकी रचनाओं में वास्तव में एक पीढ़ी की प्रगतिशीलता दिखाई देती है। उनकी शिक्षा ब्रे सया, जेना और इटली में हुई थी। पढ़ने-लिखने में वे इतने सुस्त थे कि इनके भाई कार्ल के अतिरिक्त और किसीको यह विश्वास नहीं था कि भविष्य में ये कभी किसी प्रकार की उन्नति कर सकेंगे। उन्होंने साहित्य के साथ कृषि और इतिहास का विशेष अध्ययन किया था। उनका विचार अभिनेता बनने का था; किन्तु बोलने में ये कुछ तुतलाते थे, इसलिए उनकी आशाएं व्यर्थ गईं। उन्होंने एक सुसम्पन्ना स्त्री के साथ शादी कर ली और बर्लिन में रहकर नाट्यशालाओं के लिए नाटक लिखने शुरू कर दिए। शुरू में बायरन को साहित्यिक गुरु मानकर 'चाइल्ड हेरालड्स पिलग्रिमेज' के ढंग पर इन्होंने 'प्रोमेथियस के

बच्चों का भाग्य"[1] लिखा।

हीज ने अपने समय के जिन लेखकों को मान दिया था, उनमें गर्हार्ट हॉप्टमैन मुख्य थे, क्योंकि उनके मत से इनकी रचना में स्वाभाविकता विशेष रूप से थी। जब यह घोषणा प्रकाशित हुई कि १९१२ ई० का नोबल पुरस्कार जर्मन लेखक गर्हार्ट हॉप्टमैन को प्रदान किया गया है, तो जर्मनी के कलाकारों का राष्ट्रीय गौरव बहुत बढ़ गया, किन्तु अन्यदेशीय आलोचकों ने प्रश्न करना शुरू कर दिया कि आदर्शवाद को किस प्रकार खींच-तानकर इस लेखक की रचनाओं पर लागू किया गया है और 'प्रभात से पहले'[2], 'एकाकी जीवन'[3], 'जुलाहे और माइकेल क्रेमर'[4] आदि रचनाओं में आदर्शवाद कहां तक है? हॉप्टमैन ने कुछ नाटक ऐसे लिखे हैं जो सामाजिक समस्याओं से पूर्ण हैं; किन्तु साथ ही उनकी दो-तीन रचनाएं ऐसी भी हैं, जो वास्तव में काव्य-गुणपूर्ण हैं। इन रचनाओं (नाटकों) का जर्मन साहित्य में खास स्थान है और इनके अंग्रेजी अनुवादों के नाम हैं 'दी एजम्पशन आफ़ हैनेल,' 'दि संकेन बेल' और 'पर्सीवल'।

हॉप्टमैन में दो स्पष्ट और विरोधी व्यक्तित्वों का दर्शन पाठक करेंगे। 'संकेन-बेल' की रचना पर वे नोबल पुरस्कार के लिए चुने गए थे। इसमें भौतिक और आध्यात्मिक संघर्ष सुन्दर रूप में प्रदर्शित किया गया है। कहीं-कहीं उनकी रचना में प्रसिद्ध उपन्यासकार और नाटककार सडरमैन की रचनाओं की छाप है। आदर्शवादी रचना करने के पहले हॉप्टमैन ने इब्सन, जोला, टॉलसटॉय, मैक्स नारडा और आर्नो होल्ज की तरह दुखान्त रचनाएं की थीं। इनकी यथार्थवादी रचनाओं के कथानक कमजोर और शिथिल हैं—विशेषतः 'दि वीवर कोट', 'रोज बर्ड' और 'दि कन्फ्लेग्रेशन' में ऐसी त्रुटियां हैं। उनमें कविजनोचित भावनाएं काफी थीं और इनका परिचय उन्होंने 'सुन्दर जीवन'[5] 'सहचर ग्रैम्पटन' और 'जुलाहा'[6] नामक रचनाओं में यत्र-तत्र स्फुट पद्यों द्वारा भली भांति दिया है। 'जुलाहा' नामक रचना में शैलिपक उत्क्षेपन है—इसमें भावनाओं का उग्र विकास है और व्यंग तथा उच्चाभिलाषा भी सन्निविष्ट हैं। इस पुस्तक को गर्हार्ट हॉप्टमैन ने अपने पिता को समर्पित करते हुए लिखा है: "प्यारे पिताजी, आप जानते हैं कि किन भावनाओं से प्रेरित होकर मैं यह पुस्तक आपको समर्पित कर रहा हूं, अतः मुझे उसका विवरण यहां लिखने की आवश्यकता नहीं है। आप मेरे दादा की (जो अपनी युवावस्था में करघे पर बैठकर इस पुस्तक में वर्णित दरिद्र जुलाहों की भांति कपड़ा बुना करते थे) जो कहानियां सुनाया करते थे, वही मेरे इस नाटक में हैं—इसमें जीवन की जो शक्ति या पतन है, वह उसी रूप में है।"

१८८९ ई० में बर्लिन में एक सामाजिक नाट्यशाला स्थापित हुई थी जिसमें प्रसिद्ध

---

१. The Fate of the Children of Prometheus २. Before Dawn
३. Lonely Lives
४. The Weavers and Michail Kramer ५. The Lovely Lives
६. The Weaver

नाटककारों की कृतियां रंगमंच पर लाई गईं। इस संस्था के संचालक ओटो ब्राम, मैक्स मिलियन हार्डेन, थ्योडोर वुल्फ आदि थे। हॉप्टमैन की अनेक रचनाएं इस नाट्यशाला के रंगमंच पर आईं जिनमें से आठ[1] के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनमें से पहला नाटक 'प्रभात के पूर्व' सिलीसियन पर्वत पर लिखा गया था और पहले-पहल १८८९ ई० में बर्लिन में रंगमंच पर आया। इसमें दुराचारी पिता और उसके नीच साथी लड़की की अप्रतिष्ठा करना चाहते हैं और लड़की आत्मरक्षा के लिए उनको जान से मारने में सफल होती है। कथानक दुःखान्त और प्रतारणा एवं प्रत्याख्यान से भरा हुआ है।

'जुलाहा' में नाट्यकला का प्रस्फुटन अपेक्षाकृत सुन्दर रूप में हुआ है। इसमें कोई व्यक्ति प्रधान अभिनय नहीं करता—जुलाहों का झुण्ड सन्धि के समय पर सामूहिक रूप से जो कुछ करता है, वही इसका प्रधान अभिनय है। इसमें पूंजीपतियों के वैभवपूर्ण जीवन और जुलाहों की दरिद्रतापूर्ण अवस्था का मार्मिक चित्रण किया गया है। साथ ही सरकार की इसके प्रति उदासीनता, और लोभ के शिकार बने हुए लोगों की शैल्पिक दासता का भी दिग्दर्शन कराया गया है। दूसरे अङ्क में यह दिखलाया गया है कि बुड्ढे ऐन्सोर्ज को इस बात का विश्वास नहीं होता कि यदि उन (जुलाहों) की दशा का समाचार सम्राट् तक पहुंचाया गया तो वह उनका दुख नहीं मेटेगा। जेगर उस (बुड्ढे) से कहता है कि सम्राट् तक समाचार पहुंचाना व्यर्थ है। वह बुड्ढा जुलाहा जब अपने उस करघे के प्रति अनुराग प्रदर्शित करके शोकाकुल होता है, जिसपर ४० वर्ष तक वह काम करता रहा है, और जिससे अब पूंजीपतियों की क्रूरता के कारण पृथक् होना पड़ रहा है, तो दर्शकों और पाठकों के हृदय में करुणा का स्रोत उमड़ पड़ता है।

इसी प्रकार उनके दूसरे नाटक 'एजम्पशन आफ़ हनेले' की भी जर्मनी में खूब चर्चा हुई और अमेरिका में उनका यह खेल रंगमंच पर भी खेला गया। वहां के लोग पहले हॉप्टमैन के पूंजीवाद-विरोधी विचारों के कारण बहुत रुष्ट थे और इनके खेल का बहिष्कार करनेवाले थे, पर बाद में खेल शान्तिपूर्वक समाप्त हो गया। बाद में इनका 'जुलाहा' भी अमेरिका में अच्छा चला, किन्तु अमेरिका जैसे देश में ये दुःखान्त और समस्या-युक्त नाटक उस समय आशातीत सफलता नहीं प्राप्त कर सके।

इनकी दो रचनाओं 'एजम्पशन ऑफ हनेले' और 'संकेन बेल' के अंग्रेज़ी अनुवाद चार्ल्स हेनरी मेलजर ने किए थे। जिस समय इनके खेलों के विरुद्ध आन्दोलन शुरू हुआ तो बेचारे अनुवादक पर भी लोगों की कोप-दृष्टि हुई—यहां तक कि उस अभिनेत्री पर भी लोग बहुत क्रुद्ध हुए जिसने उनके नाटक में प्रधानपात्री के रूप में अभिनय किया था।

उपर्युक्त घटना के अठारह वर्ष पश्चात् स्वीडिश एकेडमी ने हॉप्टमैन को जगद्विख्यात् नोबल पुरस्कार देकर सुप्रसिद्ध और प्रतिष्ठित लेखक बना दिया। फिर तो पाठकों

---

१. Before Dawn, College Crampton. Florian Geyear, The Festival of Peace, Lonely Lives, The Weavers, The Beaver Coat, The Assumption of annele.

का अनुराग उनकी रचनाओं की ओर बढ़ता ही गया और हॉप्टमैन की दो कविताओं 'स्वप्न काव्य'[1] और 'अजनबी'[2] पर उन्हें जर्मनी का ग्रिलपार्ज़र-पुरस्कार भी मिला। दो वर्ष बाद उन्होंने जीवन के तथ्य और रहस्यमय आकर्षण पर एक और नाटक लिखा जिसका नाम 'परी-नाटक'[3] रखा। इस रचना ने उनके आलोचकों को विश्वास दिला दिया कि उनमें नाट्य-रचना की अद्भुत क्षमता है।

'संकेन बेल' नामक नाटक का आधार जर्मनी की ट्यूटानिक पुराण-कथा है—इसमें घंटी बनानेवाले और उसकी स्त्री, एक दुर्दान्त प्रेतात्मा, पुरोहित और अध्यापक का चित्रण अन्य आलंकारिक पात्रों के साथ सुन्दर रूप में किया गया है। इसमें हीनरीच घंटीवाले को सत्य और ज्ञान का खोजी और जिज्ञासु बनाया गया है—रॉटेंडलीन को प्रकृति का रूपक बनाया गया है जो स्वतन्त्रता प्रदान करता है। इसी प्रकार विटिकिन जीवन के तत्त्वज्ञान का व्यक्तीकरण करता है और वह पुरोहित के दिखाऊ सिद्धान्तों का विरोधी है, क्योंकि वे (सिद्धान्त) उच्चादर्श के मार्ग में बाधक हैं। हीनरीच अपना आदर्श प्राप्त करने में असफल होता है। वह ईसाई धर्म द्वारा प्रचारित सत्य के पालन में सफलता नहीं प्राप्त कर सकता, क्योंकि वह मानवीय कमजोरियों का शिकार होता है। घंटीवाला संसार-भर में घूमता फिरता है—उच्च पर्वत-शिखरों के विपुल प्रकाश और ध्वनि में भी वह नहीं ठहरता; पर उनका प्रभाव उसके चित्त पर पड़ता है। वापस आने पर पुरोहित जब उसकी अभ्यर्थना करता है, तो घंटीवाला जिज्ञासु कहता है:

"मैं वही हूं, किन्तु मेरा रूप बदल गया है। दरवाजा खोल दो और अंदर प्रकाश को आने दो।"

इस नाटक के प्रदर्शन में बहुत अधिक सफलता इसलिए नहीं मिली कि इसमें रूपक और अध्यात्मवाद का बाहुल्य है। इसलिए दर्शकों की अपेक्षा विचारकों को इसमें अधिक आनन्द आता है। इनका 'हेनरी ऑफ आउ' नामक नाटक १९०२ ई० में प्रकाशित हुआ था। इसे 'संकेन बेल' का उपसंहार कह सकते हैं। इसमें दिखाया गया है कि जिस समय हीनरीच उन्नति की चरम सीमा पर पहुंचता है, तो ईश्वर के प्रति धृष्टता करने के कारण उसे कुष्ठ रोग हो जाता है और उस रोग से उसे आरोग्य-लाभ तब होने लगता है जब वह अपनी निराशा और घृणापूर्ण आत्मा को प्रकृति और जीवन की दातव्यता स्वीकार करने में लगाना आरम्भ कर देता है। इसमें हीनरीच, हर्टमैन वान-आउ, गॉटफ्रीड, ब्रिगिटा और किसान की लड़की ऑटेजेब का चरित्र सुन्दर रूप में चित्रित किया गया है। नायक के आरोग्य-लाभ में इस कृषक-बालिका का विशेष प्रभाव दिखाया गया है। नाटकीय कला की दृष्टि से यह नाटक 'संकेन बेल' या 'हैनेल' के टक्कर का नहीं है; किन्तु इसमें पात्रों की दशा ऐसी चित्रित की गई है जिसके कारण पाठक और दर्शक आलोडित हो उठते हैं—कुष्ठ रोग के कारण हीनरीच की दुर्दशा पाठकों की सहानुभूति

---

१. Dream Poem २. The Stranger
३. A Fairy Tale Play

अपनी ओर खींचती है और अन्त में प्रेम के द्वारा पुनरुद्धार का दृश्य उपस्थित किया जाता है।

नोबल पुरस्कार प्राप्त करने के बाद हॉप्टमैन ने अनेक नाटक और उपन्यास लिखे, जिनमें तथ्यवाद और आदर्शवाद का सुन्दर सम्मिश्रण है। 'पर्सीवल' नामक नाटक में मानवता की अन्तर्दृष्टि के साथ-साथ नैतिकता और धार्मिकता का भी पुट है। 'एण्ड पिप्पा डांसेज', 'एलगा', और 'पोएट लोर' भी बाद के ही लिखे हुए हैं।

कई लेखकों ने हॉप्टमैन की तुलना जान गॉल्सवर्दी से की है—इन दोनों के जीवन और रचनाओं में काफी सादृश्य पाया जाता है। 'हैनेल' की तुलना 'दि लिटिल ड्रीम' से 'माइकेल क्रेमर' की 'ए बिट आफ़ लव्ह' से और 'दि वीवर्स' (जुलाहा) की 'स्ट्राइक'[1] से की गई है। दोनों ही नाटककार सामाजिक बन्धन का अतिक्रमण करते हैं, दोनों ही सामाजिक समस्याओं को सुलझाने की चेष्टा करते हैं और दोनों ही की विचार-सरणि तथ्यवादिता की ओर झुकी हुई है—दोनों ही ने सदाचार का मूल्य बढ़ाया है। हॉप्टमैन ने पात्रों के चित्रण में अधिक दिलचस्पी ली है और गॉल्सवर्दी ने पात्रों के सम्बन्धों के चित्रण में। दोनों ही लेखक आदर्शवादी हैं और वे भौतिक एवं आध्यात्मिक सत्य का अन्वेषण करते हैं।

हॉप्टमैन की अन्तिम रचनाओं में 'ए विण्टर बैलाड' और 'दि फेस्टिवल प्ले' अधिक उल्लेखनीय हैं। अंग्रेजी के पाठकों ने हॉप्टमैन के उपन्यास अधिक पसन्द किए हैं और उनकी 'दि फूल इन दि क्राइस्ट', 'एटलांटिस', 'फैण्टम' और 'हेरेटिक ऑफ़ सोवाना' आदि रचनाएं अधिक पढ़ी जाती हैं। इनमें चरित्र-चित्रण अधिक जानदार और व्यंगपूर्ण है। सामाजिक समस्याओं को हॉप्टमैन प्रायः सर्वत्र सुलझाते हैं। 'दि आइलैण्ड ऑफ दि ग्रेट मदर' उनके बाद के उपन्यासों में से है। इनका देहान्त १९४६ ई० में हुआ। नये लेखकों पर उनकी रचनाओं का काफी प्रभाव मालूम होता है। उनके 'दि हेरेटिक ऑफ सोवाना' को संसार की आधुनिक रचनाओं में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त हुआ है और उनके सभी समकालीन लेखक इस बात को स्वीकार करते हैं कि उनकी यह रचना उत्कृष्ट कोटि की है।

---

१. जान गॉल्सवर्दी के इस नाटक का अनुवाद हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद ने 'हड़ताल' के नाम से प्रकाशित किया है।
—लेखक

# श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर

१९१३ ई० का नोबल पुरस्कार भारत के महाकवि श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर को मिला। पुरस्कार-पत्र में इनकी रचनाओं की विशेषता का वर्णन करते हुए लिखा गया है कि इनकी काव्य-रचना की आभ्यन्तरिक गहराई और उच्च उद्देश्य ऐसे हैं तथा प्राच्य विचारों को इन्होंने पाश्चात्य वर्णन-शैली में ऐसी सुन्दरता और नवीनता के साथ व्यक्त किया है कि वे वास्तव में नोबल पुरस्कार पाने के अधिकारी थे।

श्री रवीन्द्रनाथ का जन्म ६ मई, १८६१ ई० को कलकत्ते के जोड़ासांको भवन में हुआ था। उनका घराना प्राचीन काल से ही सम्पन्न माना जाता है और उनके यहां पूर्वकाल से लक्ष्मी के साथ-साथ सरस्वती की भी उपासना होती आई है। उनके पितामह द्वारकानाथ ठाकुर तथा पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर बंगाल के प्रमुख प्रतिष्ठित व्यक्तियों में गिने जाते थे। उनकी माता का नाम शारदादेवी था।

किन्तु ठाकुर-वंश के इतना प्रतिष्ठित होते हुए भी मुसलमानी नवाबों के साथ घनिष्ठता होने के कारण उसका तत्कालीन ब्राह्मणसमाज ने पतित कहकर बहिष्कार कर दिया था और समाज में पतित समझे जाने के कारण जिस समय राजा राममोहन राय ने ब्राह्मसमाज की स्थापना की, उस समय इस घराने ने समाज के प्रति विद्रोहात्मक भावना रखने के कारण तत्काल उसमें भाग लिया और समाज में दबकर रहने के बदले इसने नई स्फूर्ति प्राप्त की। सामाजिक बाधा न होने के कारण ठाकुर-परिवार विलायत-यात्रा आदि की सुविधा सर्वप्रथम प्राप्त कर सका और इसीसे धर्म, दर्शन, विचार-स्वातन्त्र्य, साहित्य, संगीत और कला के सम्बन्ध में उनके विचार नई और क्रान्ति-युक्त भावना के प्रतिपादक बने।

ठाकुर-वंश भट्ट नारायण की सन्तान है। भट्ट नारायण बंगाल के निवासी नहीं थे, वरन् वे उन पंच कान्यकुब्जों में से थे जिन्हें आदिशूर ने कन्नौज से बुलाकर बंगाल में बसाया था और वहां पर्याप्त सम्पत्ति प्रदान कर प्रतिष्ठित किया था। पहले उनके वंश की अल्ल 'ठाकुर' नहीं थी; पर जब वे लोग यशोहर से आकर गोविन्दपुर में बस गए तो वहां के पार्श्ववर्ती निम्न जाति के लोग इन्हें 'ठाकुर' कहकर पुकारने लगे, जो बंगाल में ब्राह्मणों के लिए एक प्रचलित सम्बोधन है।

रवीन्द्रनाथ का बचपन बड़े ही स्वाभाविक वातावरण में व्यतीत हुआ था। वे

प्रारम्भ में ओरियण्टल सेमीनरी में पढ़ने के लिए भर्ती किए गए। वहां बच्चों पर जितना शासन था, उसे देखकर बालक रवीन्द्र घबरा उठे और उन्होंने वहां से अपनी जान छुड़ाई। इसके बाद उन्हें नॉर्मल स्कूल में भर्ती करा दिया गया। वहां बच्चों से अंग्रेजी गान गवाया जाता था। उन्हें यह बात पसन्द नहीं आई। एक शिक्षक के अपशब्द कहने पर रवि बाबू इतने अप्रसन्न हो गए कि उनसे कभी बात तक नहीं की।

सात वर्ष की अवस्था में ही बालक रवीन्द्र ने कविता लिखनी शुरू कर दी थी। अंग्रेजी पढ़ने में इनका मन नहीं लगता था और ये कविता लिखने की ओर अधिक झुकने लगे। नॉर्मल स्कूल से छुड़ाकर इन्हें 'बंगाल एकेडमी' नामक एंग्लो इण्डियन लड़कों के स्कूल में भर्ती किया गया। रवि बाबू को आधुनिक पाश्चात्य विद्वानों ने 'नदी का कवि' कहा है। वास्तव में बालक रवीन्द्र का बचपन प्रकृति के निकट और नदी के किनारे अधिक व्यतीत हुआ है, इसीलिए उनकी कविता पर प्रकृति की छाप है और स्थल-स्थल पर नदी का सौन्दर्य और उसके प्रवाह एवं तरंगों की मनोहरता दीखती है।

जिस समय रवीन्द्रनाथ की अवस्था पन्द्रह वर्ष की थी उस समय उनकी कविता 'भारती' में निकलने लगी थीं। 'भारती' में उनकी सर्वप्रथम कृति 'कवि-कथा' नाम से निकली थी, जो पीछे पुस्तकाकार छपी। कुछ दिनों बाद 'वन-फूल' नाम से उनका दूसरा काव्य-संग्रह प्रकाशित हुआ। बीस वर्ष की अवस्था होने के पूर्व ही उन्होंने 'गाथा' नामक पुस्तक लिखी जो खण्ड-काव्य है। इन्हीं दिनों उन्होंने 'भानुसिंहसंगीत' के बीस गाने भी लिख डाले थे। बीस वर्ष की अवस्था में रवि बाबू का यथार्थ साहित्यिक जीवन आरम्भ हो गया।

पहली बार सोलह वर्ष की अवस्था में ही २० सितम्बर, १८७७ ई० में वे विलायत गए और १८७८ ई० के नवम्बर मास में भारत लौटे। उन्होंने अपने यूरोप-भ्रमण का वृत्तान्त 'भारती' में प्रकाशित कराया था जिससे यह मालूम होता है कि वह यात्रा उन्हें रुची नहीं।

इसके पश्चात् उनका 'करुणा' नामक उपन्यास प्रकाशित हुआ और उसके कुछ ही दिनों बाद 'भग्न-हृदय' नामक पद्यबद्ध नाटक भी छपा। इन दोनों रचनाओं में संसार के दुःख और दाह का सुन्दर चित्रण है। तेईस वर्ष की अवस्था तक रवि बाबू कोई उद्देश्य स्थिर नहीं कर सके थे और उनका मन भी चंचल रहता था। १८८१ ई० से उनका मन स्थिर हुआ और १८८७ ई० तक उन्होंने सुन्दर रचनाएं कीं। उन दिनों जब उनकी 'सन्ध्या-संगीत' प्रकाशित हुई तो समस्त बंगाल में इनकी कीर्ति व्याप्त हो गई। इनकी नवीन कविता और नवीन विचारधारा ने सबको अपनी ओर आकृष्ट कर लिया। 'वाल्मीकि-प्रतिभा' और 'काल-मृगया' नामक दो संगीत-काव्य भी उन्हीं दिनों लिखे गए।

'सन्ध्या-संगीत' लिखते समय रवि बाबू का विचार प्रभात-संगीत लिखने का भी था और बाद में चलकर उन्होंने 'प्रभात-संगीत' लिखा भी। 'प्रभात-संगीत' ने बंग-

साहित्य में धूम मचा दी और बहुतों ने उनकी यह रचना उनकी सर्वश्रेष्ठ कृति मान ली। सभी दृष्टियों से यह उनकी अनूठी रचना है—भाव और छन्द सभी अनोखे हैं। इसमें ओज और प्रवाह भरा हुआ है। इसके पश्चात् उनका 'विविध-प्रसंग' प्रकाशित हुआ। 'वहू ठकुरानीर हाट' भी उन्हीं दिनों की रचना है।

१८८३ ई० में रवि बाबू कुछ दिनों के लिए करवार नामक पश्चिमी उपकूल में रहे। यहां उन्होंने सुख और शान्तिपूर्वक जीवन व्यतीत किया। यहां का प्राकृतिक दृश्य उन्हें बहुत भाया। इसी साल दिसम्बर मास में इनका विवाह हो गया।

'प्रकृतिर परिशोध' लिखने के पश्चात् जिन दिनों वे कलकत्ते आकर रहने लगे, उन्हीं दिनों उन्होंने 'छवि ओ गान' नामक पुस्तक लिखी। निर्धन गृहस्थों का जीवन और उनकी दैनिक स्थिति देखकर कवि के हृदय में करुणा का ऐसा स्रोत उमड़ा कि उन्होंने उन दिनों 'नलिनी' नामक दुःखान्त नाटक लिख डाला। दूसरा दुःखान्त नाटक 'मायार खेल' भी इसी प्रसंग को लेकर लिखा गया था।

उन दिनों 'आलोचना' नामक पत्रिका में इनके कई निबन्ध प्रकाशित हुए जिनसे उनकी समालोचना-शक्ति का पता लगता है। उन्हीं दिनों उनका 'राजर्षि' नामक उपन्यास भी प्रकाशित हुआ जो पीछे से नाटक के रूप में बदलकर 'विसर्जन' के नाम से प्रकाशित किया गया। उन दिनों बंगाल में बंकिम बाबू की धाक जमी हुई थी। उनकी प्रतिभा से रवि बाबू भी आकर्पित हुए। रवि बाबू की बंकिम बाबू से मित्रता हो गई, किन्तु कुछ ही दिनों बाद दोनों में घोर विवाद आरम्भ हुआ। रवि बाबू ने 'हिन्दू-विवाह' पर जो वक्तृता दी उससे दोनों में विवाद खड़ा हो गया। यह बात १८८७-८८ ई० की है। इन दिनों एक कविता लिखकर रवि बाबू ने 'बाल-विवाह' की अच्छी खबर ली थी।

१८८७ ई० में रवि बाबू गाजीपुर (संयुक्त प्रांत) गए और वहां के प्राकृतिक दृश्यों से आकर्पित होकर उन्होंने 'मानसी' के अधिकांश पद्य वहीं लिखे। 'मानसी' भाव एवं रस की दृष्टि से विविधात्मक है—इसमें 'भैरवी' जैसी भाव-प्रवण कविता है और 'गुरु गोविन्द' एवं 'सूरदासेर प्रार्थना' जैसी शान्तरस की कविताएं भी। इनमें हास्य-रस की कविता का भी अभाव नहीं है—'बंगवीर' इसका एक उत्तम उदाहरण है।

'मानसी' के पश्चात् रवि बाबू का 'राजा ओ रानी' प्रकाशित हुआ। यह रवि बाबू के उच्चकोटि के नाटकों में गिना जाता है। गाजीपुर से लौटने के बाद रवि बाबू ने पिता की आज्ञानुसार अपनी जमींदारी की देख-भाल शुरू कर दी। उस समय रवि बाबू की अवस्था २३ वर्ष की हो चुकी थी। उन दिनों रवि बाबू राष्ट्रीय ढंग की शिक्षा देने के सम्बन्ध में निबन्ध लिखने लगे और देश को नये ढंग से शिक्षित करने के आन्दोलन में लग गए। उनके भाषण 'भारती' में प्रकाशित होने लगे और वे राज-नीतिक और दार्शनिक भावनाओं के केन्द्र-से बन गए। जमींदारी का कार्य करते समय उन्हें नौका पर अपनी जमींदारी में एक स्थान से दूसरे स्थान को जाना पड़ता था।

इससे उन्होंने बहुत-से प्राकृतिक दृश्य देखे और प्रजा की वास्तविक अवस्था का निरीक्षण किया। नदी के सम्बन्ध में कवि ने जो कविताएं लिखी हैं, वे पद्मा नदी के पर्यवेक्षण के फलस्वरूप लिखी गई प्रतीत होती हैं।

ज़मींदारी के प्रबन्ध में लगे रहने पर भी उन्होंने लिखना जारी रखा और 'चित्राङ्गदा' नाटक इन्हीं दिनों में तैयार कर लिया। सौन्दर्य की दृष्टि से इसके जोड़ का दूसरा नाटक रवि बाबू ने नहीं लिखा। इस नाटक का अंग्रेज़ी अनुवाद भी प्रकाशित हुआ और इसकी खूब चर्चा हुई। बंगाल के प्रसिद्ध कवि और नाटककार स्वर्गीय श्री० द्विजेन्द्रलाल राय ने इसकी आलोचना करते हुए लिखा कि 'चित्राङ्गदा' का सौन्दर्य-वर्णन आदर्श की दृष्टि से हेय और भ्रष्ट है, क्योंकि इसमें पौराणिक भावनाओं की रक्षा करने का विचार रवि बाबू ने बिलकुल नहीं किया। इसके पश्चात् 'सोनार तरी' नामक छायावादात्मक काव्य प्रकाशित हुआ। इसमें रवि बाबू ने एक नवीन विचारधारा प्रवाहित की। कुछ दिनों बाद 'चित्रा' प्रकाशित हुई—इसमें सौन्दर्य का चरम विकास हुआ है। 'उर्वशी' नामक कविता की तो इतनी ख्याति है कि इसकी गणना संसार की सर्वोत्कृष्ट रचनाओं में की जा सकती है।

१८९५ ई० में उनकी 'साधना' प्रकाशित हुई। इसके बाद ही 'चैताली' मुद्रित हुई। १९०० ई० तक इनकी तीन और प्रसिद्ध पुस्तकें—'कल्पना', 'कथा-काहिनी', और 'क्षणिका'—निकलीं।

१९०१ ई० में रवि बाबू 'बंग-दर्शन' के सम्पादक हुए। उसमें उन्होंने फिर से जान डाल दी। उसी वर्ष बोलपुर शान्ति-निकेतन की नींव पड़ी और फिर रवि बाबू अपना अधिकांश समय वहीं व्यतीत करने लगे। कलकत्ता विश्वविद्यालय की शिक्षा-प्रणाली से घृणा करके उन्होंने अपना यह शान्ति-निकेतन पूर्णतः भारतीय संस्कृति के अनुकूल स्थापित किया।

१९०१ ई० से १९०७ ई० तक रवि बाबू ने उपन्यास लिखने की ओर विशेष मनोयोग दिया। १९०२ ई० में उनकी स्त्री का देहान्त हो गया। इन्हीं दिनों आपने 'गोरा' नामक उपन्यास लिखा और अपने छोटे बच्चे को बहलाने के लिए उन्होंने 'कथा' और स्त्री के वियोग में 'स्मरण' लिखा।

१९०३ ई० में अंग्रेज़ी में 'दि रेक' प्रकाशित हुआ और १९०४ ई० में उनके देश-भक्तिपूर्ण पद्यों का संग्रह। १९०५ ई० में 'खेया' निकली। इन्हीं दिनों उनके छोटे लड़के की मृत्यु हो गई।

१९०५ ई० जब बंग-भंग का आन्दोलन शुरू हुआ, उन दिनों रवि बाबू के गीत बंगाल के युवक-वृन्द में खूब विख्यात हो गए और रवि बाबू ने बहुत-से राजनीतिक लेख भी लिखे।

रवि बाबू केवल कवि ही नहीं हैं, वे दार्शनिक, वक्ता, लेखक, नाटककार, उपन्यासकार, समालोचक, सम्पादक और अध्यापक भी हैं। अपने सुशिक्षित कुटुम्ब के

व्यक्तियों के ही लेखों से संयुक्त आपने 'भारती' नामक साहित्य-पत्रिका निकाली और उसका सम्पादन स्वयं करने लगे। 'बंग-दर्शन', 'प्रवासी' और 'भारतवर्ष' में भी आपके लेख और कहानियां प्रकाशित होती रहीं। आपकी कृतियों से समस्त बंगाल में नव-जीवन का संचार हो गया।

बंगला में यशस्वी हो चुकने के बाद आपने अंग्रेज़ी में भी लेख, कहानियां और कविताएं लिखनी शुरू कर दीं। इससे सारे भारत और विदेशों तक में उनका नाम फैल गया। अंग्रेज़ी साहित्य में भी आपका खूब स्वागत हुआ। रवि बाबू के 'मॉडर्न रिव्यू' में प्रकाशित अंग्रेज़ी लेख विदेशी पत्रों में उद्धृत होने लगे। उनकी अंग्रेज़ी कहानियों का संग्रह लन्दन के एक प्रकाशक ने निकाला। बाद में मैकमिलन कम्पनी ने इनकी अंग्रेज़ी रचनाओं का विश्व-अधिकार ले लिया और पीछे उनके उपन्यास, नाटक और कविता-ग्रन्थ इसी कम्पनी ने प्रकाशित किए।

शान्ति-निकेतन की सुव्यवस्था करने के बाद रवि बाबू फिर साहित्य-सेवा में लग गए। उन्होंने पुनः विदेश-भ्रमण की तैयारी कर दी। अपने जिस अध्यात्म-प्रेम के कारण वे पहले से प्रसिद्ध हो चुके थे, उसका परिचय उन्होंने 'गीताञ्जलि' लिखने में दिया। वास्तव में उनका यही ग्रन्थ-रत्न उन्हें नोबल पुरस्कार दिला सका। गीताञ्जलि क्या थी, यह बंगाल की गीता बनकर निकली। घर-घर में इसका पाठ होने लगा। रवि बाबू के मित्र श्री० सी० एफ० एण्ड्रयूज़ ने इसे सुना तो मुग्ध हो गए। इसका अंग्रेज़ी अनुवाद करने के लिए रवि बाबू को उन्होंने ही प्रेरित किया। पुस्तक अंग्रेज़ी में ज्यों ही प्रकाशित हुई त्यों ही रवि बाबू की गणना संसार की उच्चतम विभूतियों में हो गई। सभी देशों के पत्रों में इस रचना की चर्चा हुई। यूरोप की विख्यात साहित्यिक परिषदों ने इसको नोबल पुरस्कार के योग्य बतलाया और अन्त में १९१३ ई० में रवि बाबू को यह पुरस्कार मिल गया।

इस पुरस्कार के बाद रवि बाबू का नाम तो हुआ ही, साथ ही भारत का भी संसार में अच्छा मान हुआ। संसार की सभी उन्नत भाषाओं में गीताञ्जलि का अनुवाद प्रकाशित हो गया और विदेशियों ने भी देखा कि भारतीय प्रतिभा कैसी होती है। अमेरिका, जापान, चीन, जर्मनी, स्विट्ज़रलैण्ड, इटली, फ्रांस और इंग्लैण्ड की साहित्यिक संस्थाओं ने उन्हें आमन्त्रित किया और रवि बाबू को अनेक बार विदेश-यात्रा करनी पड़ी। विदेशों में व्याख्यान देकर रवि बाबू ने अपने आध्यात्मिक ज्ञान की धाक जमा दी।

गीताञ्जलि के कुछ पदों का हिन्दी-अनुवाद यहां देकर पाठकों को रवि बाबू के आध्यात्मिक ज्ञान और उनकी प्रतिपादनशैली का परिचय करा देना अनुचित न होगा। अंग्रेज़ी गीताञ्जलि के दो पदों का अनुवाद नीचे दिया जाता है :

*तेरी अनुकम्पा*

तूने मुझे अनन्त बनाया है, तेरी ऐसी लीला है। तू इस नश्वर पात्र —शरीर—

को बार-बार रिक्त करता है और सदा इसे नवजीवन से भरता रहता है।

तूने बांस की इस छोटी-सी बांसुरी को पर्वतों और घाटियों पर फिराया है और तूने इससे ऐसी मधुर तानें अलापी हैं जो नित्य नूतन हैं।

मेरा यह छोटा-सा हृदय तेरे अमृतमय हस्त-स्पर्श से अपने आनन्द की सीमा को मिटा देता है और फिर उसमें ऐसे उद्‌गार उठते हैं जो अवर्णनीय हैं।

तेरे अपरिमित दानों की, मेरे इन क्षुद्र हाथों पर, सदैव वर्षा होती रहती है। युग पर युग बीतते जाते हैं और तू उन्हें बरसाता जाता है फिर भी उन्हें भरने के लिए स्थान खाली ही रहता है।[1]

### पूर्ण प्रणाम

हे मेरे परमेश्वर, मेरी समस्त इन्द्रियां एक ही प्रणाम में तेरी ओर लग जाएं और इस विश्व को तेरे चरणों पर पड़ा जानकर उससे संसर्ग करें।

जिस प्रकार सावन-घन बिन बरसे हुए जल के भार से नीचे की ओर झुक जाता है, वैसे ही मेरा सारा मन एक ही प्रणाम में तेरे द्वार पर झुक जाए।

हे प्रभु, मेरे समस्त गानों की विचित्र राग-रागिनियों को एक धारा में एकत्र होने दे और एक ही प्रणाम में उन्हें शान्ति-सागर की ओर प्रवाहित कर दे।

जिस प्रकार अपने वास-स्थान के वियोग से व्याकुल हंसों का झुण्ड अहर्निशि अपने पर्वतीय निवास की ओर उड़ता हुआ लौटता है, उसी प्रकार मेरी आत्मा को एक ही प्रणाम में अपने सनातन के वास-स्थान की ओर उड़ने दे।[2]

जिस समय रवि बाबू देश और विदेश में विख्यात हो गए, उस समय भारत सरकार का ध्यान उनकी ओर आकर्षित हुआ, और उसने उन्हें 'सर' की उच्च उपाधि से विभूषित किया।

रवि बाबू कवि ही नहीं, गायक भी थे और वे अपने पदों को जिस लालित्य के साथ गाते थे, वह अपने ढंग की अद्वितीय शैली थी। उन्होंने अपने नाटकों में प्रधान पात्र का पार्ट भी किया था।

नीचे कवीन्द्र रवीन्द्र के दो पद्य उद्धृत किए जा रहे हैं—

अन्तर मम विकसित करो
अन्तरतर हे !
निर्मल करो, उज्ज्वल करो
सुन्दर करो हे !
जाग्रत करो, उज्ज्वल करो
निर्भय करो हे !

---

१. गीताञ्जलि का प्रथम पद।
२. गीताञ्जलि का अन्तिम पद।

मंगल करो, निरलस करो
निःशंसय करो हेऽ !

× × ×

मेघेर परे मेघ जमे छे,
आंधार करे आसे—
आमाय केनो वसिये राखो
एका द्वारेर पासे।
काजेर दिने नाना काजे
थाकि नाना लोकेर माझे
आज आमिजे बसे आछि
तोमार आश्वासे। आमाय...
तुमि यदि ना देखा दाओ
करो आमाय हेला,
केमन करे काटे आमार
एमन बादल - वेला।
दूरेर पाने मेले आंखि,
केवल आमि चेये थाकि
परान आमार केंदे वेड़ाय
दुरन्त वातासे। आमाय...[1]

रवि बाबू सामाजिक और राजनीतिक सुधार के पक्षपाती थे और उन्होंने अपने

---

१. इनमें प्रथम पद्य तो बंगला में होते हुए भी हिन्दी वालों के लिए स्पष्ट है; पर दूसरे पद्य का हिन्दी अनुवाद 'जीवन-साहित्य' और श्री मदनलाल जैन की अनुकम्पा से यहां दिया जा रहा है—

जमे मेघ पर मेघ-तिमिर,
सब घनीभूत हो आए—
द्वार अकेली बैठी हेर—
क्यों ना साजन आए।
तुम दर्शन नहीं दो यदि
प्रियतम! करो मेरी अवहेला।
तो फिर कैसे कटे बताओ
ऐसी बादल बेला।
दूर क्षितिज तक आंख पसारे
बाट संजोया करती।
चंचल पवन सुगन्ध बाहो रे,
धीर दिरोधा करो।

परिवार में ये दोनों ही भावनाएं भरी थीं। देश-प्रेम प्रदर्शित करने में आपने कभी पीछे पांव नहीं रखा। १६१८ ई० में जब भारत सरकार ने महायुद्ध में अत्यन्त कुर्बानी के साथ भाग लेने पर भी रोलट ऐक्ट पास करके भारतीयों को दुखी किया और नौकरशाही ने पंजाब में हत्याकाण्ड करके भारतीयों के साथ पशुतापूर्ण व्यवहार किया, तो रवि बाबू से यह नही देखा गया और उसके विरोधस्वरूप उन्होंने अपनी 'सर' की उपाधि सरकार को लौटा दी और भाषणों तथा लेखों में इन कुकृत्यों की घोर निन्दा की।

वृद्धावस्था में भी रवि बाबू साहित्य-सेवा में लगे रहे और देश-विदेश घूमकर भारत का नाम करने में उन्होंने आलस्य नही किया। सन् १६४१ में इस मनीषी का स्वर्गवास हो गया।

# रोम्यां रोलां

१९१४ ई० में साहित्यिक नोबल पुरस्कार किसीको भी नहीं प्रदान किया गया। और उसकी निधि सुरक्षित कोश में रख दी गई। १९१५ ई० के पुरस्कार-विजेता फ्रांस के नामी विचारक और 'जां क्रिस्तोफ़' के रचयिता रोम्यां रोलां हुए। इनके नाम की घोषणा प्रकाशित होने पर साधारणतः सभी साहित्यिकों ने प्रसन्नता प्रकट की। केवल इसी एक पुस्तक (जां क्रिस्तोफ़) पर उन्हें पुरस्कार मिला और निर्णयकर्ताओं की तथा पाठकों की दृष्टि इसी एक रचना पर विशेष रूप से आकर्षित हुई। रोम्यां रोलां की यह रचना फ्रेंच भाषा में क्रमशः १९०४ ई० से १९१२ ई० तक प्रकाशित हुई थी और अनेक भाषाओं में अनूदित होकर आलोचकों को आकर्षित कर चुकी थी। लोग इसे सामाजिक दशा का आईना कहने लगे। इस ग्रन्थ मे जीवन, संगीत, भावना, संघर्ष, प्रेम, पराजय, विद्रोह, मित्रता और दुःखद किन्तु विजयी अन्त का दिग्दर्शन अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से वर्णित है। स्टीफन ज़्विग नामक लेखक ने रोम्यां रोलां की जीवनी लिखते हुए कहा है कि पचास वर्ष की अवस्था तक तो रोम्यां रोला चुपचाप अध्ययन करने और संगीत का आनन्द लेने में लगे रहे; किन्तु सहसा इस पुस्तक के प्रकाशन ने उन्हें साहित्यिक क्षेत्र में प्रख्यात बना दिया।

रोम्यां रोलां का जन्म २९ जनवरी, १८६६ ई० में फ्रांस के क्लेमसी नामक छोटे-से कस्बे में हुआ था। इनके पिता ऑनरेरी मजिस्ट्रेट थे और इनकी मां एक मजिस्ट्रेट की कन्या। उनकी मां संगीतज्ञा और धर्म-परायणा थीं। वे अपने छोटे लड़के मेडेलेन को बहुत प्यार करती थीं। 'जां क्रिस्तोफ़' में उनके सुखमय घरेलू जीवन का अच्छा चित्रण किया गया है। लड़कपन से ही रोमां रोलां को संगीत में अधिक रुचि हो गई और उनकी मां ने उन्हें संगीत सिखाया तथा बड़े-बड़े संगीतज्ञों की कहानियां सुनाईं। जब उनकी स्कूली शिक्षा समाप्त हुई तो इनके पिता ने अपना काम छोड़ दिया और इनकी शिक्षा के लिए पेरिस चले गए। पेरिस में उन्होंने एक बैंक में मुहर्रिर का काम इसलिए कर लिया कि इस प्रकार वे अपने लड़के को अच्छी शिक्षा दिलवाने में सहायक सिद्ध होंगे। बीस वर्ष की अवस्था तक तो रोलां ने लीसी लुई-ली-ग्रांड (विद्यालय) में अध्ययन किया और इसके पश्चात् इकोल-नार्मल-सुपीरियर (महाविद्यालय) में प्रविष्ट हुए। यहां उन्होंने इतिहास का विशेष अध्ययन किया। जैसेन

मोनॉड नामक अध्यापक ने रोम्यां रोलां पर बहुत अधिक प्रभाव डाला। रोम्यां रोलां ने टॉल्सटॉय के प्रति विशेष अनुराग प्रकट किया और गुणग्राहक तथा समर्थक के रूप में उनके प्रति श्रद्धा रखने लगे। शेक्सपियर के भी वे बड़े प्रशंसक हो गए—विशेषकर उनके ऐतिहासिक नाटकों और प्रेम-गीतों के।

रोम्यां रोलां के समकालीन पॉल क्लॉडेल भी थे जिन्होंने कैथोलिक सम्प्रदाय का इतिहास नाटकपूर्ण ढंग से लिखा था। रोलां ने पहले ही से एक ऐसे युवक कलाविद् की कथा लिखी थी जिसने जीवन की चट्टान से चोट खाई हुई थी। उनकी यही रचना 'ज्यां क्रिस्तोफ़' नाम से प्रख्यात होकर उन्हें पुरस्कार दिलाने का कारण बनी। उन्हें नॉर्मल स्कूल की छात्रवृत्ति, फ्रेंच स्कूल के पुरातत्त्व एवं इतिहास का वजीफा प्राप्त करके प्रसन्नता नहीं हुई थी। पुरातत्त्व एवं इतिहास के लिए छात्रवृत्ति प्राप्त करके वे अध्ययन के लिए रोम गए और वहां दो वर्ष तक रहे। वहां वे मालविदावान-मेसेनबर्ग से मिले। ये महिला राजनीति, दर्शन-शास्त्र और कला में विशेषज्ञ थीं। उनके साथ रोलां 'बेरिउथ' जाकर अपना संगीत-संबन्धी ज्ञान बढ़ाने में सफल हुए। वहां एक दिन टहलते-टहलते उन्होंने 'ज्यां-क्रिस्तोफ़' का कथानक सोचा किन्तु कई वर्षों तक उन्होंने पुस्तक लिखने में हाथ नहीं लगाया।

रोम से वापस आकर आप पेरिस में नॉर्मल स्कूल के अध्यापक हो गए। इसके बाद उनका ध्यान ललित कला की ओर गया। रोम में रहते हुए उन्होंने 'आर्सिनो,' 'कैलिगुला' और 'नियोबे' नामक तीन नाटक लिखे थे, किन्तु वे अभी तक प्रकाशित नहीं हुए थे। वे उनके प्रकाशन की ओर ध्यान न देकर नार्मल स्कूल तथा अन्य संस्थाओं में संगीत के प्रति लोगों का प्रेम बढ़ाने की ओर झुके। वे संगीत-सम्बन्धी सभाओं में भाग लेने लगे और प्रख्यात संगीतज्ञों की जीवनी भी उन्होंने लिखकर प्रकाशित कराईं। उन्होंने अपनी शादी माइकेल ब्रील नामक एक भाषातत्त्व-विशारद की लड़की से की। अपनी ससुराल में इनका बड़े-बड़े साहित्यिकों, वैज्ञानिकों और कलाविदों से परिचय हो गया। उनकी स्त्री एक सुसंस्कृत लड़की थी और रोलां को जनसाधारण में संगीत-प्रचार की भावना में वह सहायक सिद्ध हुई। रोम्यां रोलां ने शिक्षा-सम्बन्धी अड़चनों और राजनीतिक प्रतिक्रियाओं के विरुद्ध आवाज उठाई। उन्हीं दिनों उन्होंने 'दैण्टन', 'फोर्टीन्थ ऑफ जुलाई'[1] 'ट्रम्फ ऑफ रीजन' और 'सेण्टलुई' की रचना की। उन्होंने उन्हीं दिनों यह आन्दोलन भी किया कि नाटकघर केवल अमीरों के लिए ही नहीं, सर्वसाधारण के लिए भी होने चाहिए। इस विषय पर लिखे हुए उनके निबन्धों का अंग्रेजी अनुवाद 'दि पीपल्स थियेटर' नाम से प्रकाशित हुआ है। उन्होंने नाटकघरों से सर्वसाधारण को तीन लाभ बतलाए हैं—(१) आनन्द-प्राप्ति, (२) शक्ति-सम्पादन और (३) ज्ञान-वर्द्धन।

---

१. इस नाटक का अनुवाद [illegible] ने 'विनाश की घड़ी' के नाम से किया है, जो पहले साहित्य-सदन, दिल्ली से प्रकाशित हुई थी।

राजनीतिक झगड़ों में जब तक व्यक्तिगत कड़ुवाहट और मतभेद नहीं उत्पन्न हुआ तब तक वे उससे पृथक् नहीं हुए किन्तु जब उन्होंने इस क्षेत्र में गन्दगी देखी तो सार्वजनिक जीवन से पृथक् होकर माइकेल एँजेलो, मिलेट तथा कुछ विख्यात संगीतज्ञों की जीवनियां लिखीं। 'जां क्रिस्तोफ़' का पहला परिच्छेद उन्होंने 'कैहियर्स-दी-ला-क्विनज़ेन'-नामक साहित्यिक पत्रिका में प्रकाशित कराया। पेरिस के माण्टपार्न नामक भवन के पांचवें तल्ले पर दो कमरे रोम्या रोलां ने अपने लिखने-पढ़ने और रहने के लिए ले रखे थे। वे वहीं पुस्तकें लिखते, पियानो बजाते, आगतों का स्वागत करते और दिल-बहलाव के लिए टहलते थे। बाहर से तो वे कुछ शान्त मालूम होते थे किन्तु भीतर ही भीतर संसार के छल-प्रपंच पर कुढ़ रहे थे। उन्होंने निष्प्राणता से मरते हुए स्वार्थपूर्ण संसार की अध्यात्मशून्यता पर 'जां क्रिस्तोफ़' में निराशा प्रकट की है और बतलाया है कि किस प्रकार केवल आध्यात्मिकता के ही द्वारा मानवता की रक्षा हो सकती है।

धीरे-धीरे बिना किसीकी सहायता के ही 'जां क्रिस्तोफ़' का नाम होने लगा और आलोचकों तथा पाठकों द्वारा उसकी खूब चर्चा होने लगी। जर्मनी के पत्रकारों ने इसके गुणों की बड़ी कद्र की। स्वीडन के लेखक पॉल सीपल ने रोम्यां रोलां की जीवनी तथा प्रारम्भिक रचनाओं पर बहुत-कुछ लिखा। जून १९१३ ई० में फ्रेंच एकैडमी ने रोम्यां रोलां को अपना महान पुरस्कार दिया। गिलबर्ट कैनन महोदय ने 'जां क्रिस्तोफ़' का अनुवाद अंग्रेज़ी में किया और फिर इसकी आलोचना अधिक होने लगी। उन्हीं दिनों रोलां ने अपने विद्यार्थी-जीवन में लिखे हुए नाटक भी प्रकाशित कराए जिनमें 'लि ट्रेजेडीज़-डी-ला फाय' अधिक विख्यात हुआ, क्योंकि वह बीसवीं सदी के लोगों के आदर्श के अनुकूल था। 'वूल्यन' का भी अंग्रेज़ी अनुवाद हो गया और वह न्यूयार्क में रंगमंच पर भी खेला गया।

रोम्यां रोलां ने संगीतज्ञों और अपने साथियों के चरित्र-चित्रण के साथ जो कहानी लिखी है उसमें उन्होंने समस्त संसार में भावना और सामंजस्य की परिव्याप्ति के लिए चेष्टा की है तथा स्थानीय वातावरण में भी उसकी अनुभूति का उपदेश किया है। इस कहानी में नायक अपनी भावना से प्रेरित होकर सारे संसार में अन्वेषणात्मक दृष्टि से घूमता-फिरता है। वह विभिन्न देश और जाति के लोगों से मिलना चाहता है। वह बीथोवेन, वागनर और ह्यूगो वुल्फ़ आदि कई संगीतज्ञों के वास्तविक जीवन का अनुभव प्राप्त करना चाहता है। वह आदर्शवाद और मानवता में विश्वास का झण्डा ऊंचा रखना चाहता है। लेखक की तरह वह (नायक) भी जीवन की कठोर वास्तविकता और भ्रम-भ्रष्टता का शिकार बनता है। पुस्तक में प्रसंग अनेक हैं, किन्तु अन्त में उन्हें पूर्ण स्वर-समन्वय के साथ मिश्रित कर दिया गया है। यह कथा सूत्र रूप में १८९५-९७ ई० में लिखी गई थी। इसके अंश क्रमशः फ्रांस और इटली में लिखे गए थे और नाटक के रूप में पूर्ति स्विट्ज़रलैंड और इंग्लैंड में की गई थी। १९१२

ई० में यह नाटक के रूप में रंगमंच पर भी लाया गया था।

'जां क्रिस्तोफ़' जैसा विशद उपन्यास संसार में कदाचित ही दूसरा होगा। इसकी पृष्ठ-संख्या १५५० है और जिल्दें तीन हैं। इसमें अनेक स्थलों पर अपने ढंग के अनोखे और अद्वितीय वर्णन हैं। इसके पात्रों में से कुछ ऐसे हैं जिनमें जीवन भरा हुआ है, कुछ ऐसे हैं जो स्मृति को सदा ताजा रखते हैं। ऑलोवियर, ग्रैज़िया, ऐण्टोने, सैबिन जैकलिन, इमैनुएल, डॉ० ब्रान और नायक के चरित्र ऐसे ही हैं। शेष बहुत-से अप्रधान पात्र ऐसे हैं जो स्मरण भी नहीं रखे जा सकते। पुस्तक का वर्तमान रूप लेखक की कल्पना के पूर्ण विस्तार का द्योतक है। इसके थोड़े-थोड़े अंश भी संगीत की एक-एक कड़ी की भांति सुन्दर एवं आनन्द-दायक है।

कुछ आलोचकों ने एक बार रोम्यां रोलां पर यह आपत्ति की कि वे जर्मनी के प्रति शत्रुता के भाव रखते हैं। इसपर उन्होंने उत्तर दिया कि मेरी जर्मनी से अणु-मात्र भी शत्रुता नहीं है, क्योंकि जर्मनी की भांति मैंने फ्रांस की भी कई स्थलों पर निन्दा की है। उन्होंने जर्मनी के सम्बन्ध में लिखा है कि जर्मनी नैतिक शक्ति रखते हुए भी बीसवीं सदी में 'रुग्ण' हो रहा है; फ्रांस भी दोषमुक्त नहीं है। दोनों देशों में वीरतापूर्ण भावनाएं हैं किन्तु इनमें से एक देश के निवासी दूसरे देशवासी को ठीक तौर से समझ नहीं पाते। जब तक ये दोनों देश एक-दूसरे को मित्र-भाव से समझने की चेष्टा नहीं करेंगे तब तक युद्ध अवश्यम्भावी है, जो दोनों ही राष्ट्रों को छिन्न-भिन्न करके छोड़ेगा। 'जां क्रिस्तोफ़' की यह भविष्यवाणी दो ही वर्ष बाद सच हुई और १९१४ ई० में जर्मनी और फ्रांस ने शत्रु के रूप में यूरोपीय महासमर में भाग लिया।

इस ऐतिहासिक उपन्यास का अन्तर्राष्ट्रीय विचारों पर स्थायी प्रभाव पड़ा है। इसमें एक साथ रूपक, अद्भुतता, मनोवैज्ञानिक अध्ययन और आदर्शवादी स्वप्न का सम्मिश्रण है। इसमें विशुद्धता, भावुकता और कल्पना-प्रवणता पाई जाती है। इस पुस्तक के अनुवादक (गिलबर्ट कैनन) ने लिखा है कि यह (जां क्रिस्तोफ़) बीसवीं सदी की पहली सर्वोत्कृष्ट पुस्तक है और इसमें वर्णित 'सन्त क्रिस्तोफ़' का चरित्र अद्भुत और अपूर्व है। इसमें अनेक कथा-भाग ऐसे हैं जिनमें कला और वर्णन-सौन्दर्य का पूर्ण विकास हुआ है। 'ऐण्टोने', 'दि हाउस' (घर) और 'दि न्यू डान' (नव प्रभात) ऐसे ही अंश हैं। लेखक ने अन्त में भावी जगत और विशेषतः युवक-समाज को इस प्रकार सन्देश दिया है—"हे वर्तमान जगत के मनुष्यो, आगे बढ़ो, हमें पद-दलित करके आगे बढ़ो। तुम हमसे अधिक प्रसन्न बनो।...जीवन, मृत्यु और पुनर्जन्म का पर्याय क्रम है। क्रिस्तोफ़ ! हमें पुनः जन्म धारण करने के लिए मरना अवश्य है।"

पुरस्कार-प्राप्ति के बाद रोम्यां रोलां ने 'कोला ब्रूगनां' लिखा जो १९१९ ई० में अंग्रेजी में अनुवादित होकर प्रकाशित हो गया। यह उपन्यास उनके पूर्वोक्त वृहत उपन्यास की अपेक्षा अधिक हलका रहा। यह स्विट्ज़रलैंड में १९१३ ई० में लिखा गया था। लड़कपन से ही अपने मुख्य पात्र ओलिवियर की भांति रोम्यां रोलां युद्ध से

भय खाते थे। युद्ध के समय वे जेनेवा झील के निकट वेवी में थे और उन्होंने वहीं ठहरे रहने का निश्चय किया। वे फ्रांस को प्यार करते थे, परन्तु युद्ध में सम्मिलित होकर अपनी आत्मा को दुःखित नहीं करना चाहते थे। उन्होंने रेडक्रॉस सोसाइटी में भाग लेकर सेवा-कार्य किया। युद्ध के सम्बन्ध मे उन्होंने जो कुछ लिखा वह 'एवव्ह दि बैटिल' नामक पुस्तक में प्रकाशित हुआ है। उन्होंने एक जर्मन नाटककार को पत्र लिखकर सद्भाव स्थापित करने की चेष्टा की थी। वुड्रो विल्सन को भी उन्होंने इस सम्बन्ध में पत्र लिखे थे और समस्त संसार के मस्तिष्क से काम करनेवालों के नाम एक गश्ती चिट्ठी लिखकर उनमें भ्रातृ-भाव स्थापित करने की चेष्टा की थी। इन्हीं दिनों उन्होंने महात्मा गांधी[१] पर भी एक पुस्तक लिखी।

इसके पश्चात् जब उन्हें अवकाश मिला तो उन्होंने 'लिलुली' नामक एक हास्य-रसपूर्ण नाटक लिखा जिसकी प्रधान पात्री के रूप में उन्होंने माया का चित्रण किया। उन्होंने 'क्लेरमबॉल्ट' नामक एक कहानी लिखी जिसमें युद्ध के समय एक स्वतन्त्र आत्मा की गाथा का चित्रण है। इसका अंग्रेजी अनुवाद कैथेराइन मिलर ने किया है। इस कहानी के बहाने लेखक ने अपने भाव प्रकट कर दिए हैं और जीवन तथा संघर्ष के तत्त्वज्ञान पर अच्छा प्रकाश डाला है। इस कहानी का नायक क्लेरमबॉल्ट अपने जीवन में अनोखे अनुभव करता है। उसके शान्तिपूर्ण ग्राम्य जीवन के प्रारम्भिक चित्र की उसके उस जीवन से तुलना की गई है जब वह पेरिस में पहुंचकर उन्मादपूर्ण जीवन व्यतीत करने लगता है। नगर में जाकर वह अपने पुत्र मैक्सिम को सेना में भर्ती होने के लिए आग्रह करता और युद्ध में जाकर मर जाता है। लेखक ने इस कहानी को क्लेरमबॉल्ट और उसकी स्त्री के लिए दुःखान्तपूर्ण बनाया है, पर उनकी आत्मा की स्वतन्त्रता के लिए विजय-चिह्न सूचक है। इस मनोवैज्ञानिक कहानी में आत्मचरित की झलक स्थल-स्थल पर मिलती है।

१९२२ ई० में रोम्यां रोलां ने 'लिम एन्शैण्टे' लिखा जिसका अनुवाद बेन रे रेडमैन ने 'एनेट ऐण्ड सल्वी—दि प्रेल्यूड' नाम से किया है। इसकी दूसरी जिल्द 'समर' का अनुवाद एलीनोर स्टिमसन और वानविक ब्रुक्स ने किया है। इस पुस्तक में विशेष प्रसंग या सिद्धांत न रखकर लेखक ने सत्य को प्राप्त करने के लिए संघर्ष दिखाया है और अन्त में यह दिखाया गया है कि आत्मा का सामंजस्य प्राप्त करके कितने आनंद की प्राप्ति होती है।

रोम्यां रोलां ने भारतीय महापुरुषों और भारतीय आन्दोलनों की ओर विशेष अनुराग प्रदर्शित किया और श्रीरामकृष्ण परमहंस तथा स्वामी विवेकानन्द की जीवनियां और उनके सिद्धान्तों पर पुस्तकें लिखी हैं। महात्मा गांधी और कवि-सम्राट् रवीन्द्रनाथ ठाकुर से उनकी विशेष मित्रता थी और विगत द्वितीय गोलमेज कान्फ्रेंस के अवसर

१. Mahatma Gandhi: The Man Who Became One With Universal Being.

पर महात्माजी जब लन्दन गए थे तो लौटते समय रोम्यां रोलां के यहां सदल-बल ठहर-कर उन्होंने उनकी मेहमानदारी स्वीकार की थी।

अपनी बाद की रचनाओं में रोम्यां रोलां ने आदर्शवाद का स्पष्टीकरण किया जो उनके मत से भावना और क्रिया के सामंजस्य और स्वतन्त्रता का नाम है। उनकी शैली कहीं-कहीं असंगत और ठोस भी हो गई है, पर उसमें वास्तविकता का उच्च प्रकाश और महान सौन्दर्य सन्निहित है। अपने जीवन में उन्होंने अनेक ऐसे संघर्षों का अनुभव किया, जिनका उनके कोमल मन पर और शुद्ध आत्मा पर गम्भीर प्रभाव पड़ा है। उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय मित्रता और आध्यात्मिक ऐक्य के लिए शुद्ध भाव से लेखनी उठाई थी और उन्हें इसमें काफी सफलता मिली।

गेटे और बीथोवेन के सम्बन्ध में इन्होंने 'गेटे ऐण्ड बीथोवेन' नामक सुन्दर पुस्तक लिखी है जिसमें उनके संगीत-प्रेम और संगीत-ज्ञान का सुन्दर परिचय मिलता है। इसमें पांच निबन्ध अत्यन्त कौशलपूर्ण ढंग से लिखे गए हैं।

रोम्यां रोलां १९४४ ई० में स्वर्गवासी हुए।

# हेइदेन्स्ताम

१९१६ ई० का नोबल पुरस्कार स्वीडन के विख्यात कवि हेइदेन्स्ताम को मिला। इनका पूरा नाम वर्नर-फॉन हेइदेन्स्ताम था। पुरस्कार प्राप्त करने के पहले ही स्वीडन में ये अद्वितीय कवि माने जा चुके थे। उनके देश में इनकी कविताओं का अद्वितीय मान है। इनकी कुछ रचनाओं का अंग्रेजी अनुवाद भी हुआ है और चार्ल्स व्हार्टन स्टार्क, आर्थर जी० चाटर और कैरोलिन एम० नडसन ने इनकी रचनाओं का अंग्रेजी में अनुवाद करके इन्हें संसार के समक्ष लाने का श्रेय प्राप्त किया है।

वर्नर-फॉन हेइदेन्स्ताम का जन्म ६ जुलाई, १८५९ ई० को नार्क (स्वीडन) में हुआ था। बचपन में वे बड़े लज्जालु स्वभाव के और दुर्बल थे किन्तु पढ़ने-लिखने में उनका मन बहुत लगता था—विशेषकर कविताएं और वीरगाथाएं वे बड़े चाव से पढ़ते थे। बचपन में ही उन्हें फेफड़े की बीमारी हो गई थी जिसके कारण उन्हें जलवायु-परिवर्तन के लिए दक्षिणी यूरोप भेजा गया। आठ वर्ष तक वे स्वीडन से दूर ही रहे और इटली, स्विट्ज़रलैण्ड, ग्रीस, तुर्की और मिस्र का भ्रमण करते रहे। उनके पूर्वजों में से कुछ लोग पूर्वी देशों में सरकारी नौकरियां कर चुके थे। उन देशों के सुन्दर दृश्य देखकर वे मुग्ध हो गए।

पहले-पहल उनके मन में चित्रकार बनने की अभिलाषा उत्पन्न हुई थी। कुछ दिनों तक वे पेरिस के 'जेरोम'—चित्रकला-शिक्षणालय—के विद्यार्थी रहे थे। समालोचकों ने उनकी कविताओं में स्थल-स्थल पर उनकी चित्रकला-विज्ञता का आभास पाया है। फ्रांस के अतिरिक्त इटली और दमिश्क में भी उन्होंने चित्रकला के उपकरण संग्रह किए थे। युवावस्था के आरम्भ में ही इनका एक मध्यम श्रेणी की स्विस लड़की से प्रेम हो गया और इसके साथ उन्होंने शादी भी कर ली थी। इसके बाद ब्रूनेग के एक पुराने किले में ये एकान्तवास करने लगे जहां वे अपनी स्त्री और ऑगस्ट स्ट्रिन वर्ग नामक मित्र के अतिरिक्त और किसीसे नहीं मिलते थे। स्ट्रिनवर्ग इस युवक कवि हेइदेन्स्ताम की प्रतिभा से आकर्षित हो गए थे और इसके प्रशंसक बन चुके थे। हेइदेन्स्ताम ने अब निश्चय कर लिया कि वह चित्रकारी में न पड़कर साहित्यिक क्षेत्र में पदार्पण करेंगे। उन्होंने अनेक कविताएं लिखीं और उनका संग्रह 'तीर्थयात्रा और भ्रमण के दिन'[1] नाम से किया। 'एकान्त विचार'[2] नामक काव्य-संग्रह से इनके मातृभूमि के प्रेम और अन्याय के प्रति रोष

---

१. Pilgrimages and Wander Years.    २. Thoughts in Loneliness.

का परिचय मिलता है। बचपन के दृश्यों के सम्बन्ध में उन्होंने अनेक सुन्दर कविताएं लिखी हैं जिनकी स्मृतियां अत्यन्त मनमोहक हैं। इन कविताओं में उन्होंने अपनी माता को स्मरण किया है। इनमें शोकोद्गार का पर्याप्त सम्मिश्रण है।

१८८७ ई० में हेइदेन्स्ताम के पिता का देहान्त हो जाने के कारण उन्हें विदेशों के भ्रमण से स्वीडन लौट आना पड़ा और परिपक्वावस्था तक उन्हें घर पर ही रहना पड़ा। 'तीर्थयात्रा और भ्रमण के दिन' के पश्चात् इनकी कविताओं का एक और संग्रह प्रकाशित हुआ जिसके कारण उनकी ख्याति स्वदेशवासियों में और बढ़ गई। इस संग्रह में 'एक पुरुष के एक स्त्री के प्रति अन्तिम शब्द'[1] अच्छी कविता समझी जाती है। इसके अतिरिक्त 'टिवेडन का जगल'[2] और 'गुस्ताफ फ्रोडिंग की अन्त्येष्टि-क्रिया'[3] भी उन्हीं दिनों लिखी गई। स्वीडन में इनकी कविताएं इतनी अधिक प्रचलित हुईं कि जगह-जगह लोग इनको गाने लगे। इनकी 'स्वीडन' नामक कविता तो सब जगह सामूहिक रूप से गाई जाने लगी। इसमें देशभक्ति का पर्याप्त पुट है। उनकी बाद में लिखी हुई कविताओं में भ्रातृ-भाव की छाप है और १६०२ ई० में प्रकाशित उनके कविता-संग्रह में संसार-मात्र में समानाधिकार-स्थापन का शुभ सन्देश है। ब्योर्न्सन की तरह उन्होंने भी आदर्श में राष्ट्रवाद और विश्ववाद दोनों को स्थान दिया है। ब्योर्न्सन की मृत्यु पर उन्होंने जिस शोक-काव्य की रचना की है, वह अपना विशेष स्थान रखता है। उसमें ब्योर्न्सन को उन्होंने 'नार्वे का पिता' लिखा है।

वर्नर-फॉन हेइदेन्स्ताम उपन्यासकार और कवि दोनों ही थे। उनका पहला उपन्यास 'एण्डीमियन' नाम से प्रकाशित हुआ, जिसका प्रसंग पुराना होने पर भी शैली नवीन थी। एक चित्रकार की सी सुकुमार कोमलता के साथ उन्होंने यह प्रेम-कहानी लिखी थी। इसका वातावरण प्राच्य है और बीच-बीच में पाश्चात्य सभ्यता का अवरोध है। कहानी में तथ्यवाद के वे पूर्ण विरोधी थे और 'पेपिटाज़ वेडिंग' (पेपिटा का विवाह) में उन्होंने आदर्शवाद और आभ्यन्तरिक सत्य की खोज पर ज़ोर दिया है। उनके उपन्यासों में 'चार्ल्समैन' जिसमें चार्ल्स बारहवें की कहानी है, अधिक विख्यात है। इसमें बीच-बीच में कविताओं की छटा भी खूब है। कथानक में स्वीडन की वीरता का विशद वर्णन है। इनकी नाटकीय कहानियों में से 'फ्रेंचमॉन्स', 'सुरक्षित घर'[4] और 'क़ैदी'[5] अधिक ख्यातिप्राप्त हैं। समस्त जीवन रण-क्षेत्र में रहकर भी नाली में मरनेवाले सम्राट की उन्होंने बड़ी ही करुणाजनक कहानी लिखी है।

हेइदेन्स्ताम के अन्य उपन्यास हैं 'सेण्ट जार्ज एण्ड दि ड्रैगन', 'सेण्ट बिरगिटाज़ पिल्ग्रिमेज' और 'फारेस्ट मर्मर्स'। इनकी निबन्धमाला 'क्लासिसिज़्म और ट्यूटानिज़्म' के नाम से मुद्रित हुई है। सचमुच यह दुर्भाग्य की बात है कि उनकी रचनाओं में से बहुत

१. A Man's Last Word to a Woman
२. The Forest of Tiveden
३. The Burial of Gustaf Froding
४. Fortified House
५. Captured

कम का अनुवाद अंग्रेजी में हुआ है। उन्होंने नरम दल के और सुधारक पत्रों में भी लेख लिखे हैं। १६०० ई० में उन्होंने तीसरी बार विवाह किया और वाडस्टेना नगर के निकट रहने लगे जहां उन्होंने अपने बचपन के दिन व्यतीत किए थे। उनकी स्त्री सुसंस्कृत और उच्च घराने की थी। १६१२ ई० में वे स्वीडिश एकैडमी के सदस्य चुने गए और इसके चार वर्ष बाद उन्हें नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ।

उनकी पद्यात्मक रचनाओं में से 'लोरी के गीत'[1] अच्छा नाम पा चुकी है। बच्चों के लिए कहानियां भी इन्होंने लिखी हैं। स्वीडन के शिक्षा-विभाग के अधिकारियों ने उनसे शिक्षा-विभाग के लिए रीडरें लिखने के लिए भी कहा। उन्होंने यह काम बड़े प्रेम से किया। उनमें इन्होंने वीरता की कहानियों का समावेश पर्याप्त रूप में किया। अधिक उम्र के लड़के-लड़कियों और युवकों के लिए उन्होंने दो नाटक आधुनिक ढंग के लिखे हैं जिनके नाम 'भविष्यवक्ता'[2] और 'भगवान का जन्म'[3] है। इनका अंग्रेजी अनुवाद कैरोलिन एम० नडसन ने किया है। इनमें से पहली रचना एक आर्केडियन कथानक के आधार पर लिखी गई है और दूसरी मिस्र की पौराणिक कहानियों के आधार पर।

इनकी 'दि ट्री ऑफ फोकंग्स' का स्वीडिश से आर्थर जी० चार्टर नामक अमेरिकन ने अंग्रेजी में अनुवाद किया है। इसमें इतिहास के साथ-साथ अनेक किम्वदन्तियों और कल्पनाओं का सम्मिश्रण है। हेइदेन्स्ताम की मृत्यु १६४० ई० में हो गई।

---

१. Cradle Songs
२. Soothsayer
३. The Birth of God

# हेनरिक पोण्टोपिदान

१९१७ ई० का नोवल पुरस्कार डेन्मार्क के प्रख्यात लेखक हेनरिक पोण्टोपिदान और कार्ल ग्येलेरुप दोनों को आधा-आधा मिला। अब तक पुरस्कार अन्य राष्ट्रों के साहित्यिक महारथियों को ही मिलता आया था और डेन्मार्क-वासी इससे वञ्चित थे। इसका एक कारण तो यह था कि इस देश के लेखकों की रचनाओं के अनुवाद कम होने के कारण इनकी रचनाएं साहित्यिक जगत् के सम्मुख उतनी नहीं आ पाई थीं जितनी स्वीडन और नार्वे के लेखकों की। केवल हान्स क्रिस्टियन ऐण्डर्सन और जॉर्ज ब्रैंडिज ही अभी तक नाम पा चुके थे। डेन्मार्क की राजकीय नाट्यशाला एक शिक्षा-सम्बन्धी संस्था समझी जाती थी। होलबर्ग, ओहूलेश्लैगर और एडवर्ड ब्रांडेस नामक नाटककारों की रचनाएं पहले भी आदर पा चुकी थीं और अन्यदेशीय साहित्यिकों ने उनकी रचनाएं चाव से पढ़ी थीं। बर्गस्टार्म के नाटक 'कारेन बोर्नमैन'[1] का अंग्रेजी अनुवाद एडविन जार्कमैन ने किया था।

हेनरिक पोण्टोपिदान का जन्म १८५७ ई० में जटलैण्ड के फ्रेडरिका नामक स्थान में हुआ था। उनके पितामह और पिता पादरी रह चुके थे। अभी बालक पोण्टोपिदान स्कूल में ही पढ़ रहे थे कि उनका परिवार फ्रेडरिका से स्थानान्तरित होकर कैण्डर्स आ गया। यहां वे अपने परिवार के साथ तब तक रहे जब तक कि वे कोपेनहेगन जाकर पॉलीटेकनिक स्कूल में इंजीनियरी पढ़ने नहीं चले गए। वे स्विट्ज़रलैण्ड की सैर को भी गए, जहां उन्होंने पहले-पहल प्रेम-जगत् का अनुभव प्राप्त किया। उन्होंने अपनी आरम्भिक रचना स्विट्ज़रलैण्ड में ही की थी।

सन् १८८१ ई० में डेन्मार्क में उनका 'विलप्ड विंग्स' नामक कहानी-संग्रह प्रकाशित हुआ। इनमें 'गिरजाघर का जहाज़'[2] कल्पना और नाटकीय केन्द्रीभूतता की दृष्टि से बहुत सुन्दर है। इसमें रहस्यमय ढंग से यथार्थवाद का सम्मिश्रण किया गया है। १८८१ ई० में वे कुछ समय के लिए ऑस्टबी में रहे थे और कुछ ही वर्ष बाद अपनी दूसरी शादी करने के बाद वे कोपेनहेगन चले गए, जहां उन्होंने ब्रैंडिज से मित्रता की और शिक्षा-सम्बन्धी तथा साहित्यिक क्षेत्र में नेतृत्व प्राप्त कर लिया। नये नाटककारों

---

१. Karen Bornman

२. Church Ship

और उपन्यासकारों को भी वे यथेष्ट आदेश दिया करते थे। उन्हें इब्सन का अनुगामी कहा जाता है। उनकी कहानियों में दत्यों के मलिन प्रभाव की छाप दिखाई देती है। समालोचकों ने तो यहां तक लिख मारा है कि इनकी रचनाओं में स्थानीयता तथा आध्यात्मिकता अधिक होने के कारण बहुत संकीर्णता आ गई है।

पोण्टोपिदान की रचनाओं में डेन्मार्क के ग्राम्य जीवन का सुन्दर चित्रण है। उनकी पहली पुस्तक 'दि प्रामिस्ड लैण्ड' में तथ्यवाद का बाहुल्य है। इसमें दिखाया गया है कि इस भौतिक अभिलाषा के जगत् में आदर्शवादियों के संघर्ष का वास्तविक रूप क्या होता है। यह पुस्तक बड़ी सावधानी के साथ तीन वर्ष में लिखकर पूरी की गई थी और यह उनकी सफल रचना मानी जाती है। उनका दूसरा उपन्यास 'लकी पीटर' था। इसे भी उन्होंने चार वर्ष में लिखा था। इस उपन्यास का नायक भी लेखक की भांति पादरी का लड़का और इंजीनियर था। 'मृतकों का साम्राज्य'[1] महायुद्ध के दिनों में लिखा गया था और यह देशभक्ति के साथ-साथ एक विशेष आदर्श के प्रति निष्ठा उत्पन्न करके युद्ध से घृणा करा देता है। इसमें कोपेनहेगन का नागरिक एवं ग्रामीण दृश्य सामने आ जाता है। इसके अतिरिक्त उनके 'दि अपाथेकैरीज़ डॉटर' का भी अनुवाद जी० नीलसेन महोदय ने अंग्रेज़ी में किया है।

पोण्टोपिदान की कहानियों के अंग्रेज़ी अनुवाद में से 'दि प्रामिस्ड लैण्ड' और 'इमैनुएल' या 'चिल्ड्रन आफ़ दि स्वायल' पढ़ लेने से लेखक का उद्देश्य मालूम हो जाता है। इस कहानी-संग्रह का अनुवाद श्रीमती एडगर लुकास ने किया है। इनकी कहानियों का चित्रण नेली इरिचसेन ने किया है, जिन्होंने 'डेन्मार्क के कृषक का विकास'[2] नामक परिच्छेद में लेखक के वास्तविक उद्देश्य का चित्रण किया है। १८४९ ई० में जब डेन्मार्क के किसानों को आज़ादी मिली और वे गुलाम से नागरिक बना दिए गए तो पोण्टोपिदान के शिक्षा-सम्बन्धी एवं धार्मिक जीवन में काफ़ी बाधा और कोलाहल का समावेश हो उठा। राजनैतिक दल संगठित हुए। 'किसान-मित्र-संघ' ने नये-नये स्कूलों की स्थापना की। १८६६ ई० में फिर उक्त स्वतंत्रता के ऐक्ट में संशोधन उपस्थित करके जब किसानों की स्वतंत्रता का अपहरण हुआ तो उन्हें बड़ी ही निराशा का सामना करना पड़ा। बॉलबी और स्किवरप नामक जिन दो गांवों में पोण्टोपिदान महोदय ने निवास कर शिक्षक का काम किया था, वहां का चित्रण बड़ी ही सजीव भाषा में किया गया है और बतलाया गया है कि उनमें विद्रोह की भावना किस प्रकार जाग्रत हुई थी।

पोण्टोपिदान की कुछ छोटी कहानियों की वर्णन-शैली अद्भुत है। 'जेनल पलाइट' और 'सिपासाज' ऐसी ही कहानियां हैं। वे शिक्षा-सम्बन्धी उन्नति विशेष रूप से चाहते हैं और इसके लिए स्वयं भी सचेष्ट रहते हैं। वे राजनैतिक छल-प्रपंच और झूठे समझौते-सन्धियों के विरोधी हैं। उनकी भावना सदा से आदर्शवाद-मूलक रही और

१. The Kingdom of the Dead

२. The Evolution of the Danish Peasant

है। उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उनका डेन्मार्क के ग्रामों और नगरों का वर्णन इतना तथ्यपूर्ण और सजीव है कि उन्हें साहित्यिक जगत् में डेनिश-जीवन का फ़ोटोग्राफर कहा जाता है। इनकी रचनाओं की अभी तक उतनी कद्र नहीं हुई है जितनी होनी चाहिए, किन्तु ज्यों-ज्यों इनकी रचनाओं का अंग्रेजी अनुवाद अधिकाधिक रूप में होता जाएगा त्यों-त्यों इनकी ख्याति बढ़ती जाएगी।

पोण्टोपिदान की मृत्यु १९४४ ई० में हुई।

# कार्ल ग्येलेरुप

१६१७ ई० का शेपार्द्ध पुरस्कार कार्ल ग्येलेरुप को प्राप्त हुआ था, क्योंकि एकेडमी की दृष्टि में यह महोदय भी बहुमुखी प्रतिभा के भावुक और उच्चादर्शपूर्ण लेखक थे। पोन्टो-पिदान की तरह कार्ल एडाल्फ ग्येलेरुप भी एक पादरी के लड़के थे। उनका जन्म रोहोल्ट नामक स्थान में १८५७ ई० में हुआ था। अपने पिता को प्रसन्न करने के लिए पहले तो उन्होंने धर्मतत्त्व का अध्ययन किया; किन्तु उन्हें याजक बनने की इच्छा नहीं थी और उनका आधुनिक सिद्धान्तों की ओर अधिक झुकाव था। उन्होंने डार्विन, ब्रैंडिज और स्पेंसर की शिष्यता स्वीकार कर ली और बाद में उससे भी मन फेरकर वे ऐतिहासिक अध्ययन में लग गए। वे 'इडास' के अध्ययन में खास दिलचस्पी लेते थे और लेखक बनने के पहले ही वे साहित्य की ओर आकर्षित हो गए। उन्होंने अपने जीवन का अधिकांश ड्रेसडन में व्यतीत किया, जहां वे अपने घर की अपेक्षा अधिक विख्यात हो गए थे।

ग्येलेरुप ने अनेक विषयों पर लेखनी उठाई है। कला और संगीत पर उन्होंने कई पुस्तकें लिखी हैं। उन्होंने ऐसे नाटक लिखे हैं जिनमें आधुनिक त्रिष्ट धर्म के तत्त्व का सामंजस्य ग्रीक सौन्दर्य-प्रेम से किया है। इन्होंने 'इडास' आदि पुराने कवियों की कहानियों का अनुवाद आधुनिक डेनिश भाषा में किया है। उनकी दो कहानियां—'दि पिलग्रिम कामनिता' और 'मीन'—अंग्रेजी में अनूदित होकर प्रकाशित हुई हैं। उनके उपन्यासों में 'एक आदर्शवादी'[1] और 'पास्ट मान्स' ऐसे हैं जिनमें व्यंग्य और सजीव चित्रण भरे पड़े हैं।

'दि पिलग्रिम कामनिता' का अनुवाद जान ई० लॉगों ने किया है और इसका स्पष्टीकरण दूसरा उपनाम 'ए लीजेण्डरी रोमांस' लिखकर किया गया है। इसमें महात्मा बुद्ध की वह कहानी है जिसमें यह बतलाया गया है कि वे गंगातट से होकर पंच-पर्वत की नगरी को गए थे। इसमें कृष्ण-कुञ्ज के वृक्षों और पुष्पों का सुन्दर वर्णन है। पंच-पर्वत की नगरी का प्राकृतिक वर्णन अत्याकर्षक है—वाटिका के कुसुमित वृक्षों, समतल चौगानों, और सुदूर तक फैली हुई पर्वतावलियों की चमक-दमक पुखराज और पद्मराग आदि मणियों की चमक को मात कर रही है। कामनिता इन पर्वतों से परिवृत अवन्ति नामक नगरी के एक व्यापारी का लड़का था। यह स्फटिक की सफाई

1. An Idealist

और बहुमूल्य रत्नों के उद्गम-स्थान को भी जानता था। बीस वर्ष की अवस्था में वह कौशाम्बी के राजा उदयन के पास राजदूत बनाकर भेजा गया। यहीं से उसकी तीर्थ-यात्रा आरम्भ होती है और कहानी में प्रेम और स्मृतियों का सम्मिश्रण होता है। रहस्यवाद और गूढ़ तत्त्वज्ञान को इसमें यथार्थवाद से मिला दिया गया है।

'मीना' एक उपन्यास है जिसका अंग्रेज़ी अनुवाद नीलसेन ने किया है। इसका कथानक ड्रेसडन से सम्बन्ध रखता है। इसमें मीना और उसके दुःखान्त जीवन के साथ वागनर, चोपिन और बीथोवेन के गान और संगीत सम्मिलित हैं। मीना को इसमें अत्यन्त भावावेग के साथ चित्रित किया गया है। इसमें लेखक ने स्थल-स्थल पर विख्यात कवि मूर की कविताएं उद्धृत की हैं।

ग्येलेरुप को नोवल पुरस्कार मिलने पर जर्मनी में खूब हर्ष मनाया गया, क्योंकि उनकी कला और साहित्य का ड्रेसडन (जर्मनी) में अच्छा प्रभाव था। उन्होंने जर्मन-जीवन और जर्मन तत्त्वज्ञान को डेनिश भाषा में लिखने में काफी सफलता प्राप्त कर ली थी। उनके डेनिश स्वदेशवासी इनकी रचनाओं का यद्यपि पर्याप्त आदर करते हैं, पर उनकी दृष्टि में वे डेनिश भाषा के कोई मौलिक महान लेखक नहीं थे। उस देश के कुछ लोग अग्रगण्य साहित्यिक ग्येलेरुप की अपेक्षा जॉर्ज ब्राण्डस जैसे लेखक, बर्ग-स्ट्राम जैसे नाटककार या ड्राचमैन जैसे कवि या जे०वी० जैन्सन जैसे को नोवल पुरस्कार दिलाना अधिक पसन्द करते, फिर भी ग्येलेरुप की काव्यमयी अन्तर्दृष्टि और व्याख्या करने की अद्भुत क्षमता ऐसी है जिससे कोई भी इन्कार नहीं कर सकता।

# कार्ल स्पिटलर

१९१९ ई० का नोबल पुरस्कार स्विट्ज़रलैण्ड के साहित्यिक कार्ल स्पिटलर को मिला था। अपने देश के अतिरिक्त फ्रांस और जर्मनी में इनका नाम प्रसिद्ध हो चुका था। १९१८ ई० का नोबल पुरस्कार किसीको भी नहीं दिया गया था। यद्यपि नीत्शे जैसे विद्वान ने भी स्पिटलर की प्रशंसा की थी, किन्तु फिर भी इन्हें नोबल पुरस्कार मिलने के पूर्व अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति नहीं प्राप्त हो सकी थी।

कार्ल स्पिटलर का जन्म १८४५ ई० में लीस्टल में हुआ था। इनके पिता डाक-खाने की नौकरी करते थे और बाद में खजाने के सेक्रेटरी हो गए थे। बैसेल विश्व-विद्यालय में शिक्षा प्राप्त करते समय कार्ल स्पिटलर पर जर्मन विद्वान विलहेम वैकर-नागेल और इटैलियन इतिहासकार जैकब बर्खार्ट का विशेष प्रभाव पड़ा। उन्हें संगीत से बड़ा प्रेम था और वे बीथोवेन का संगीत विशेष रूप से पसन्द करते थे। उन्होंने कला-प्रेम का विशेष परिचय दिया और बाद में वे ज्यूरिच और हीडेलबर्ग विश्वविद्यलयों में इतिहास और कानून पढ़ने गए। धर्मशास्त्र का अध्ययन करके धर्माचार्य बनने का विचार भी उन्होंने किया था, किन्तु पीछे उन्होंने अनुभव किया कि तत्त्वज्ञान और साहित्य की ओर उनका झुकाव अधिक है। उन्होंने खूब भ्रमण किया और उनके मन में महाकवि बनने की अभिलाषा उत्पन्न हुई। उन्होंने 'जॉन आफ अबीसीनियां' 'एटलाण्टिस' और 'थेसियस ऐण्ड हेराक्लिस' नामक पुस्तकें लिखने का निश्चय करके उनका कच्चा ढांचा तैयार किया; किन्तु बाद में बाल-चेष्टा समझकर इन्हें छोड़ दिया। आठ वर्ष तक वे रूस में रहे और वहां एक रूसी अफसर के बच्चे के शिक्षक के तौर पर काम करते रहे। वहां वे मुक्त काव्य-रचना भी करते रहे और 'प्रोमेथियस एपीमेथियस' नामक गद्य-काव्य को पूरा कर लिया। पहले वे फेलिक्स टैंडम के कल्पित नाम से प्रकाशित हुआ और दस वर्ष बाद उनके वास्तविक हस्ताक्षर के साथ मुद्रित हुआ। उनकी यह रचना प्रकाशित हो जाने पर बहुत-से आलोचकों ने उनकी रचना को नीत्शे का अनुकरण बत-लाया, पर उन्होंने उसका विरोध किया और इसपर एक पुस्तक लिखकर सिद्ध किया कि उन्होंने इस रचना के पूर्व नीत्शे का अध्ययन तक नहीं किया था।

स्विट्ज़रलैण्ड के बेर्न और न्यूनस्टेट स्थान में वे कुछ दिनों तक शिक्षक का कार्य करते रहने के बाद बैसेल आकर पत्रकार का कार्य करने लगे। १८८३ ई० में उन्होंने

विवाह किया और उसी वर्ष उनकी 'एक्ट्रामण्डना' नामक एक पुस्तक प्रकाशित हुई, जिसमें उन्होंने विनोदात्मक काव्य में सृष्टिरचना का इतिहास बतलाया है। उनकी स्फुट कविताओं का एक संग्रह 'तितली' नाम से प्रकाशित हुआ जो प्रकृति-प्रेम और छन्द-प्रवाह की दृष्टि से बड़ी सुन्दर रचना कही जा सकती है। १८९७ ई० में उन्हें कुछ पैतृक सम्पत्ति प्राप्त हुई। इसके बाद उन्होंने आजीविका के लिए लिखना तथा शिक्षक का काम करना छोड़ दिया। उसके पश्चात् वे लुसर्न चले गए। वहां के प्राकृतिक दृश्यों ने उनकी काव्यमयी भावना को और भी जाग्रत कर दिया। यहां उन्होंने 'हास्यात्मक सत्य' नामक एक निबन्ध-माला लिखी जिसमें व्यंग्य और निश्छलता का सरस सामंजस्य है। इसके बाद 'गस्टेव' तथा बच्चों के लिए 'टू लिटिल मिसोगिनिस्ट्स' नामक पुस्तकें प्रकाशित हुईं। यह दूसरी पुस्तक यद्यपि बच्चों के लिए उपयोगी है लेकिन इससे बड़ी उम्रवाले भी लाभ उठा सकते हैं।

१९०५ ई० में उनकी कुछ कविताएं 'बलाडेन' के नाम से प्रकाशित हुईं और इसके बाद उन्होंने 'इमागो' नामक कविता लिखी जिसमें प्रोमेथियस की वास्तविक घटना का विश्लेषण किया है। इसमें युवक कवि विक्टर का आत्मचरित है। लेखक ने जर्मनी के स्त्रीत्व का भी इसमें सुन्दर चित्रण किया है।

स्पिटलर के परिपक्व विचारों का परिचय पाठकों को 'ओलम्पियन स्प्रिङ्ग' नामक पुस्तक से मिल सकता है। यह १९०० से १९०५ ई० तक पत्रों में धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुई थी। उनके एक पद्य के अंग्रेजी अनुवाद का हिन्दी भावानुवाद यहां दिया जाता है :

"तुम्हारे राजमुकुट की ख्याति प्रतिदिन अधिकाधिक बढ़ रही है। तुम्हारी भावनाएं उच्च हैं। श्रेष्ठ जनों की यही पहचान है।

"हे वीर, तुमने जो साहस किया है वह वीरों का कर्तव्य है।

"अपने कर्तव्य को पूरा करने के कारण आज तुम हजारों में एक हो।"

उनकी कविताओं में पौराणिकता और व्यंग्य का बाहुल्य है। बहुत-से आलोचकों ने उनकी इस रचना (ओलम्पियन स्प्रिङ्ग) को नई शताब्दी की दैवी रचना कह डाला है। कई आलोचकों ने इस रचना की तुलना शेली की 'प्रोमेथियस अनबाउण्ड' और कीट्स की 'इन्डीमिअन' तथा अन्य महाकाव्यों से की है। अनांके को पौराणिक सृष्टिकर्ता मानकर लेखक ने उसके हाथों देवताओं को इरेबस में कैद करवा दिया है। पीछे वह देवताओं को आज्ञा देता है कि वह संसार की यात्रा करें। अनांके की लड़की मोइरा जगत् में आकर यहां के निवासियों को वसन्त और शान्ति प्रदान करती है, किन्तु जब वे उन देशों के निकट पहुंचते हैं तो उनका आनन्द कष्ट के रूप में परिणत हो जाता है।

स्पिटलर स्विट्ज़रलैण्ड में जर्मन कविता के प्रतिनिधि समझे जाते हैं। उनके गद्य में गेटे और शिलर की छाप है। महायुद्ध के समय उन्होंने जर्मन-स्विट्ज़रलैण्ड की तटस्थता पर जोर दिया, इसलिए बहुत-से जर्मन उनके विरुद्ध हो गए। इधर फ्रांस में

इसके कारण इनकी ख्याति बढ़ चली और सत्तर वर्ष की अवस्था में फ्रेंच एकेडमी ने उनका विशेष आदर किया। उनकी कविताओं में सांगीतिक विभिन्नता है जिनमें 'बेल सांग्स' और 'बटरफ्लाईज़' अधिक प्रसिद्ध हैं। अपनी बाद की रचनाओं में उन्होंने आध्यात्मिकता का सामंजस्य और व्यापारिकता की निन्दा की है।

सन् १९३१ ई० में स्पिटलर महोदय का लुसर्न में देहान्त हो गया। विडमैन ने इनकी 'प्रामेथियस' नामक रचना की आलोचना करते हुए लिखा है : "उनकी कविता में धर्म (पौराणिकता) और विचार (तत्त्वज्ञान) का जैसा सन्निवेश है वैसा और किसी की कविता में नहीं पाया जाता।" यही महोदय 'बटरफ्लाईज़' (तितलियां) के सम्बन्ध में भी अपनी आलोचना में लिखते हैं : "इन आश्चर्यजनक नन्हे-नन्हे जन्तुओं का—जिनका रूपान्तर मनुष्य जाति की स्मृति पर रहस्यपूर्ण प्रभाव डालता है—भाग्य कवि ने अत्याकर्षक दुःखान्त में वर्णन किया है। इसी प्रकार अनेक आलोचकों ने स्पिटलर की रचनाओं में शक्ति, अनोखापन और आदर्श पाया है। रोम्यां रोलां ने भी उनकी रचनाओं की प्रशंसा की है। उन्हें नोबल पुरस्कार मिलने के पूर्व ही रोम्यां रोलां ने उनके सम्बन्ध में लिखा था : "मेरे ख्याल में स्पिटलर इस समय यूरोप के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं, और एक यही ऐसे कवि हैं जो प्राचीन कीर्ति को पहुंच गए हैं।...आश्चर्य है कि दुनिया ऐसी अन्धी है कि ऐसी चमत्कृत ज्योति के निकट से गुजरकर भी उसके प्रकाश से वञ्चित है और उसके गुणों से अपरिचित है।"

# नट हैमसन

१६२० ई० का नोबल पुरस्कार नार्वे के प्रसिद्ध उपन्यास-लेखक नट हैमसन को मिला। इन्होंने बीस से अधिक उपन्यास और नाटक ऐसे लिखे हैं जिनका अनुवाद विभिन्न भाषाओं में हो चुका है। संसार के वर्तमान साहित्य-क्षेत्र में नट हैमसन की रचनाओं का एक खास स्थान है और वे जगद्विख्यात साहित्यिक माने जाते हैं। वे कुछ समय शिकागो (अमेरिका) में घोड़ा-गाड़ी हांकने का काम कर चुके थे, इसलिए उन्हें जब नोबल-पुरस्कार मिला तो अनेक अमेरिकन पत्रों ने बड़े-बड़े शीर्षक देकर यह समाचार छापा, 'घोड़ा-गाड़ी हांकनेवाले को नोबल पुरस्कार' आदि, आदि। उनकी रचनाओं में उनके निजी व्यक्तित्व का विकास जितना सुन्दर हुआ है उतना कदाचित ही किसी अन्य लेखक का हुआ हो।

नट हैमसन के माता-पिता किसान थे। उनका जन्म पूर्वी नार्वे के लोय नामक स्थान में ४ अगस्त, १८६० ई० में हुआ था। इनके घराने में कारीगरी का काम हुआ करता था। इनके दादा धात का काम करनेवाले थे जिन्हें हिन्दुस्तान में ठठेरा कहते हैं। किन्तु इस काम में उन्हें विशेष आमदनी नहीं थी। जब हैमसन चार ही वर्ष के थे, उनका परिवार यहां का पहाड़ी प्रदेश छोड़कर लोफोडेम द्वीप (नार्डलैण्ड) चला गया। यहां के वन्य दृश्य और मछुओं के कठोर कार्य को देखते-देखते बालक हैमसन ने युवावस्था प्राप्त की। कुछ समय तक वे अपने एक चाचा के साथ रहे जो राजकीय गिरजे के एक उपदेशक थे। उनके चाचा बड़े कठोर हृदय थे। अपनी 'ए स्पूक' नामक कहानी में हैमसन ने अपने चाचा के बेतों को अच्छी तरह याद किया है, जिनके भय से वे भागकर कब्रगाह और जंगल में छिप जाया करते थे। अपनी शिक्षा-सम्बन्धी भूख मिटा सकने के पूर्व ही नवयुवक हैमसन को बोडों में जूते बनाने का काम सीखना पड़ा। तो भी वे निराश नहीं हुए और पढ़ने-लिखने की ओर बराबर ध्यान रखने लगे। अन्ततः किसी प्रकार १८ वर्ष की अवस्था में १८७८ ई० में वे अपनी पहली रचना प्रकाशित कराने में सफल हुए। यह रचना गम्भीर कविता के रूप में थी और इसमें प्रकृति के विभिन्न रूप-रंगों की प्रशंसा की गई थी। इसका नाम 'पुनर्मिलन'[1] था। इसके बाद 'जोरगर' नामक कहानी छपी। यह एक प्रकार की आत्मकथा थी और ब्योर्न्सन की शैली पर

---

१. Meeting Again

लिखी गई थी।

बोडों में रहकर जूते बनाने के काम से वे उकता गए। इसलिए उसे छोड़कर कुछ दिन के लिए कोयले ढोने का, फिर सड़क बनाने का, तत्पश्चात् अध्यापक का और तदनन्तर नगराध्यक्ष के सहायक का काम करते रहे। स्कैण्डेनेविया के अन्य युवकों की भांति उन्होंने भी अमेरिका-प्रवास करने का निश्चय किया। उन्होंने अपने 'एक भ्रमणकारी का नीरव तंत्री-वाद्य'[१] में लिखा है कि अमेरिका में भी ये अनेक तरह का काम करते फिरे; जैसे घोड़ा-गाड़ी हांकने, मजदूरी करने, मोदी की दुकान पर मुहर्रिरी करने तथा व्याख्यान देने के काम करते रहे। ये उस देश में कुछ साहित्यिक कार्य करने की अभिलाषा रखते थे, किन्तु दुर्भाग्यवश उन्हें उसका अवसर नहीं मिल सका। जिन लोगों को उनका शिकागो का जीवन याद है उनका कहना है कि घोड़ा-गाड़ी हांकने के समय भी उनकी जेबों में कोई न कोई कविता की पुस्तक रहती थी। १८८५ ई० में वे क्रिश्चियना लौट आए; पर १८८६ ई० में पुनः अमेरिका लौट गए और 'करेण्ट इवेन्ट्स' नामक पत्र में सम्वाददाता का काम करने लगे। पर इस काम से उन्हें काफी पैसा नहीं मिलता था, इसलिए काम चलाने के लिए वे शारीरिक परिश्रम करके भी कुछ उपार्जन करने लगे। कुछ दिनों तक वे एक रूसी के साथ नाव पर नौकरी करते रहे और उसके साथ न्यूफाउण्डलैण्ड के तट पर भी गए। उसके पश्चात् एक वर्ष तक ये मिनियापोलिस में क्रिस्टोफर जॉनसन नामक नार्वे-निवासी एक पादरी के सेक्रेटरी का काम करते रहे। इस समय इनकी अवस्था अट्ठाईस वर्ष की हो चुकी थी और ये गुजारे के लिए उत्तरी डाकोटा के खेतों पर भी काम करते थे। वे मिनियापोलिस में साहित्यिक विषय पर व्याख्यान देना चाहते थे, किन्तु उनकी अभिलाषा पूरी नहीं हुई और उन्हें कटु भावना के साथ अमेरिका छोड़ना पड़ा। इन्हीं दिनों उन्होंने 'आधुनिक अमेरिका का आध्यात्मिक जीवन'[२] नामक पुस्तक लिखी जो पीछे 'अमेरिका की संस्कृति'[३] के नाम से प्रकाशित हुई। 'संघर्षमय जीवन'[४] नामक कहानी-संग्रह में उनके शिकागो के अनुभवों का सार है। 'ब्रशवुड' नामक कहानी-संग्रह में जो १९०३ ई० में प्रकाशित हुई थी, उन्होंने उत्तरी डाकोटा के खेतों पर काम करते समय जो अनुभव किए थे, उन्हें भी लिपिबद्ध किया है।

अमेरिका से लौटकर वे कोपेनहेगन के एक दैनिक पत्र में लिखने लगे। इसके बाद कोपेनहेगन की ही एक पत्रिका में उन्होंने 'क्षुधा'[५] नामक उपन्यास धारावाहिक रूप से लिखना शुरू किया। १८८८ ई० में इनका 'नई भूमि'[६] भी प्रकाशित हुआ जो दो वर्ष बाद पुस्तकाकार छप गया। यद्यपि ये उनकी प्रारम्भिक रचनाएं ही हैं, परन्तु इनमें

१. A Wanderer Plays Muted Strings
२. The Spiritual Life of Modern America
३. American Culture
४. Struggling Life
५. Hunger
६. New Soil.

पाठकों को अपनी ओर आकर्षित करने के गुण हैं। कुमारी लार्सेन ने 'न्यू स्वायल' के सम्बन्ध में लिखा है: "आदि, अन्त और कथानक में कुछ न होते हुए भी इसमें भावावरोह (क्लाईमैक्स) की भरमार है।" प्रोफेसर बीहर ने लिखा है कि हैमसन ने अपनी भूतकाल की उन स्मृतियों को याद किया है जिन्होंने उसके जीवन पर गहरा प्रभाव डाला था। मिस लार्सेज ने 'एडीटर लिज', 'सनसेट' और 'पैन' आदि की प्रशंसा की है। 'विक्टोरिया' को लोग अपेक्षाकृत प्रगतिशील रचनाओं में मानते हैं। इसमें चक्कीवाले का लड़का जोहान्स नायक है जो प्रकृति से सदा सामंजस्य रखता है। यहां तक कि प्रेम से निराश हो जाने पर भी वह दुखी नहीं होता। हैमसन के उपन्यासों में पद्य की झलक है। उनकी 'मनकेन वेण्ट' नामक नाटकीय कविता बड़ी ही आकर्षक है। इसमें सीधे-सादे आवारा आदमी का चित्रण है। उनके 'हंगर' नामक अंग्रेजी अनूदित उपन्यास की भूमिका पढ़कर एडविन जार्कमैन के ये शब्द याद आ जाते हैं कि कलाकार और आवारा दोनों प्रारम्भ से ही हैमसन के रक्त में मिले मालूम पड़ते हैं। दूसरे प्रकार के आदर्शात्मक उपन्यास लिखने के पूर्व हैमसन ने 'साम्राज्य के द्वार पर'[१] नामक नाटक लिखा है जिसमें कैरोनो नामक दार्शनिक विद्यार्थी को नायक बनाया है। उसकी स्त्री में उन्होंने वासनावृत्ति अधिक दिखलाई है। इस नाटक में लेखक ने जीवन के रूप और शासकवर्ग की करतूतों का आलोचनात्मक विश्लेषण कैरोनो द्वारा करवाया है। दस वर्ष बाद उन्होंने 'जीवन का खेल'[२] लिखा और उसके बाद तीसरा नाटक 'सूर्यास्त'[३]। ये तीनों नाटक श्रृङ्खलाबद्ध हैं। इनमें कैरोनो को पचास वर्ष की अवस्था में विज्ञान में संदेह करनेवाले तथा स्वतन्त्रता एवं सत्य से प्रेम करनेवाले के रूप में दिखलाया गया है। लेखक ने सच्चरित्रता के पेशेवर उपदेशकों पर व्यंग्य कसा है और कई और स्थलों पर ऐन्द्रिक विषयों को खुली और स्पष्ट भाषा में लिखा है। उनके 'जीवन के चंगुल में'[४] नामक नाटक का अनुवाद ग्राहम और रासन ने १९२४ ई० में किया था। इनके नाटकों में स्त्री-चरित्र को भावुकतापूर्ण दिखलाया गया है और उनमें प्रणय-पहेली का प्राधान्य है। लगभग सभी स्त्री-पात्र एक ही ढंग के चित्रित किए गए हैं।

१९०९ ई० में उनका 'समय की सन्तान'[५] प्रकाशित हुआ और उसके दूसरे ही वर्ष 'सेगेलफास नगर' और 'भूमिवृद्धि'[६] मुद्रित हुए। वे अब भी समाज को उपेक्षा की दृष्टि से देखते रहे। वे प्रजातंत्रवाद के भी विरोधी थे और समाज में एक नये विधान का स्वप्न देखते थे। अनेक उपन्यासकारों की भांति उन्होंने भी एक परिवार का चित्रण करके अपने सामाजिक विचार प्रकट किए हैं। विलाज तृतीय नामक एक अवकाशप्राप्त लेफ्टिनेंट को दिखाया गया है कि वह अपनी स्त्री से उच्च सामाजिक विधान के अनुसार सम्बन्ध रखता है और अपने पुत्र के साथ भी, जो संगीत-प्रेमी है, ऐसा ही व्यवहार रखता है।

---

१. At the Gate of the Kingdom
२. Life's Play
३. Sunset
४. In the Grip of Life
५. Children of the Age
६. Growth of the Soil

उसके सामाजिक वर्णन और रहन-सहन के द्वारा लेखक ने अपने समाज-सम्बन्धी विचार विकसित किए हैं।

'भूमिवृद्धि' के पहले ही हैमसन ने 'सेगेलफास टाउन' की रचना की थी। इन दोनों में उन्होंने अपनी आर्थिक दुरवस्था का अच्छा चित्रण किया है। इस कहानी में व्यंग्य और आर्थिक लोभ का अच्छा चित्र खींचा गया है। इसमें वार्डसन नामक एक टेलीग्राफ-आपरेटर का चरित्र अत्यन्त साहसपूर्ण और दृढ़ दिखलाया गया है।

अमेरिका के विख्यात समालोचक श्री वरसेस्टर ने लिखा है कि 'भूमिवृद्धि' हैमसन की सर्वश्रेष्ठ रचना है और यह अमेरिका तथा अन्य देशों में बहुत अधिक पढ़ी गई है। यद्यपि इसके देश-काल तथा पात्र एकस्थानीय हैं, फिर भी इसका प्रतिपादित विषय सार्वभौम है और समस्त मनुष्य-जाति पर लागू होता है। नट हैमसन ने साहित्यिक कौशल क्रमशः प्राप्त किया है और उनके उपन्यासों में जोरदार और तथ्यात्मक चित्रण पाया जाता है। उन्होंने जीवन के दार्शनिक पहलू और समाज की अन्तर्शक्ति की ओर भी पर्याप्त रूप से ध्यान दिया है। अपने ही अध्यवसाय के बल पर उन्होंने शिक्षा प्राप्त की थी। वे एक अद्भुत धुन के आदमी थे। उनमें हास्यरस के उत्पादन की शक्ति भी थी। इन्हीं सब गुणों के कारण उन्हें अच्छी सफलता मिल सकी। दूसरी ओर चूंकि उनका इन्द्रियपरायणता और अश्लीलता की ओर विशेष झुकाव था, अतः वे सुरुचि और संस्कृत विचारों के विरोधी थे। तो भी अपने व्यक्तिगत विचारों में वे मूल चारित्रिकता को मानते थे। हैमसन के सम्बन्ध में डॉ० वीहर ने एक जगह यह विचार प्रकट किया है कि उनके देशवासी तथा अन्य पिछड़ी हुई जातियों के लोग उनका आदेश कला-कौशल में बढ़ी हुई जातियों की अपेक्षा अधिक मानेंगे।

हैमसन के 'आवारा'[1] नामक उपन्यास की आलोचना-प्रत्यालोचना विशेष रूप से हुई है और इसकी चर्चा सबसे अधिक हुई है। इसमें नार्वे के समुद्र-तट के स्त्री-पुरुषों की टोलियों का दृश्य पाठकों के सम्मुख आ जाता है। उनके मछली मारने, सुखाने और नमक लगाकर बेचने का दृश्य तथा उनके खाने, पीने, मजे उड़ाने एवं सारी आमदनी खर्च कर डालने का वर्णन है। साथ ही यह भी दिखाया गया है कि इस देश के निवासी किस प्रकार धनार्जन के लिए अमेरिका का प्रवास करते हैं, और किस तरह लौटने पर उनकी आंखें खुल जाती हैं। इस प्रकार की टोलियों के दो मुखिया एडीवार्ट और ऑगस्ट का चरित्र-चित्रण हैमसन के उपर्युक्त उपन्यास में है। साथ ही जहाज डूबने और एलमेरिया नामक लड़की का ऑगस्ट को बचाने की शक्ति रखते हुए भी न बचा सकने आदि का रोमांचकारी वर्णन है। 'आवारा' के सातवें परिच्छेद में तूफान का वर्णन अत्यन्त जोरदार और भावात्मक शैली में किया गया है। नट हैमसन पुराने ढंग की साहित्यिक शैली का विरोध जोरदार भाषा में करते थे और मानव-भावनाओं को अच्छी तरह समझते थे।

सन् १९५२ में नट हैमसन का देहान्त हो गया।

---

1. Vagabond

# अनातोल फ्रांस

१६२१ ई० का नोवल पुरस्कार अनातोल फ्रांस को मिला। उनका जन्म १८४४ ई० में पेरिस में हुआ था। वास्तव में अनातोल फ्रांस का जन्म पुस्तकों के ही घर में हुआ था, क्योंकि उनके पिता फ्रांसिस नोयल थिवाल्ट पेरिस के एक प्रसिद्ध पुस्तक-विक्रेता थे। उनके पितामह एक मोची थे और इन्होंने अपने लड़के को पढ़ना-लिखना सिखाया था। अनातोल फ्रांस के पिता पहले सेना में नौकर थे। बाद में पुस्तक-विक्रेता का काम करने पर उन्होंने अच्छे-अच्छे लेखकों की पुस्तकें संगृहीत कीं। वे राजनीतिक, साहित्यिक और धार्मिक सभी तरह की पुस्तकें बेचते थे। वे राजभक्त और कैथोलिक थे। 'पीर नाज़ियर' नामक पुस्तक में अनातोल फ्रांस ने अपने पिता का चित्रण अच्छी तरह किया है। 'दि ब्लूम आफ लाइफ' नामक पुस्तक में अनातोल फ्रांस ने अपने बचपन का स्मरण किया है। इस पुस्तक में उन्होंने अपने पिता को लक्ष्य करके लिखा है कि वे पुस्तक 'बेचने' के बदले 'पढ़ने' के लिए अधिक तत्पर रहते थे। बचपन में ही अपनी पुस्तक की दुकान में बैठने और उच्चकोटि के लेखकों से परिचित हो जाने के कारण अनातोल फ्रांस को साहित्य पढ़ने की बड़ी उत्कण्ठा हो गई होगी। अनातोल फ्रांस की मां एक भद्र घराने की लड़की थी। वे अपने लड़के को अद्भुत कहानियां सुनाया करती थीं। अनातोल फ्रांस को उनसे बड़ा प्रोत्साहन मिला। उन्हें स्कूल की पढ़ाई और वहां का जीवन अच्छा नहीं लगता था। कॉलेज-जीवन में मनोरंजन के लिए साथी मिलने के कारण उनका मन लग गया था, पर फिर भी एकान्त जीवन उन्हें अधिक प्रिय था। वे प्रायः कॉलेज से अनुपस्थित रहा करते थे।

उनकी मां का उनपर ऐसा मोह और विश्वास था कि प्रोफेसर लोग जब उनके सम्बन्ध में शिकायत करते थे कि वे पढ़ने में मन नहीं लगाते, तो भी वे अपने लड़के से अप्रसन्न नहीं होती थीं। उनके पिता अवश्य प्रोफेसर एम० डुवाई की इस शिकायत से क्षुब्ध होते थे कि लड़का कला या विज्ञान में कुछ भी सफलता नहीं प्राप्त कर सकेगा। उनकी मां उनसे कहा करती थीं: "बेटा, तुम्हारा मस्तिष्क अच्छा है, तुम लेखक बनो— इससे तुम इतनी उन्नति कर जाओगे कि लोगों की जबान बन्द हो जाएगी।" इस प्रकार उनके लेखक बनने में उनकी मां सबसे प्रथम सहायक हुई। दूसरा प्रोत्साहन उन्हें पेरिस नगर से प्राप्त हुआ, जिसे वे बहुत प्रेम करते थे और बचपन से ही उनकी स्मृति में पेरिस

का चित्र घूमा करता था। उसके बाग-बगीचे, उसके कुंज, उसकी विख्यात इमारतें, उसके उपाहारगृह, उनकी पुस्तकों की दुकानें और नोतरदेम आदि विख्यात जगहें उन्हें बहुत प्रिय थी। पेरिस के सभी श्रेणी के स्त्री-पुरुष, सड़कों पर काम करनेवाले मजदूर और बागीचों में खेलनेवाले बच्चों आदि का दृश्य इनकी रचनाओं में अत्यन्त आकर्षक ढंग से चित्रित है।

१८६८ ई० में जब अनातोल फ्रांस कुछ भी विख्यात नहीं हुए थे, और केवल चौबीस वर्ष के किताबी कीड़े और स्वप्नदर्शी युवक-मात्र थे, उन्होंने अल्फ्रेड-डी-विग्नी नामक कवि की प्रशंसा में एक लेख लिखा। उन दिनों ड-डी-काण्टी में बहुत-से युवक लेखक एकत्रित होकर कविताओं आदि की आलोचना किया करते थे। दो वर्ष बाद अर्थात् २६ वर्ष की अवस्था में अनातोल ने सेना में नौकरी कर ली और साहित्यिक जीवन को भूल जाने की चेष्टा करने लगे। इसके बाद उनका झुकाव राजनीति की ओर हुआ और उन्होंने अपनी साहित्यिक प्रवृत्ति को राजनीति की ओर मोड़ दिया। वे राजनीतिक व्यंग्य, और पुस्तकों की भूमिकाएं आदि लिखने लगे। 'लेमर' नामक एक प्रकाशक की पाण्डुलिपियां भी इन्होंने सम्पादकीय दृष्टिकोण से पढ़ीं और लारूज के शब्द-कोश के सम्पादन में भी सहायता दी।

फ्रांस और प्रशिया के युद्ध के बाद लेमर ने एक छोटा काव्य-संग्रह प्रकाशित किया जिसके प्रकाशन के लिए अनातोल फ्रांस ने बड़ा साहस और अनुराग प्रदर्शित किया था—साथ ही उसके लिए अनातोल फ्रांस ने अपना समय भी पर्याप्त रूप से लगाया। इस संग्रह का नाम था—'पोयम्स आपरे' (नाट्याभिनय काव्य) किन्तु जनसाधारण को यह संग्रह कुछ भी आकर्षित नहीं कर सका। इसके तीन वर्ष पश्चात् उनकी 'कारिन्थ की दुलहिन'[1] प्रकाशित हुई जिससे मालूम हो गया कि लेखक की मूर्तिपूजा और आरम्भिक खीष्ट धर्म की व्याख्या कैसी तीव्र है। कुछ दिनों तक वे सिनेट के पुस्तकालय में लिकोण्टी-डी-लिसिल के सहायक रहे थे। यहां उनकी कई उदीयमान कवियों से घनिष्ठता हो गई। इन मित्रों में मेण्डे, कैलिया और बोनियर्स खास थे। बोनियर्स के घर पर अभिनेताओं, लेखकों और गायकों का खासा जमघट रहता था। अनातोल फ्रांस का यहां बड़े तपाक के साथ स्वागत होता था। १८८१ ई० में उनका उपन्यास 'दि क्राइम आफ सिल्वेस्टर बोनार्ड' निकला जो चालीस वर्ष से अन्तर्राष्ट्रीय साहित्यिक क्षेत्र में अद्वितीय मान पाता रहा है। केवल इसी एक पुस्तक के द्वारा अनातोल फ्रांस संसार-भर के पाठकों के सुपरिचित लेखक बन गए। इसका कथानक बहुत सीधा-सादा है—इसमें घटना बाहुल्य नहीं है, पर यह है भावुकतापूर्ण। इसकी छाप हृदय पर स्थायी रूप से पड़ती है और इसके अन्दर सत्य, सौहार्द तथा आकर्षण है। दस वर्ष बाद अनातोल फ्रांस अपनी इस रचना पर आश्चर्य करते थे कि यह इतना अधिक प्रख्यात कैसे हो गया।

---

१. The Bride of Corinth

इस पुस्तक के समालोचकों ने भविष्यवाणी की कि इसका लेखक भविष्य में असाधारण लेखक होगा। इसके चार वर्ष बाद उनकी 'मेरे मित्र की पुस्तक'[1] प्रकाशित हुई जिससे लेखक की भावुकता, मित्रता और बाल्यावस्था की स्मृतियों का अच्छा परिचय मिलता है। यह रचना 'दि क्राइम आफ सिल्वेस्टर बोनार्ड' से बिलकुल भिन्न है, क्योंकि इसमें उनकी कविजनोचित्त उड़ान, बाल और युवावस्था की स्मृतियां और तरंगें भरी हुई हैं। बचपन की बहुत-सी बातें इस पुस्तक के आरम्भिक परिच्छेद में आई हैं—खिलौनों के लिए बच्चे की प्रबल उत्सुकता, व्यग्रता और हास्य का इसमें सुन्दर सम्मिश्रण है। इस पुस्तक के अंग्रेजी अनुवाद की भूमिका में लाफकाडियो हीर्न ने लिखा है: "यदि यथार्थवाद का अर्थ सत्य है, तो हमें अनातोल फ्रांस को एक सुन्दर यथार्थवादी मानना पड़ेगा।"

१८८६ ई० के पश्चात् अनातोल फ्रांस ने 'काजरी' नामक साप्ताहिक पत्रिका में 'ऑन लाइफ ऐण्ड लेटर्स टु दि पेरिस टेम्प्स' लिखा जिससे उनकी साहित्यिक धाक जम गई और वे प्रबल आलोचक माने जाने लगे। मोपासां, ड्यूमा, बालज़क, मेरी बास्कर्टसिव, फ्रांसिस कॉपी, रेनन और जार्ज सैण्ड आदि विख्यात लेखकों की रचनाओं की आलोचनाएं उन दिनों बहुत प्रकाशित हुईं। 'क्राइम आफ सिल्वेस्टर बोनार्ड' प्रकाशित होने के नौ वर्ष बाद लेखक ने पुनः परिश्रमपूर्वक दूसरी पुस्तक लिखी। अनातोल फ्रांस स्वयं कहा करते थे कि इसके पहले वे सर्वसाधारण को प्रसन्न करने के लिए पुस्तक लिखा करते थे। 'मेरे मित्र की पुस्तक' के पश्चात् इनकी 'थाया'[2] अधिक विख्यात रचना सिद्ध हुई। फिर तो 'लाल कमल'[3], 'ऐट दि साइन आफ दि रीन पेडाक'[4], 'दि एमेथिस्ट रिंग'[5], 'दि गाड्स आर एथर्स्ट' 'दि विकरबर्क वोमन,' 'पेंगुइन आइण्लैड,' 'दि रिवोल्ट आफ दि एँजिल्स,' 'मैन हू मैरिड डम्ब वाइफ,' रचनाओं आदि का तांता बंध गया और संक्षिप्त कहानियों में 'क्रैंकबाइल,' 'दि व्हाइट स्टोन,' 'दि सेविन वाइव्स आफ ब्ल्यूबर्ड' और 'टेल्स फ्रॉम दि मदर आफ पर्ल कास्केट' अधिक प्रशंसा के साथ पढ़ी गईं।

अनातोल फ्रांस की ऐतिहासिक योग्यता का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उनकी लिखी जान 'जॉन आफ आर्क' पढ़नी चाहिए। जब तक अनातोल फ्रांस को नोबल पुरस्कार नहीं मिला, तब तक उनकी रचनाएं पुस्तकालयों तक में नहीं रखी जाती थीं, क्योंकि इनकी रचनाओं में साम्यवाद की एक ऐसी झलक थी जिसका विरोध उन दिनों खूब हो रहा था, किन्तु पुरस्कार मिलने के बाद लोगों ने चाव से उनकी पुस्तकें पढ़ीं। उन्होंने युद्ध-प्रवृत्ति की घोर निन्दा की और जब वे नोबल पुरस्कार प्राप्त करने के लिए स्टॉकहोम

---

१. My Friends Book
२. इस पुस्तक का अनुवाद हिन्दी में स्व० प्रेमचन्दजी ने किया था।
३. The Red Lilly
४. कुछ समालोचक इसे लेखक की सर्वोत्कृष्ट रचना मानते हैं।
५. इसका अनुवाद भी हिन्दी में हो चुका है।

गए तो वर्साई की सन्धि के सम्बन्ध में उन्होंने कहा, "सन्धि के बाद युद्ध हुआ करता है और सन्धि शान्ति की नहीं, भावी अशान्ति की द्योतक है। यदि यूरोप अपनी परामर्श-सभाओं में बुद्धिवाद को स्थान न देगा, तो इनका विनाश निश्चित है।" फ्रांस के बहुत-से साहित्यिक तथा अन्य लोग उन्हें दार्शनिक मानते हैं, किन्तु वास्तव में अनातोल फ्रांस में एक महान और अद्भुत पर्यवेक्षण-शक्ति थी और उन्होंने जीवन का अध्ययन बहुत ध्यान से किया था।

वृद्धावस्था में अनातोल फ्रांस में पुनः बचपन-सा आ गया था। वे अपने पुराने सहपाठियों से मिलते-जुलते और स्कूल के दिनों को याद किया करते थे।

इनका शरीरान्त १९२४ ई० में हुआ।

# जाकिन्तो वेनावेन्ते

१६२२ ई० का नोवल पुरस्कार जाकिन्तो वेनावेन्ते को मिला था। यह स्पेन के नवीन पीढ़ी के नाटककार माने जाते हैं क्योंकि इनकी रचनाओं में नूतनता का समावेश है।

वेनावेन्ते का जन्म १८६६ ई० में स्पेन की राजधानी मैड्रिड में हुआ था। उनके पिता एक प्रसिद्ध चिकित्सक थे। वेनावेन्ते ने कानून को अपना पेशा बनाना चाहा था और उसका कुछ अध्ययन भी किया था, किन्तु बाद में वे लेखन और रंगमंच की ओर झुके। उनको शुरू से ही नाटक और सरकस के प्रवन्ध का कुछ ज्ञान था और वे अभिनय करनेवालों तथा दर्शकों की आवश्यकताओं को समझते थे। उनकी पहली रचना १८६३ ई० में कविता के रूप में प्रकाशित हुई। और उसके दूसरे ही साल 'तुम्हारे भाई का घर'[१] नामक नाटक मुद्रित हुआ। किन्तु इस प्रकार की रचनाओं से जनता का ध्यान उनकी ओर आकर्षित नहीं हुआ। १८६६ ई० में 'समाज में'[२] नामक नाटक निकला और उसके दो वर्ष बाद 'जंगली जानवरों का भोज'[३] नामक नाटक प्रकाशित होने पर सर्वसाधारण का ध्यान उनकी ओर गया। उन्हीं दिनों स्पेन और अमेरिका के युद्ध के बाद अपने देश में समाज-सुधार का आन्दोलन उठाकर वे उसके नेता बन बैठे।

वेनावेन्ते स्पेन, फ्रांस और रूस के बहुत-से समकालीन लेखकों की अपेक्षा कम मौलिक हैं। वे परम्परा से घृणा नहीं करते, किन्तु उसके साथ वहीं तक चलते हैं जहां तक उसका जीवन और कला से सम्बन्ध है। उनकी रचनाओं में अमीरों के प्रति व्यंग्य और किसानों के प्रति सहानुभूति के भाव भरे हैं। वे अपने पाठकों और दर्शकों को इस बात के लिए बाध्य कर देते हैं कि वे विचार करें। उनकी 'सत्य'[४], 'पतझड़ के गुलाब'[५], 'एक घण्टे का जादू'[६] और 'एर्मिन का भूखंड'[७] आदि रचनाओं में भावावेश पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है।

१६१३ ई० में वेनावेन्ते स्पेनिश एकैडमी के सदस्य चुने गए। शिक्षा-सम्बन्धी राजनीतिक और साहित्यिक मामलों में उनकी रचनाएं खूब उद्धृत की जाती हैं। उनका

---

१. Thy Brother's House
२. In Society
३. The Banquet of Wild Beasts
४. The Truth
५. Automnal Roses
६. The Magic of An Hour
७. The Field of Ermine

स्वतंत्रता-सम्बन्धी आदर्श वर्तमान स्पेन और समस्त यूरोप के आदर्शों से ऊंचा है। उन्होंने खूब देशाटन किया और जहां-जहां गए हैं, वहां-वहां अपने नाटकों को अभिनीत होते देखा है। विशेष करके रूस, इंगलैंड, दक्षिण अमेरिका और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की यात्रा उन्होंने सफलतापूर्वक की है। 'आसक्ति पुष्प'[१] उनका एक ऐसा दुःखान्त नाटक है जिसमें किसानों के जीवन का भावपूर्ण चित्रण किया गया है। अमेरिका में उनकी इस विख्यात कृति की फिल्म भी बन गई है। 'ब्याजी तमस्सुक'[२] नामक उनका नाटक न्यूयार्क के नाटक-घरों में अच्छी ख्याति प्राप्त कर चुका है। उनके नाटकों में प्रायः गम्भीर विषयों की चर्चा नहीं की गई है। उनके 'एलहोमोब्रेसिटो' नामक नाटक में नेव नामक नायिका का चित्रण बहुत सुन्दर किया गया है और बहुत-से लोग उसकी तुलना इब्सन के 'पुतलियों का घर' (डाल्स हाउस) नामक नाटक से करते हैं। बेनावेन्ते का विश्वास था कि नाटक का गूढ़ार्थ पाठकों और दर्शकों के भावावेश के साथ प्रकट होना चाहिए। उनके 'गवर्नर की स्त्री'[३], 'पुस्तकों का कीड़ा राजकुमार'[४], 'शनिवार की रात्रि'[५], 'दूसरी प्रतिष्ठा'[६] में आकर्षण और प्रेम-वर्णन विशद रूप से किया गया है।

बेनावेन्ते के पात्र प्रायः क्षणस्थायी होते हैं, और वे उनके उद्देश्य की पूर्ति करने के बाद सहसा लुप्त हो जाते हैं। 'ब्याजी तमस्सुक' नामक पुस्तक में भी यही बात है। और 'एक घंटे का जादू' में भी मरवीरियस और इन्काएबुल नामक ऐसे ही पात्र रखे गए हैं जो जीवन, प्रेम, पुस्तकों और पुष्प तथा कविता एवं संगीत के सम्बन्ध में लेखक के विचार प्रकट करके लुप्त हो जाते हैं। इस छोटे-से नाटक में लेखक ने अपने उस आदर्शवाद को बुन दिया है जो दुर्बल मनुष्यता और परकीय निजत्व के अंतर को प्रकट करता है। इस आदर्श का सर्वापेक्षा गह्वर सम्बन्ध प्रेम से है। उन्होंने जो सैकड़ों नाटक लिखे हैं उनमें विभिन्न स्थलों और अंतर्दृष्टि का वर्णन किया गया है। इन्हीं स्फुट विचारों के कारण वे नोबल पुरस्कार प्राप्त करने के अधिकारी हुए हैं। उनके नाटकों में विभिन्न-विषय-प्रसंग पाए जाते है। उनके बाद के लिखे हुए नाटकों में 'जूते का जोड़ा या संदिग्ध गुण'[७] नामक नाटक बड़ा ही मनोविज्ञानपूर्ण है। जान गैरेट अण्डरहिल ने कहा है कि बेनावेन्ते उच्चतम कोटि के आदर्शवादी हैं और उनके तत्वज्ञान का परिचय 'राजकुमारियों का स्कूल'[८] और 'एर्मिन क्षेत्र'[९] नामक नाटकों से मिल सकता है।

---

१. The Passion Flower
२. The Interest Bond
३. The Governor's Wife
४. The Prince Who Learned Everything Out of Books
५. Saturday Night
६. The Other Honour
७. A Pair of Shoes or Doubtful Virtue
८. The School of Princess
९. The Field of Ermine

# यीट्स

१९२३ ई० का नोबल पुरस्कार आयर्लैण्ड के प्रसिद्ध कवि और नाटककार विलियम बटलर यीट्स को प्राप्त हुआ था। उनका जन्म १५ जून, १८६५ ई० को सैण्डी माउण्ट (डबलिन) में हुआ था। इनके पिता जान बटलर यीट्स एक विख्यात चित्रकार थे। इनके पितामह धर्म-प्रचार का काम करते थे और इनके नाना स्लीगो के एक प्रसिद्ध व्यापारी और जहाज के मालिक थे। बालक यीट्स ने अपना समय इन दोनों (पितामह और नाना) के साथ समुद्र-तट पर स्थित उपर्युक्त नगर में बहुत दिनों तक व्यतीत किया था। जब बालक यीट्स की अवस्था स्कूल जाने योग्य हो गई तो वे अपने माता-पिता के साथ लन्दन में रहने और गोडोल्फिन स्कूल (हैमरस्मिथ) में पढ़ने लगे। पन्द्रह वर्ष की अवस्था में वे डबलिन वापस आए और इरेसमस स्मिथ स्कूल में पढ़ने लगे। इन दिनों वे अपने स्लीगो के सम्बन्धियों के यहां रहने लगे थे। उनकी 'दि सेल्टिक ट्विलाइट' और 'जॉन शेरमैन' नामक रचनाओं में उनके बाल्यकाल का परिचय अच्छी तरह मिलता है। 'जॉन शेरमैन' के चरितनायक की तरह यीट्स भी लन्दन के जीवन से तंग आ गए थे और वे स्लीगो के वायुमण्डल में श्वास लेने के लिए विकल हो रहे थे। वहां की परिचित गलियां और कुटीरों की पंक्तियां उनके मानस-चक्षु के सामने घूमा करती थीं। वहां की दन्तकथाएं भी उनके लिए पर्याप्त आकर्षण रखती थीं। अपनी कविताओं में यीट्स ने पथरीली चट्टानों से टक्कर लेनेवाली इन्सफ्री द्वीप की लहरों और सूर्यास्त के समय अद्भुत शोभा देनेवाली सुदूरवर्ती पहाड़ियों का स्मरण बड़े ही आकर्षक ढंग से किया है।

यीट्स के पिता को यह आशा थी कि उनका लड़का चित्रकारी सीखकर उन्हीं-का कार्य संभालेगा। यीट्स ने कुछ दिनों तक चित्रकारी सीखी भी, किन्तु उसमें उनका मन नहीं लगा। उन्हें पुस्तकालयों में गेलिक[1] कहानियों और कविताओं के अनुवाद पढ़ने का बड़ा शौक था। उन्हें ग्रामीणों के पास बैठकर उनकी कहानियां सुनने का भी बड़ा चाव था। उन्होंने १९०६ ई० में अपनी कविताओं का जो संग्रह प्रकाशित कराया, उसमें उन्होंने इस प्रकार उल्लेख भी दिया है—'उनके प्रति जिनके साथ अंगीठी के पास बैठकर मैंने बातें की हैं।'

---

१. आयर्लैण्ड के निवासी गेलिक और केल्टिक संस्कृतियों के हैं।

उन्नीस वर्ष की अवस्था में यीट्स की पहली कविता 'मूर्तियों का द्वीप'[1] 'डब्लिन यूनिवर्सिटी रिव्यू' में प्रकाशित हुई। यूनिवर्सिटी में इनकी मित्रता एक भारतीय ब्राह्मण (दार्शनिक) से हो गई जो उन दिनों लन्दन में रहते थे।[2] उन्होंने उन भारतीय को डबलिन में आमंत्रित किया और उनसे दर्शन पढ़ने लगे। यीट्स का झुकाव स्वभावतः ही तत्त्व-ज्ञान की ओर था। उपर्युक्त दार्शनिक ब्राह्मण को वे प्रतिदिन चावल (भात) और मेव खिलाया करते थे और नित्य उनके व्याख्यान सुना करते थे।

श्रीमती कैथेराइन हिकसन नामक एक महिला ने अपने '२५ वर्ष के संस्मरण' लिखे हैं जिनमें उन्होंने बतलाया है कि युवक यीट्स को अपनी कविताएं पढ़कर सुनाने का बड़ा चाव था और इसके लिए वे रात-रात जागते थे। 'चेशायर चीज' में उन्होंने आर्थर साइमन्स, लाइनल जानसन और डब्ल्यू० ई० हेनली से मित्रता कर ली थी। इनके द्वारा उन्हें 'चेम्बर्स इंसाइक्लोपीडिया' में आयर्लैण्ड के सम्बन्ध में कुछ मजमून लिखने का काम मिल गया था। विभिन्न पंथों और उनके चिह्नों पर यीट्स के विचार दृढ़ थे जिसका परिचय उन्होंने अपनी 'दि विंड एमंग दि रीड्स' शीर्षक पद्यों और 'भले-बुरे का विचार' शीर्षक निबन्धों द्वारा अच्छी तरह दिया है।

श्री यीट्स महोदय गीति-काव्य-लेखक और नाटककार दोनों ही थे। नाटककार के रूप में वे सारे संसार में विख्यात हुए। जार्ज मूर, श्रीमती ग्रेगरी, और फारेस्ट रीड ने उनकी कृतियों की आलोचनाएं की हैं और उनके जीवन के सम्बन्ध में भी लिखा है। यीट्स महोदय को नाटकीय क्षेत्र में श्रीमती ग्रेगरी, डगलस हाइड, विलियम फे और फ्लोरेंस फार तथा कुमारी हार्निमैन से आर्थिक और अभिनय-सम्बन्धी पर्याप्त सहायता मिली। उन्होंने ग्राम्य कथाओं को अपनी कविताओं में स्थान दिया और इस प्रकार नये-नये कथानकों की सृष्टि की। श्रीमती ग्रेगरी और एडवर्ड मार्टिन के सहयोग से उन्हें 'पॉट ऑफ़ ब्रॉथ', 'कैथेलीन-नी-हूलिहन', 'दि किंग्स थ्रेशोल्ड', 'दि लैण्ड ऑफ़ हार्ट्स डिजायर', 'डीरड्रे' और 'आवर ग्लास' नाटकों में पूर्ण सहायता मिली। यह अन्तिम नाटक पहले गद्य में और बाद में पद्य के रूप में प्रकाशित हुआ। यह यीट्स के सदाचार-पूर्ण नाटकों में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इसके पात्रों में 'वाइज मैन' एक घण्टे में मृत्यु को प्राप्त होता है। वह निराशापूर्वक ऐसे व्यक्ति की खोज में जाता है जो परमात्मा और स्वर्ग में विश्वास रखता हो, जिससे उसकी सहायता से वह भी स्वर्ग पहुंच जाए। उसे 'टीग' नामक एक आदमी मिलता है, जो उसकी तरह स्कूल से शिक्षाप्राप्त नहीं है, वरन् जंगलों में शिक्षित हुआ है। वहां 'वाइज मैन' को विश्वास होता है कि उसने मनो-वांछित व्यक्ति प्राप्त कर लिया है। लेखक ने इस पुस्तक के संस्करणों में बहुत गीतित छन्दों का समावेश किया है।

यीट्स की कविता स्वप्नदर्शी कवियों की सी नहीं है। उन्होंने [illegible]

1. The Island of Statue[illegible]
2. [illegible] थे।

कहा है कि यदि कवियों का स्वप्न सच निकले तो काव्य-रचना की आवश्यकता ही न हो। उनके 'दि नेल्टिक ट्विलाइट' और 'दि सीक्रेट रोज' में उनकी कल्पना का सौन्दर्य पूर्णतः विकसित हुआ है। 'बाइंडिंग ऑफ़ दि हेयर' उनकी इस प्रकार की कविताओं में सर्वोत्कृष्ट समझी जाती है। 'दि विंग एमग दि रीड्स,' 'इन दि स्कीन वुड्स,' 'दि वाइल्ड स्वान्स ऐट कूल' और 'रिस्पांसिबिलिटीज' में प्रेम और दया के स्वप्न देखे गए हैं। इनका पृथक् सग्रह मैकमिलन कम्पनी के 'वर्क्स' में प्राप्त हो सकता है। कीट्स और विलियम ब्लेक की तरह यीट्स पर भी आलोचकों ने यह आक्षेप किए हैं कि ये मनुष्य के सम्पर्क में कम रहते थे। उन्होंने मानव-जाति की भावनाओं की अपेक्षा वायु के झकोरों, समुद्र की लहरों और वृक्षों का वर्णन अधिक किया है। उन्होंने 'अपनी प्रेयसी के प्रति कवि के उद्गार'[1] में आसक्ति-प्रदर्शन का वर्णन अत्यन्त उग्र रूप में किया है। कुछ आलोचक उनकी रचनाओं की तुलना शैली की कविताओं से करते हैं।

'आयर्लैण्ड में आदर्श'[2] नामक पुस्तक में उसकी सम्पादिका श्रीमती ग्रेगरी ने लिखा है कि अंग्रेजी के 'Æ' मिले हुए अक्षर का पुनरुद्धार करनेवालों में यीट्स मुख्य थे। उन्हें पक्का आदर्शवादी कहा जा सकता है। उन्हें अनेक आलोचकों ने सत्य-शोधक, उच्चाभिलाषी और आदर्शवादी कहा है। ब्योर्न्सन, मिस्त्राल, रवीन्द्रनाथ, मैटरलिंक, सेल्मा लागरलोफ, हेडेन्स्ताम और रोम्यां रोलां आदि को इसी आदर्श के कारण पुरस्कार मिले थे। संसार के परिष्कृत रुचि के पाठकों ने यीट्स को भी इसी श्रेणी में रखा है। श्रीमती ग्रेगरी ने उनकी कविताओं की सुन्दर समीक्षा करके उन्हें और भी चमका दिया है। 'आयर्लैण्ड में आदर्श' नामक पुस्तक में यीट्स ने अपने देश के साहित्यिक आन्दोलन का संक्षिप्त इतिहास भी लिखा है। उसमें उन्होंने बतलाया है कि आयर्लैण्ड के ग्राम्य-गीतों का उद्धार होने पर उससे उसके आध्यात्मिक और सामाजिक विकास में सहायता मिलेगी। यह पुस्तक सन् १८९९ ई० में लिखी गई थी। इतने दिनों के बाद यीट्स महोदय का उपर्युक्त कथन क्रियात्मक रूप में सत्य प्रमाणित हुआ। आयर्लैण्ड में यीट्स ही सर्वप्रथम विद्वान थे जिन्होंने ग्राम्य-गीतों के सौन्दर्य की परख की और उसमें वर्णित प्रेम और वीरता की कद्र की। आयर्लैण्ड के ग्राम्य-गीतों में युद्ध-प्रेम तथा साधुओं की कथाओं का सुन्दर वर्णन है। यीट्स के गानों और नाटकों में जो सौन्दर्य और रहस्य-पूर्ण शृंखला पाई जाती है तथा उनमें हास्य और आनन्द के सम्मिश्रण का जो विशिष्ट गुण पाया जाता है, वह आयर्लैण्ड के किसी भी पूर्व लेखक में नहीं था। उनके 'हवा का मेजबान'[3], 'चुराया हुआ शिशु'[4] और 'दि फिडलर ऑफ़ डूनी' नामक रचनाओं से उक्त बात का पता चल सकता है।

---

१. A Poet to His Beloved
२. Ideals in Ireland
३. The Host of the Air
४. The Stolen Child

यीट्स महोदय ने अपने नाटकों के प्रत्येक संस्करण में श्रीमती ग्रेगरी की सहायता के लिए उनका आभार माना है और श्रीमती ग्रेगरी की लिखी हुई 'परमात्मा और लड़ाकू आदमी'[1] की बड़ी प्रशंसा की है। यीट्स ने यह बात स्वीकार की है कि ग्राम्य-गीतों के लिखने में वे श्रीमती ग्रेगरी की रचनाओं से बहुत कुछ अनुप्राणित हुए हैं।

१९३९ ई० में यीट्स इस संसार से चल बसे।

१. The Gods and Fighting Men

# व्लाडिस्लॉ स्टेनिस्लॉ रेमॉण्ट

१९२४ई० का नोवल पुरस्कार व्लाडिस्लॉ रेमॉण्ट को प्राप्त हुआ था। हेनरिक सीनकीविच के ऐतिहासिक और धार्मिक उपन्यास लिखने के बाद पोलैंड में कोई भी विख्यात लेखक नहीं हुआ था। रेमॉण्ट के प्रादुर्भाव ने नई पीढ़ी का गौरव बढ़ाया और पोलैंड को पुनः संसार के समक्ष मान प्राप्त हुआ। पुरस्कार की घोषणा के कुछ सप्ताह पूर्व ही रेमॉण्ट के 'किसान'[1] नामक उपन्यास के पूर्वार्द्ध का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित हुआ था जिसका नाम 'पतझड़'[2] रखा गया था। अनुवादक माइकेल जिविकी थे, जो उन दिनों क्रैकाउ विश्वविद्यालय के अध्यापक थे। जब तक नोवल-पुरस्कार की घोषणा नहीं हो गई, इस पुस्तक की ओर लोग आकर्षित नहीं हुए थे।

रेमॉण्ट का परिवार मध्यवित्त श्रेणी का था। उनके पिता एक चक्की के मालिक थे और कोबियाला वीलका (जो उन दिनों रूसी पोलैंड में था) में रहते थे। रेमॉण्ट का जन्म १८६८ ई० में हुआ था। रेमॉण्ट खेती और पशु-पालन में घरवालों को सहायता भी देते थे और गांव के स्कूल में पढ़ने भी जाते थे। इस प्रकार उनका आरम्भिक जीवन चरवाहों और गांव के खिलाड़ी लड़कों के साथ व्यतीत हुआ। वे पशुओं के एक बड़े झुण्ड को चराया करते थे। उनके पिता ऑर्गन बाजा बजाने में गांव में सबसे कुशल समझे जाते थे। रेमॉण्ट हाई स्कूल की व्यायामशाला में भी भर्ती हुए। उन्होंने रूस के इस नियम का कि स्कूल में पोलैंड की भाषा नहीं बोलनी चाहिए, अनेक बार उल्लंङ्घन किया। इसके कारण उन्हें एक बार स्कूल से निकाल भी दिया गया था।

कई तरह के काम करने और व्यापारादि का कुछ अनुभव प्राप्त कर लेने के कारण रेमॉण्ट अपनी कई कहानियों में अपने इस ज्ञान का उपयोग भी कर सके हैं। स्कूली शिक्षा समाप्त करने के बाद वे कुछ दिनों तक एक दुकान में क्लर्क रहे। इसके बाद रेलवे में काम करने लगे और कुछ ही दिनों पश्चात् तार का काम सीखकर टेलीग्राफ ऑपरेटर (तारयंत्र-संचालक) बन गए। उनकी यात्रा करने की इच्छा बहुत प्रबल थी। 'स्वप्नदर्शी'[3] में उनकी वह इच्छा पूर्णतः प्रकट हुई है और उन्होंने इस पुस्तक के नायक को यात्रा का अपना ही सा अभिलाषी बनाया है। कुछ समय तक उन्होंने एक कम्पनी में अभिनय

१. The Peasants　　२. Autumn
३. The Dreamer

का काम भी किया था जिसके अनुभव का वर्णन उन्होंने अपने 'दि कमेडिन एण्ड लिली' नामक रचना में किया है। कुछ दिनों तक वे एकाध जगह काम सीखते और इस प्रकार उम्मीदवारी भी करते रहे थे। 'प्रतिज्ञाभूमि'[1] में उन्होंने पूंजीपतियों और भूस्वामियों के विरुद्ध जो कुछ लिखा है, वह इन्हीं दिनों के अनुभव के आधार पर लिखा गया है। 'किसान' में रेमॉण्ट ने कृषकों और ग्राम्य-जीवन का सच्चा चित्र खींचा है। टॉमस हार्डी और जॉर्ज मिरेडिथ की तरह रेमॉण्ट ने भी अपनी कहानियों और उपन्यासों में प्रकृति को सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण उपकरण बनाकर लिखा है। उपर्युक्त पुस्तक में रेमॉण्ट ने यागना का चरित्र-चित्रण बहुत ही सुन्दर किया है।

पोलैंड के किसानों का वर्णन साहित्य में लाना अकेले रेमॉण्ट का ही काम नहीं था। उनके अतिरिक्त व्लाडिस्लॉ आर्कन, जॉन फैलप्रोविज और स्टेनिस्लॉ ने भी इस प्रकार की रचनाएं की हैं।

'किसान' नामक उपन्यास में उन्होंने गहन भावनाओं से पूर्ण दृश्य भी भरे हैं। इसे पोलैंड की लोकोक्तियों का खजाना भी कह सकते हैं। प्रेम, घृणा और परिशोध तथा लगातार मदिरा पीने के कारण दासतापूर्ण मानसिक वृत्ति एवं भूस्वामियों का भय आदि बड़े ही सुन्दर ढंग से चित्रित किए गए हैं। साथ ही यह भी दिखाया गया है कि इन सबके पीछे क्रांति की भावना किस प्रकार सो रही है। प्राकृतिक वर्णन में खलियान और जंगल की सोंधी सुगन्ध, सुरभित हरियाली और मनोहर सूर्यास्त तथा भयानक तूफान आदि के वर्णन अत्यन्त आकर्षक हैं। 'पतझड़'[2] के अंतिम परिच्छेद में अत्यन्त काव्यात्मक और आदर्शपूर्ण अंश वह है जब विश्वासपात्र वधूवा की आत्मा उसके बहुत दिनों तक कष्ट सहन और सेवा करने के पश्चात् शरीर से पृथक होती है।

पाठकों की जानकारी के लिए उपर्युक्त वर्णन का कुछ दृश्य नीचे उद्धृत किया जाता है :

" और वह और भी ऊंचाई पर उड़ती गई यहां तक कि उड़ते-उड़ते एक जगह जाकर उसे रुकना पड़ा।

" वहां न तो करुणापूर्ण क्रन्दन सुनाई देता है और न शोक-संतप्त आहें।

" वहां केवल कुमुदिनी अपने प्राण-पद सौरभ का प्रसार करती है, वहां पुष्प-वाटिकाएं अपनी मधुमय सुगन्ध से वायुमंडल को भर देती हैं, वहां उज्ज्वल नदियों की धाराएं अगणित रंगों से आवृत पिण्ड पर प्रवाहित होती हैं, वहां निशा का आगमन कभी नहीं होता— "

इस उपन्यास में बहुत-से भावनापूर्ण और काव्यात्मक अंश हैं। किन्तु वे अंग्रेजों की रुचि के अनुकूल नहीं हैं। रेमॉण्ट ने इस उपन्यास में पोलैंड के कृषक-जीवन के प्रत्येक पहलू पर प्रकाश डाला है। इसमें मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि, यथार्थवाद और गूढ़

१. The Promised Land
२. The Autumn

आदर्शवाद का पूर्ण सम्मिश्रण है। इसकी दो जिल्दों[1] में जिन घटनाओं का वर्णन है वे अधिक सबल और सजीव हैं। रेमॉण्ट में यह दोष अवश्य है कि वह वर्णन को संक्षिप्त रूप में नहीं लिख सके। प्रोफेसर रोमन डिबनास्की ने अपने 'आधुनिक पोलिश साहित्य'[2] नामक पुस्तक के तीसरे परिच्छेद में रेमॉण्ट की काफी समालोचना की है और उन्हें सीनकीविच की अपेक्षा नीचे दर्जे का लेखक माना है। जो हो, प्रेम, घृणा, यंत्रणा और आह्लाद का वर्णन रेमॉण्ट ने जैसा किया है वह किसी भी पोलिश लेखक के वर्णन से निम्नश्रेणी का नहीं है और एक बार पढ़कर पाठक उसे भुला नहीं सकते।

१९२४ ई० में नोवल पुरस्कार प्राप्त करने के पश्चात् वे विशेष कुछ नहीं लिख सके और ५ दिसम्बर, सन् १९२५ ई० को उनका देहान्त हो गया।

---

१. इस पुस्तक में कुल चार जिल्दें हैं।
२. The Modern Polish Literature

# जॉर्ज बर्नार्ड शॉ

१९२५ ई० में नोबल-पुरस्कार को पचीस वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में उत्सव मनाने का समारोह हुआ। इस वर्ष के पुरस्कार प्राप्तकर्ता आयर्लैण्ड के प्रसिद्ध नाटककार जॉर्ज बर्नार्ड शॉ हुए। अभी तीन वर्ष पहले ही आयर्लैण्ड के प्रसिद्ध कवि और नाटककार विलियम बटलर यीट्स को यह पुरस्कार मिल चुका था, इसलिए आयर्लैण्ड की इस पुनरावृत्ति पर बहुत-से आलोचकों ने कटाक्ष किया।

जिस समय बर्नार्ड शॉ के पास पुरस्कार की सूचना भेजी गई, उसके एक सप्ताह बाद तक स्वीडिश एकैडमी को उन्होंने कोई जवाब नहीं भेजा, जिससे लोगों ने यह अनुमान लगाना आरम्भ कर दिया कि बर्नार्ड शॉ यह प्रतिष्ठा नहीं ग्रहण करेंगे। कुछ पत्रों ने बर्नार्ड शॉ के इस विलम्ब के कारण उनकी भर्त्सना भी की। स्वीडन के एक दैनिक पत्र ने तो यहां तक लिखा कि शॉ महोदय शहर से बाहर जाकर कहीं एकान्त में इस बात का विचार कर रहे होंगे कि उन्हें पुरस्कार ले लेना चाहिए या नहीं। उस पत्र ने इस बात की भी संभावना प्रकट की कि शायद बर्नार्ड शॉ के मित्र उन्हें पुरस्कार ले लेने के लिए राजी करने में लगे होंगे। यद्यपि अन्त में शॉ महोदय ने पुरस्कार स्वीकार कर लिया, किन्तु साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि मुझे और कीर्ति की आवश्यकता नहीं है। पुरस्कार में जो धन प्राप्त हुआ है, उसका उपयोग स्वीडन और ब्रिटिश द्वीपों के बीच साहित्यिक सामंजस्य को प्रोत्साहन देने में किया जाए।

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ का जन्म २६ जुलाई, सन् १८५६ ई० में डबलिन में हुआ था। ये अपने पिता कार शॉ की तीसरी सन्तान और एकमात्र पुत्र थे। उनके पिता अपनी कुलीनता की डींग बहुत हांका करते थे। किन्तु पुत्र बर्नार्ड शॉ में यह गुण या दुर्गुण नहीं आया। अपने पिता से बर्नार्ड शॉ ने हास्यप्रियता का गुण अवश्य ही ग्रहण किया।

बर्नार्ड शॉ की मां अपने पति से बीस वर्ष छोटी थीं। इनका नाम था लुसिण्डा एलिजाबेथ गर्ली। बर्नार्ड शॉ की ननिहाल एक गांव में थी। उनकी मां संगीत का अच्छा ज्ञान रखती थीं। जॉर्ज ली नामक एक संगीत-शिक्षक का माता और पुत्र दोनों ही पर प्रभाव पड़ा था। बर्नार्ड शॉ बचपन से ही बड़ी स्वतन्त्र प्रकृति के थे। बाद में इनकी मां लन्दन के किसी स्कूल में संगीत की शिक्षा देने लगी थीं और सत्तर वर्ष की अवस्था तक उन्होंने यह कार्य जारी रखा। 'कैण्डिडा' नामक नाटक में बर्नार्ड शॉ ने

अपनी मां का आंशिक चरित्र-चित्रण किया है। और 'तुम कदापि नहीं वता सकते'[१] में उन्होंने श्रीमती क्लैण्डन को अपनी माता के रूप में पूर्णतः चित्रित किया है।

अपनी व्यंग्य और विद्रूपपूर्ण रचना में उन्होंने अपने बाल-जीवन का स्मरण किया है और उसे 'वेकारी और शैतानी की अवधि' कहा है। उनके चाचा डवलिन में एक शिक्षक थे। इन्होंने वर्नार्ड शॉ को लैटिन भाषा का व्याकरण पढ़ाया था। किन्तु बालक वर्नार्ड शॉ ने चौदह वर्ष की अवस्था में ही स्कूल छोड़ दिया। उसके वाद पांच वर्ष तक वे क्लर्की करते रहे। सोलह वर्ष की अवस्था के बालक के लिए यह कार्य कठिन ही था, किन्तु वर्नार्ड शॉ ने काफी योग्यता और अध्यवसाय का परिचय दिया।

१८७६ ई० से १८८५ ई० तक वर्नार्ड शॉ को विभिन्न परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। उन्हें वहुधा कठिन परिश्रम करने के वदले वहुत थोड़े पैसे मिलते थे और अपनी अभिलाषाओं को दवाकर रखना पड़ता था। उन दिनों वे जो कुछ लिखकर कहीं भेजते थे, वह प्रायः विना छपे ही वापस आ जाता था। इन असफलताओं के बाद वर्नार्ड शॉ ने सामाजिक समस्याओं का अध्ययन आरम्भ कर दिया और इस कार्य में अद्भुत साहस का परिचय दिया। बाद में चलकर उन्होंने अपने वचपन की पांच कृतियों की खिल्ली उड़ाई है और पहली कहानी के सम्बन्ध में लिखा है कि वह इतनी बुरी थी कि उसे चूहों ने भी कुतरने से इन्कार कर दिया।

वर्नार्ड शॉ के आलोचकों ने लिखा है कि उनकी रचना में आदर्श जैसी कोई वस्तु नहीं है और उनके पुरस्कार मिलने पर भी यह प्रश्न उठाया गया, किन्तु यह कोई नई वात नहीं थी। अनातोल फ्रांस और नट हैमसन के सम्बन्ध में भी ऐसी ही आपत्ति की गई थी। किन्तु वर्नार्ड शॉ की कई रचनाओं में आदर्शवाद की झलक मिलती है। 'मनुष्य और असाधारण मनुष्य'[२], 'कैण्डिडा' और 'श्रीमती वारेन का पेशा'[३] तथा 'मेजर वारवरा'[४] की कितनी ही पंक्तियों से उपर्युक्त वात का प्रमाण मिलता है। 'शस्त्र और मनुष्य'[५] और 'फैनी का पहला खेल'[६] इस दृष्टि से पढ़ी जा सकती हैं। वर्नार्ड शॉ की रचनाओं में व्यंग्य और विद्रूप का वाहुल्य है। उनका हास्य वड़ा प्रगाढ़ और विनोद मनुष्यतापूर्ण होता है। समाज पर जैसी चुटकी इन्होंने ली है वे अपने ढंग की अपूर्व हैं। 'सेव-गाड़ी'[७] नामक उनका नाटक वहुत प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका है। उन्होंने अपने सम्बन्ध में स्वयं लिखा है कि जब मैं अपनी रचनाओं के सम्बन्ध में गम्भीर वात करता हूं तो लोग हंसते हैं, और जब मैं विनोद करता हूं तो मुझे महान दूरदर्शी समझते हैं।

वर्नार्ड शॉ की आदतें विचित्र थीं। सत्तर वर्ष से अधिक अवस्था हो जाने पर भी वे नित्य कई मील सुवह और कई मील शाम को टहलते और घण्टों पानी में तैरा करते।

---

१. You Never Can Tell　　२. Man and Superman
३. Mrs. Warrens Profession　　४. Major Barbara
५. Arms and Man　　६. Fanny's First Play
७. The Apple Cart

इस अवस्था में भी वे जवानों को मात करनेवाला स्वास्थ्य रखते थे। बहुत-से लोग उन्हें अक्खड़-मिज़ाज साहित्यिक कहते हैं, क्योंकि वे प्रायः किसीसे मिलना-जुलना कम पसन्द करते थे। आयर्लैण्ड के निवासी होते हुए भी आप प्रायः इंग्लैण्ड में ही रहा करते थे। आपने अपने निवासस्थान पर यह वाक्य लिखकर टांग रखा था :

'लोग कहते हैं। क्या कहते हैं ? कहने दो।'[1]

इसका सारांश यह है कि दुनिया के कहने-सुनने की परवाह मत करो।

बर्नार्ड शॉ के उपन्यासों के प्रति लोगों की रुचि बाद में बढ़ी—विशेषकर इनके 'युक्तिहीन ग्रन्थि'[2], 'कलाकारों में प्रेम'[3] और 'कैशल बॉयरन का पेशा'[4] अधिक प्रसिद्ध हुए। इनमें से अन्तिम उपन्यास का नाटक बनाकर रंगमंच पर खेला जा चुका है। यद्यपि इन उपन्यासों में अद्भुतता का सामंजस्य पर्याप्त रूप से है, पर ये किसी न किसी आर्थिक और सामाजिक प्रश्न को लेकर लिखे गए हैं। इनमें से अन्तिम उपन्यास को पढ़कर स्टिवेन्सन ने विलियम आर्चर को लिखा था : "यह (उपन्यास) उन्माद और माधुर्य से परिपूर्ण है। लेखक में स्कॉट और ड्यूमा की भांति शौर्य की रुचि तो है ही, साथ ही इसमें 'समाजसत्तावाद'[5] का पुट भी है। मेरा विश्वास है कि वे (लेखक) अपने हृदय में सोचते होंगे कि यथार्थवाद रूपी ठोस स्फटिक की खान खोदने का परिश्रम कर रहे हैं।" 'वैप-बुक' नामक पत्रिका के प्रतिनिधि से भेंट करने पर बर्नार्ड शॉ ने नवम्बर, सन् १८९६ ई० में यह अहम्मन्यतापूर्ण वक्तव्य दिया था कि मेरे भाग्य में लन्दन को सुशिक्षित बनाना लिखा था, किंतु मैं अपने अनुगामियों को न तो अच्छी तरह समझ ही सका, न उन्हें अपने विचार समुचित रूप से समझा ही सका।

जिस समय वे 'पॉलमाल गजट' के समालोचकों में नियुक्त किए गए, उसी समय से उनके साहित्यिक जीवन में एक अनोखा परिवर्तन आरम्भ हो गया। यह स्थान उन्हें विलियम आर्चर की सहायता से प्राप्त हुआ था। इसके पश्चात् उन्हें एडमण्ड येट्स के द्वारा 'दि वर्ल्ड' और 'दि स्टार' नामक पत्रिकाओं में भी स्थान मिला। उन्होंने संगीत, नाटक और चित्रकला की समालोचनाएं लिखीं और सामाजिक तथा आर्थिक प्रश्नों पर भी अनेक निबन्ध लिखे। इन्हीं दिनों उनकी मित्रता क्लेमेण्ट शार्टर, डब्ल्यू० ई० हेनली और विलियम से हो गई। सामाजिक प्रसंग को लेकर उन्होंने अपनी लेखनी में कार्ल मार्क्स, सिडनी वेब, एनी बीसेण्ट का प्रभाव दिखलाया और सार्वजनिक सभाओं में बोलने का भी अभ्यास किया, यद्यपि इस अंतिम कार्य में उन्हें बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा और उन्होंने फैबियन सोसाइटी में प्रति सप्ताह वक्तृता देने के नियम का पालन किया। १८८९ ई० में उन्होंने समाजसत्तावाद पर फैबियन सोसाइटी द्वारा प्रकाशित निबन्ध-माला का सम्पादन किया। बाद में चलकर उनके विचार साम्यवाद के विरुद्ध हो

१. "They say. What they say ? Let them say."
२. Irrational Knot
३. Love Among the Artists
४. Cashel Byron's Profession
५. Socialism

गए और इन्होंने खुद लिखा कि मैं अब परिवर्तित हो चुका हूं और सचमुच में एक अद्‌भुत मनुष्य हूं !

अपने व्याख्यानों, निबन्धों और उपन्यासों में उन्होंने कला, संगीत, विज्ञान और समाज के सम्बन्ध में अपना विशेष अनुभव प्रकट किया है। अनेक स्थलों पर उन्होंने ऐसे गर्व के साथ अपने विचार प्रकट किए हैं जिसके कारण आलोचकों ने उनपर बड़े ही व्यंग्यपूर्ण आक्रमण किए हैं। 'दि रिव्यू ऑफ़ रिव्यूज़' नामक पत्रिका के १९१९ ई० के अंकों में जो व्यंग्यचित्र प्रकाशित हुए हैं, उन्हें देखकर हंसी रोकना कठिन हो जाता है। इन व्यंग्यचित्रों का आलेखन मैक्स बीरबॉन ने किया है। इनमें एक स्थान पर उन्होंने बर्नार्ड शॉ की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि शॉ महोदय का ऐसा आकर्षक व्यक्तित्व है कि वे लगभग सबपर अपना प्रभाव डाल देते हैं। वे अपने सम्बन्ध में कही गई प्रत्येक बात बड़े मनोयोगपूर्वक सुनते हैं। उनमें अहम्मन्यता का जो भाव प्रचुर मात्रा में पाया जाता है उसका कारण यह भी है कि वे इसके द्वारा लोगों को बनाने की चेष्टा करते हैं, क्योंकि इस प्रकार वे उन लोगों को, मन में चुभनेवाली बातें कह आनन्दित होते हैं, जिनमें रसिकता का अभाव होता है। उनका गर्व उनकी रचनाओं में भी कभी-कभी फूट निकलता है—'आचारवादियों के लिए तीन नाटक'[१] की भूमिका में यह स्पष्ट रूप से व्यक्त हुआ है। आप लिखते हैं : "अधिकांश नाटककार अपनी रचनाओं की भूमिका स्वयं इसलिए नहीं लिखते कि वह लिख ही नहीं सकते, क्योंकि नाटककारों में आध्यात्मिक चेतनता और दार्शनिकता का अभाव होता है। मेरा कहने का अभिप्राय यह है कि मैं अपनी प्रशंसा करवाने के लिए दूसरे लेखक से भूमिका क्यों लिखवाऊं जबकि मैं स्वयं अपनी प्रशंसा कर सकता हूं और मैं उसे लिखने के लिए अपने को अयोग्य नहीं पाता। आलोचना करने में मैं सभी समालोचकों को छकाने की भरपूर शक्ति रखता हूं। रही दार्शनिकता, सो तो मैंने ही इन आलोचकों को पढ़ाई है, जो मेरी ही भरी बन्दूक लेकर मुझपर निशाना लगा रहे हैं। वे लिखते हैं कि मैं इस प्रकार लिखता हूं जैसे मनुष्यों में बुद्धि बिना इच्छाशक्ति या हृदय के ही हो। मैं कहता हूं कि 'इच्छाशक्ति' और 'बुद्धि' का अन्तर समझने की ओर उनका ध्यान बर्नार्ड शॉ ने ही आकर्षित किया है—शोपेनहॉर ने नहीं—।" इसी भूमिका में आपने अपने उस आरम्भिक दिन का भी स्मरण किया है जब हाइड पार्क में आपने पहले-पहल ब्रिटिश जनता को अपना व्याख्यान सुनाया था। इसी भूमिका में आपने लिखा है कि मैं स्वभावतः ही साहसी और सबपर प्रभाव जमा लेनेवाला पैदा हुआ हूं।

'रंडुओं के घर'[२] नामक पुस्तक उन्होंने १८९२ ई० में विलियम आर्चर के सहयोग से लिखी थी। यह इनकी नाट्य-रचना की आरम्भिक सफलता थी। इस रचना से साम्यवादियों में बड़ी प्रसन्नता फैली क्योंकि इसमें कपटाचारी जमींदारों के प्रति काफी उद्‌गार

---

१. Three Plays for Puritans
२. Widower's Houses

प्रकट किए गए हैं। १८९८ ई० में 'प्रिय और अप्रिय नाटक'[1] प्रकाशित हुआ जिससे शॉ महोदय हास्य, व्यंग्य, दर्शन और साहसपूर्ण विचारों के उत्तम लेखक मान लिए गए। पीछे जब 'दि फिलेण्डरर', 'श्रीमती वारेन का पेशा', 'कैण्डिडा', 'शस्त्र और मनुष्य', 'भाग्यवान पुरुष'[2] और 'आप कभी नहीं बतला सकते' आदि नाटक छपे तो इनके नाट्य-कला ज्ञान की धाक जम गई। इसके तीन वर्ष पश्चात् 'आचारवादियों के तीन नाटक', 'शैतान का शिष्य'[3], 'सीजर और क्लियोपाट्रा' और 'कप्तान ब्रासबाउण्ड का धर्म-परिवर्तन'[4] आदि रचनाएं प्रकाशित हुईं। 'शैतान के शिष्य' में शॉ महोदय ने डिक डजियन नामक एक अद्भुत पात्र की सृष्टि की है। इसमें क्रूरता और दार्शनिकता से पूर्ण चरित्र भी चित्रित किए गए हैं। 'भाग्यवान पुरुष' और 'सीजर और क्लियोपाट्रा' में से दोनों ही अपेक्षाकृत घटिया श्रेणी के नाटक हैं।

'मनुष्य और असाधारण मनुष्य'[5] १९०५ ई० में रंगमंच पर अभिनीत हुआ था। इसमें वार्तालाप लम्बे हैं और नाटकीय भाव कम हैं। 'जानबुल का दूसरा द्वीप' की तरह यह भी एक विचार-प्रधान नाटक है। 'मनुष्य का नया पतन'[6], 'मेजर बरबारा', 'आलोचकों की प्राथमिक सहायता का निबन्ध'[7] और 'फैनी का पहला नाटक' आदि व्यंग्य और उपदेशपूर्ण नाटक हैं। लेखक ने बड़े जोरदार शब्दों में दरिद्रता को मुक्ति के लिए एक पौष्टिक औषध बतलाया है। किन्तु इनमें से अन्तिम नाटक में आध्यात्मिक तर्क होते हुए भी नाटकीय गुण लुप्त नहीं हुए हैं।

इन गम्भीर तत्त्वों से पूर्ण नाटकों के अतिरिक्त बर्नार्ड शॉ ने कुछ हल्के नाटक भी लिखे हैं, जिनका प्रचार विशेषतः कॉलिज के विद्यार्थियों और शौकिया तौर पर अभिनय करनेवालों में हुआ है—साथ ही पेशेवर अभिनेताओं में भी इनका पर्याप्त रूप से प्रचार हुआ है। इस प्रकार के नाटकों में 'ऐण्ड्रोक्लीज एण्ड दि लायन', 'पिगमेलियन' और 'बैक टू मेथ्यूसिला' अधिक प्रसिद्ध हैं।

बर्नार्ड शॉ की रचनाओं में अद्भुतता का प्रभाव होता है। उनकी प्रारम्भिक रचनाओं—'कैण्डिडा', 'श्रीमती वारेन का पेशा' और 'शस्त्र और मनुष्य'—में यही बात है और इनमें दिखावटी रूढ़िवाद को लेखक ने एक प्रकार की चुनौती-सी दी है। ऐतिहासिक नाटकों—'भाग्यवान पुरुष', 'सीजर और क्लियोपाट्रा' तथा 'सेण्ट जोन' में इसे और भी पुष्टता के साथ व्यक्त किया गया है। इनमें से पहले दो नाटकों की कटु समालोचनाएं हुई हैं। 'सेण्ट जोन' के सम्बन्ध में तो एक समालोचक ने यहां तक लिख मारा है कि लेखक ने जैसे यह पुस्तक नोबल पुरस्कार प्राप्त करने के ही उद्देश्य से लिखी थी, क्योंकि इसमें नोबल पुरस्कार के लिए विघोषित विशिष्ट गुणों—आदर्श और मानवता—का

---

१. Plays, Pleasant and Unpleasant २. The Man of Destiny
३. The Devil's Disciple
४. Captain Brassbounds Conversion ५. Man and Superman
६. A New Fall of Man ७. Essay as First Aid to Critics

समावेश किया गया है। इसमें सजीव व्यंग्य और विलक्षण काव्यगुण सन्निविष्ट हैं। इसमें सभी नाट्यकौशलोपयोगी गुणों को चरम सीमा पर पहुंचा दिया गया है और चरित्र-चित्रण अन्तर्दृष्टि का उपयोग करते हुए किया गया है। जोन नामक एक ऐसी कृषक युवती की कल्पना की गई है जो मध्यकालीन युग के लोगों की भांति ईश्वर और सन्तों में विश्वास करती है। लेखक ने उसके अन्दर ऐसा आकर्षण दिखाया है जो सर्वसाधारण को अपनी ओर खींच लेता है—साथ ही उसमें सैनिक-कौशल का भी अभाव नहीं है। जोन में वे समस्त आकर्षण मौजूद हैं जो एक सुन्दर नाटक की नायिका में होने चाहिएं।

अद्भुतता के अभाव में शॉ महोदय ने अपनी रचना में व्यंग्य को शैली के रूप में व्यवहार किया है जिसके कारण कभी-कभी व्यंग्य ऐसे तीव्र दुर्वाक्य के रूप में प्रयुक्त हो गए हैं जिन्हें अवाञ्छनीय कह सकते हैं। शेक्सपियर की आलोचना में उन्होंने अनेक स्थलों पर ऐसी ही व्यंग्यपूर्ण शैली का उपयोग किया है। शॉ महोदय मिथ्या और भ्रमात्मक धारणा के शत्रु-से थे। उनकी रचनाओं में एक बड़ा संघर्ष पाया जाता है और वह है व्यक्तिगत इच्छा और सामाजिक प्रणाली का, जिसके कारण इच्छा की स्वतन्त्रता को बड़ा भारी धक्का पहुंचता है।

उपर्युक्त बात उनकी 'कैण्डिडा' नामक रचना पर पूर्णतः लागू होती है जहां मार्च बैंक नामक एक प्रणय का भूखा कवि बालक पुरुष के रूप में परिवर्तित होकर माँइकेल नामक एक गर्वीले गृहस्थ से कहता है, "क्या आप यह समझते हैं कि स्त्री की आत्मा आपके युक्तियुक्त उपदेश पर जीवित रह सकती है?" 'श्रीमती वारेन का पेशा' नामक नाटक में भी इस प्रसंग पर विचार किया गया है। पाठक को कपटतापूर्ण रूढ़िवाद और विरोधवाद में से एक को चुनना और अपनाना पड़ता है। इसमें विवी नामक लड़की पहले अपनी मां की प्रकट प्रतिष्ठा के सम्बन्ध में उत्सुक होती है और फिर उससे विद्रोह करती है। वह कहती है, "मां, यदि तुम्हारी जगह मैं होती, तो मैं भी तुम्हारा जैसा काम ही कर सकती थी; पर मैं यह न पसन्द करती कि मैं विश्वास तो कुछ और करूं और जीवन दूसरे ढंग से व्यतीत करूं।"

'मनुष्य और शस्त्र' नामक नाटक में बर्नार्ड शॉ ने एक सुखान्त घटना का चित्रण ऐसे ढंग से किया है कि उसे अद्भुतता-रूपी मूर्खता पर एक प्रबल व्यंग्य का नाम दिया जा सकता है। इसमें सैनिक ढंग की वीर-पूजा की भावना भी भरी गई है। बर्नार्ड शॉ ने अपनी इस रचना में युद्ध-विरोधी भाव उससे बहुत पहले ही सन्निविष्ट किए थे जब शान्ति-सम्बन्धी आन्दोलन ने ज़ोर पकड़ा था। 'सेब-गाड़ी' नामक नाटक में उन्होंने प्रजावाद के विरुद्ध भी बहुत-सा विष उगला है। इसकी भूमिका में लेखक ने इस नाटक के सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा है। जिन लोगों ने इसे रंगमंच पर अभिनीत होते देखा है, उन्होंने इसे पाठकों की अपेक्षा अधिक पसन्द किया है। इस नाटक की गणना बर्नार्ड शॉ के व्यंग्यात्मक सुखान्तों में है। इसमें वार्तालाप के द्वारा सम्राट् और प्रधान सचिव के शासन की असफलता दिखलाई गई है और यह दिखलाया गया है कि सरकार वास्तव

में क्या कर सकती है। भूमिका में भी इसपर काफी प्रकाश डाला गया है। नाटक के बाईसवें पृष्ठ पर लिखा गया है : "ऐसी अवस्था में प्रजातन्त्र राज्य प्रजा के द्वारा नहीं, वरन् प्रजा की स्वीकृति से होता है।" इस सम्बन्ध में विशेष जानकारी प्राप्त करने के लिए लेखक ने अपनी 'बुद्धिमती स्त्रियों के लिए साम्यवाद और पूंजीवाद'[1] नामक पुस्तक पढ़ने का आदेश किया है, जिसमें उन्होंने प्रजावाद की समस्या को सुलझाने का प्रयत्न किया है।

जिस समय नये विचारों के लिए बर्नार्ड शॉ की प्रशंसा की गई तो उन्होंने उसका खंडन करते हुए लिखा : "मैं दूसरों के मस्तिष्क की चोरी करने में अकुशल नहीं हूं और अपने मित्रों में सबसे अधिक भाग्यवान रहा हूं।" अपनी समस्त रचनाओं में उन्होंने लोकमत का सदैव विरोध किया है। उनकी रचनाओं को पढ़कर पाठकों को ऐसा प्रतीत होता है मानो उन्होंने कोई निश्चित सत्य का उल्लेख न करके ऐसी ही बातें अधिक लिखी हैं जो विरोध-भाव उत्पन्न करने के लिए चुनौती भी मानी जा सकती हैं। उन्होंने सोवियत रूस के सम्बन्ध में भी ऐसी ही निन्दात्मक बातें लिखी हैं। जिन लोगों से उनकी अधिक घनिष्ठता है उनके प्रति समय पर दयालुता और सहृदयता दिखाने में भी वे नहीं चूकते। कला-कौशल के प्रत्येक क्षेत्र में काम करनेवाले सच्चे और उत्साही कार्यकर्ताओं को प्रोत्साहन देने में कभी नहीं हिचकते। अपने घर पर वे लोगों का अच्छा आगत-स्वागत करते थे। उन्होंने चालीस वर्ष की अवस्था में विवाह किया था और उनकी स्त्री बड़े ही संयत स्वभाव की और घरेलू मामलों में कोमल व्यवहार-वाली थीं। अर्नेस्ट ब्यायड का कथन है कि बर्नार्ड शॉ को अपनी जन्मभूमि आयर्लैण्ड से लन्दन भाग आने में अधिक लाभ हुआ है क्योंकि यहां उन्हें अधिक स्वतन्त्रता मिल गई थी और उनके अन्दर एक ऐसी निरपेक्षता आ गई थी कि वे अपने शत्रु की भी प्रशंसा कर देते थे, आयर्लैण्ड में रहकर वे ऐसा नहीं कर सकते थे। देशभक्ति के भावों से शॉ महोदय द्रवित नहीं होते थे और अपने विचार के अनुसार ही अनुकूलता या प्रति-कूलता ग्रहण कर लेते थे।

विलियम लॉयन फेल्प्स ने कहा है कि समाज-विज्ञान और सामाजिक इतिहास के विद्यार्थियों के लिए बर्नार्ड शॉ के नाटकों का अध्ययन अनिवार्य है।

शॉ का शरीरान्त १९५० ई० में हुआ।

---

१. Intelligent Women's Guide to Socialism and Capitalism

# ग्रेज़िया डेलेडा

१९२६ ई० का नोवल पुरस्कार सार्डीनिया (इटली) की विख्यात कहानी-लेखिका ग्रेज़िया डेलेडा को मिला। वे दूसरी स्त्री थीं जिन्हें नोवल पुरस्कार पाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, क्योंकि १९०९ ई० में सेल्मा लागरलोफ को भी यह पुरस्कार मिल चुका था। इटली को यह नोवल पुरस्कार दूसरी बार मिला, क्योंकि इसके पहले १९०६ ई० में कवि कार्डूची को भी यह सम्मान मिल चुका था। पुरस्कार प्राप्त होने के पहले ही ग्रेज़िया की बहुत-सी कहानियों का अनुवाद स्कैण्डेनेवियन भाषा में हो चुका था, किंतु जब तक उन्हें पुरस्कार नहीं मिला तब तक अन्य देशों में उनका नाम नहीं हो पाया था। स्टॉकहोम स्थित नोवल पुरस्कार के निर्णायकों ने पुरस्कार प्रदान करने के दो वर्ष पहले ही सार्डीनिया की इस लेखिका की रचनाओं का पूरा परिचय प्राप्त कर लिया था और उन्हें पुरस्कार के योग्य भी मान लिया था। ग्रेज़िया डेलेडा का जन्म-स्थान नूरो था। ग्रेज़िया के पिता ने कानून का अध्ययन किया था, किंतु उन्होंने कृषि और व्यापार की ओर ही अपना मन लगाया। वे तीन बार अपने शहर नूरो के मेयर बने। वे कभी-कभी स्वान्तःसुखाय काव्य-रचना कर लिया करते थे। उनके घर अच्छे-अच्छे किसानों, पुरोहितों, कलाकारों और धर्माचार्यों का जमघट लगा रहता था और उनके पास एक सुन्दर पुस्तकालय भी था। ग्रेज़िया को सार्डीनिया की साधारण लड़कियों की अपेक्षा अच्छी शिक्षा दी गई थी और उन्होंने हाईस्कूल में इटालियन भाषा का अध्ययन किया था। जब वे १२ वर्ष की थीं उसी समय 'ट्रिव्यूना' नामक पत्रिका में एक सुन्दर लेख लिखने के कारण उन्हें ५० लीरा का एक चैक मिला। इसके बाद उनके परिवारवालों ने उन्हें उच्च शिक्षा की स्वीकृति दे दी।

ग्रेज़िया ने अपने सम्बन्ध में स्वयं लिखा है कि मैं सदा लोगों से अपनी अवस्था अधिक बतलाया करती थी। उदाहरण के लिए जब मैं तेरह वर्ष की थी तो अपने को सोलह वर्ष की इसलिए बतलाती थी कि लोग मुझे निरी बालिका न समझें। ग्रेज़िया ने केवल सत्रह वर्ष की अवस्था में 'सार्डीनिया का फूल'[1] नामक पुस्तक लिखी जिसने बाहर के लोगों को भी अपनी ओर आकर्षित किया। इसके बाद 'एनीम ओनेस्ट' (साधु आत्मा) नामक उपन्यास लिखा, जिसकी भूमिका 'रोज़ी रो बोंघी' नामक प्रसिद्ध

१. Flower of Sardinia

इटालियन साहित्यिक ने लिखी। ग्रेज़िया ने लिखा है कि यदि मैं इस पुस्तक का अधिकार दूसरे प्रकाशक को न देकर स्वयं छपवा लेती, तो मुझे लाखों की आमदनी होती।

आरम्भ में उन्होंने कुछ संक्षिप्त कहानियां और कविताएं लिखी थीं और इसके बाद बड़े उपन्यास लिखे। अपनी रचनाओं में 'हवा में सरकंडे के फूल'[1] उन्हें सबसे अधिक प्रिय थी। इस पुस्तक में प्रतिपादित किया गया है कि मनुष्य का जीवन हवा में स्थित सरकंडे के फूल के सदृश है जिसके भाग्य का निर्णय हवा के रुख पर निर्भर है। उनकी दूसरी कहानी जिसमें इनके भावों का काफी समावेश है, 'मिस्र में उड़ान'[2] है। गद्य और पद्य दोनों ही में ग्रेज़िया ने सार्डीनिया-निवासियों का सुन्दर चित्रण किया है। सार्डीनिया के संबंध में ग्रेज़िया ने स्वयं लिखा है: "मैं सार्डीनिया को अच्छी तरह जानती और उससे प्रेम करती हूं। इसके निवासी मेरे निजी आदमी हैं। इसके पर्वत और इसकी घाटियां मेरे ही अंग हैं। जब नाटक के सभी उपकरण हमारे निकट आंख खोलते ही मिल जाते हैं तो हम उन्हें ढूंढ़ने के लिए दूर के क्षितिज पर दृष्टि क्यों डालें। वास्तव में हमें उन्हीं विषयों को ग्रहण करना चाहिए जो हमारे अनुभव में आ चुके हैं।

जब तक ग्रेज़िया ने विवाह नहीं किया तब तक वे सार्डीनिया छोड़कर और कहीं नहीं गईं। पीछे जब लोम्बार्डी-निवासी महाशय मदेसानी के साथ उनका विवाह हो गया तो उन्हें अपने पति के साथ रोम जाना पड़ा, क्योंकि वहां मदेसानी महोदय को सेना-विभाग में सरकारी नौकरी मिल गई थी। रोम में उनका मकान शहर से बाहर देहात में था। इनके दो पुत्र विश्वविद्यालय से ग्रेजुएट होकर निकले। ग्रेज़िया ने जितनी पुस्तकें लिखी हैं उनका हिसाब लगाने पर एक साल में एक पुस्तक का औसत पड़ता है। स्टेनिस रद्ज़ा नामक व्यक्ति से ग्रेज़िया ने एक बार कहा था कि "मैंने लिखना शौक से शुरू किया था और अब भी शौक से ही लिखती हूं। सार्वजनिक प्रशंसा और आर्थिक सफलता ये सब बाद की चीजें हैं। जिस समय मैं कोई उपन्यास लिखने बैठती हूं तो उसका अंत पहले से नहीं सोच रखती।" ग्रेज़िया का कहना था कि उनका ईश्वर पर दृढ़ विश्वास है और वे यह मानती हैं कि ईश्वर सदा दुर्वृत्ति को पराजय देता है। कुछ समय के लिए यह भ्रम हो सकता है कि दुर्वृत्ति और पाप की विजय हो रही है, किन्तु यह भ्रम क्षणिक होता है। उनकी कहानियों में दुःखान्त की प्रधानता है। इसका कारण यह है कि ग्रेज़िया ने बचपन ही से दुःख और विपत्ति के भयानक दृश्य देखे थे। उनके पिता चूंकि मेयर थे इसलिए बहुत-से दुःखी लोग उनके घर आकर बहुत-सी गाथाएं सुनाया करते थे। बालिका ग्रेज़िया के कोमल मनोभावों पर उनका स्थायी प्रभाव पड़ा था।

शत्रुओं और चोरों द्वारा त्रस्त होकर खून-खराबी के शिकार बने लोगों के प्रति

१. Reeds in the Wind २. Flight into Egypt

ग्रेज़िया की रचनाओं में गहरी सहानुभूति है। उनकी 'माता'[1], 'नोस्टाल्जिया' और 'राख'[2] में ऐसे ही भाव प्रकट और गुप्त रूप से व्यक्त हुए हैं। इनमें से 'माता' नामक उपन्यास उनकी सारी रचनाओं की अपेक्षा अधिक विख्यात है। 'नोस्टाल्जिया' में भी मानवता की गहरी छाप है। 'राख' नामक कहानी में विषाद की गहरी छाप है। उसमें यह दिखलाया गया है कि सार्डीनिया के एक युवक के हृदय पर रोम के नैतिकताशून्य वातावरण का कैसा प्रभाव पड़ता है। यह युवक एक किसान का गैरकानूनी पुत्र होता है और नगर-निवास तथा विश्वविद्यालय के जीवन से आकर्षित होकर रोम में रहने की अभिलाषा करता है। वहां वह नैतिक और सामाजिक संघर्षों से घिर जाता है। चूंकि उसका व्यक्तित्व आकर्षक और चरित्र दुर्बल होता है, इसलिए उसे अनेक दुर्घटनाओं का सामना करना पड़ा है। जब उसकी मां सार्डीनिया से चलकर उससे रोम में मिलने के लिए आती है तो उस युवक को यह देखकर बड़ी लज्जा आती है कि उसकी नागरिक स्त्री के सामने उसकी मां कैसी सीधी-सादी और अज्ञानी है। कहानी दु:खान्त है क्योंकि अन्त में वह युवक इन दोनों ही स्त्रियों (मां और स्त्री) का विश्वास खो बैठता है और इस प्रकार खाक में मिल जाता है। इस कहानी की फिल्म भी बन गई थी और अमेरिका में सफलतापूर्वक दिखलाई गई थी। ग्रेज़िया की आरम्भिक रचनाओं में से कुछ हार्पर्स मैगज़ीन में प्रकाशित हो चुकी हैं। उनका 'घृणा' नामक नाटक रंग-मंच पर सफलतापूर्वक खेला जा चुका है। उनकी सर्वश्रेष्ठ कहानियों में से 'चमत्कार'[3] मुख्य है जो 'संसार की सर्वश्रेष्ठ कहानियां'[4] नामक पुस्तक में प्रकाशित हो चुकी है। अपने देश इटली में इनका बड़ा सम्मान है और वे १९२६ ई० में इटली के राष्ट्र-नायक मुसोलिनी द्वारा स्थापित 'इटालियन एकैडमी ऑफ़ इम्मार्टल्स' नामक संस्था के सदस्यों में चुनी गई थीं। मुसोलिनी ग्रेज़िया के परम प्रशंसक थे। किन्तु यह सब सम्मान प्राप्त होते हुए भी ग्रेज़िया सामाजिक सम्मेलनों में कम भाग लेती थी और एकान्त-जीवन ही अधिक पसन्द करती थीं।

ग्रेज़िया को भली भांति समझने में सार्डीनिया और रोम के लोगों ने बहुत भूल की। 'ट्रिब्यूना' नामक पत्रिका के समालोचक को एक पत्र लिखते हुए ग्रेज़िया ने अपने आरम्भिक दिनों को इस प्रकार याद किया है: "मैंने आरम्भ में ही सार्डीनियन चित्र चित्रित किया था जिसे केवल सार्डीनियन ही होने के कारण बहुतों ने पसन्द नहीं किया। उस समय मेरी अवस्था केवल १३ वर्ष की थी। मैंने समझा था कि मैं यह लिखकर अपने देशवासियों को प्रसन्न कर सकूंगी, किंतु मेरी सारी अभिलाषाओं पर तुषारापात हुआ और बहुत-से लोग मुझसे इतने अप्रसन्न हो गए कि पुस्तक प्रकाशित होने पर मैं पिटते-पिटते बची।"

इसी पत्र में आगे चलकर ग्रेज़िया ने लिखा है: "जो पुरुष मेरी उस रचना के

---

१. The Mother २. Ashes

३. Two Miracles ४. The Best Short Stories of The World

कारण अप्रसन्न हुए थे, वे स्त्री को द्वन्द्वयुद्ध के लिए न ललकार सकने के कारण मुझसे और तरह से बदला लेने की सोचने लगे और मुझे दुर्वाक्य कहकर, चोट पहुंचाकर तथा यह कहकर भी कि मैंने दूसरों से लिखवाकर अपने हस्ताक्षर कर दिया करती हूं, मुझसे बदला लेने लगे। फिर भी मैंने हिम्मत नहीं हारी और गद्य-पद्य दोनों ही लिखती गई।"

पद्य की अपेक्षा ग्रेज़िया की गद्य-रचना अधिक सुन्दर है, यद्यपि उनकी पद्य-रचना में भी कहीं-कहीं सुन्दर पंक्तियां देखने में आती हैं।

उनके उपन्यासों में 'तलाक के बाद' का अंग्रेज़ी अनुवाद अब अप्राप्य हो गया है। यद्यपि इसके कथानक और चरित्र-चित्रण में अनेक त्रुटियां हैं फिर भी इसमें आकर्षण काफी है। इसमें दिखलाया गया है कि इवा नामक एक स्त्री के पति को राजनीतिक अपराध में सत्ताईस वर्ष की जेल हो जाती है और बाद में सार्डीनिया में एक कानून घोषित होता है कि जिन स्त्रियों के पति राजनीतिक अपराध में सज़ा भोग रहे हैं वे दूसरे पुरुषों से विवाह कर लेने में स्वतन्त्र हैं। इसके विरुद्ध ग्रेज़िया ने उपन्यास की नायिका इवा से यह कहलाया है: "यह कैसे विचार हैं? भला ईश्वर के अतिरिक्त कोई शादी को भी रद्द कर सकता है!"

इस पुस्तक में गियोवनी का चरित्र बड़ा ही मार्मिक है। वह निराशा से अपना सिर हिलाती और हताश हो खिड़की-रहित कमरे में बैठी गोधूलि वेला में सुदूरवर्ती एकमात्र तारे को निरखती है, जिसकी क्षीण और पीली किरणों की चमक उसकी दृष्टि में पहुंचती है। दूसरा आकर्षक चरित्र प्राण्टू का है जिसके लिए संसार में दो ही प्रेम की वस्तुएं हैं—एक मदिरा और दूसरी परम सुन्दरी गियोवनी जो उसके लिए मदिरा से भी अधिक नशा करनेवाली है। प्राण्ट मार्टिना गियोवनी के प्रति उसके प्रेम को और भी उकसाती है, किंतु गियोवनी को उनकी मां और उसका जेलवासी पति—कांस्टैण्टिनो—प्राण्टू से प्रेम करने को मना करते हैं और कहते हैं कि ऐसा करना पाप है। किंतु परिस्थिति से बाध्य होकर गियोवनी का पतन होता है और उसे प्राण्टू से एक दूसरा बच्चा पैदा होता है, यद्यपि गियोवनी को अब भी कांस्टैण्टिनो से प्रेम है। इसके बाद जब कांस्टैण्टिनो जेल से छूटकर आता है, तो वह पहले तो कहीं भाग जाना चाहता है, पर अन्ततः अपनी स्त्री के प्रेम से आकर्षित होकर विदेश नहीं जाता, यद्यपि उसकी स्त्री पराई हो चुकी होती है। वह अपनी विषय-वासना को तृप्त करने के लिए एक कुरूपी अर्द्ध-विक्षिप्त लड़की मैटिया से प्रेम करने लगता है। पीछे वह गियोवनी से मिलकर कहता है: "मैं प्रतिदिन तुम्हारी प्रतीक्षा करता हूं, पर जब तुम देखती भी हो तो मुझपर शिकार की चिड़िया की तरह दृष्टिपात करती हो।"

इधर प्राण्टू एक वर्ष के लिए बाहर चला जाता है और वापस आने पर मरणासन्न हो जाता है। स्थानीय परम्परा के अनुसार मदर [illegible] कांस्टैण्टिनो से कहती है: "लगता है कि परमात्मा शनिवार को मरनेवाले को मुक्ति नहीं देता—बेचारा प्राण्टू प्राण तज रहा है।" कहानी यद्यपि दुःखान्त है, फिर भी अन्त में इसका आशा-

वरण इस प्रकार संदर बना दिया गया है: "वसंत का सुखद, संदर और कोमल दिवस है। ऊपर सुनील नभमण्डल शोभा दे रहा है। नीचे गांव के चारों ओर अनाज के खेत ऐसे लहरा रहे हैं जैसे हरे जल से परिपूर्ण सागर में वायुवेग से लहरें उठ रही हों।"

ग्रेज़िया डेलेडा की १८९१ ई० से १९३१ ई० तक कुल चवालीस पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं जिनमें से अधिकांश उपन्यास हैं। उनकी रचनाओं में से अधिकांश का अनुवाद, स्कैंडेनेवियन, जर्मन और फ्रेंच भाषाओं में हो गया है। अंग्रेज़ी में उनकी कम पुस्तकों का अनुवाद हुआ है। प्रायः उनकी सभी कथाओं का घटनास्थल सार्डीनिया है। फ्रेडरिक मिस्त्राल की तरह ग्रेज़िया ने भी अपनी रचनाओं में किम्वदन्तियों, रीति-रिवाजों और इतिहास का आधार लिया है और उन्हें अपने द्वीप की ही भाषा में लिखा है। जिस प्रकार फ्रेडरिक मिस्त्राल ने प्रॉविन्स का, कार्ल स्पिटलर ने स्विट्ज़रलैण्ड का और यीट्स ने आयर्लैण्ड का चित्रण किया है और जिस तरह सिग्रिड अण्डसेट ने मध्यकालीन नार्वे का गुणगान किया है, उसी प्रकार ग्रेजिया ने भी उच्च आदर्श और मानवता से प्रेरित होकर सार्डीनियन भाषा और अपने देश की परम्परा का जीर्णोद्धार किया है। अन्य देशवालों से भी अधिक ग्रेज़िया की रचनाओं की प्रशंसा खास इटलीनिवासियों ने ही की है। उनकी रचनाओं में नोबल पुरस्कार के आदर्शानुकूल गुण हैं—तथ्यवाद होते हुए भी उनमे आदर्शवाद और मनुष्य-जाति की भलाई का पूर्ण समावेश है। गत तीस वर्षों में यूरोपीय साहित्य में नई धारा बहानेवाले साहित्यिकों में ग्रेज़िया का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

एक इटालियन समालोचक ने उस देश की एक पत्रिका में ग्रेज़िया के संबंध में लिखा था कि उनकी साहित्यिक शैली सुबोधिनी है किन्तु उनके पात्र साधारण पाठकों की समझ में आ जाते हैं। उनकी रचनाओं पर विदेशी साहित्यिकों का प्रभाव नहीं पड़ा मालूम होता। उन्होंने न तो किसी विशिष्ट साहित्यिक की शैली का अनुकरण किया है, न दूसरे लेखकों के वर्णन को ही अपनाया है। उनकी साहित्यिक चेतना अपने-आप जाग्रत् हुई है और उन्होंने अपनी निराली शैली को आद्यन्त अक्षुण्ण रखा है। उनकी रचनाएं यद्यपि आधुनिक हैं, पर उनमें मनोवैज्ञानिकतापूर्ण प्राचीनता का आभास मिलता है। उनकी कविताओं को उनकी मातृभूमि में जैसा आदर मिला है वह भी अपने ढंग का विलक्षण है। इनकी 'इपोपे' शीर्षक कविता तो सार्डीनिया में अत्यधिक विख्यात हो गई है। लीगी पिरंडेलो नामक इटालियन ने उनकी प्रशंसा करते हुए कहा था कि वर्तमान इटली में 'ला माद्रे' (माता) जैसी कोई भी कहानी नहीं लिखी गई।

वे असाधारण लेखिका थीं; पर यह मानना पड़ेगा कि सारे पात्र और घटनास्थल सार्डीनियन होने के कारण पाठकों को उन्हें सम्यक रूप से समझने में कठिनाई होती है।

अर्नेस्ट बॉयड का कहना है कि ग्रेजिया डेलेडा में कहानी का वर्णन करने का

अद्‌भुत कौशल है और उनमें पूर्ण सजीवता है। इटली के विख्यात आलोचक टिनो मैण्टोवनी ने इस प्रकार लिखा है: "ग्रेज़िया ने दोस्तोव्स्की और गोर्की का अध्ययन अच्छी तरह किया है और उनके कतिपय पात्रों के वार्तालाप में उसकी झलक भी आ गई है। वर्णन में भी जहां उन्होंने दुखियों के क्लेशपूर्ण जीवन का चित्रण किया है, वहां उक्त लेखकों की हल्की छाया का आभास मिलता है। ग्रेज़िया ने जो मनोवैज्ञानिक वर्णन किया है, वह अंश उतना सुंदर नहीं हुआ है जितना होना चाहिए। किंतु बाह्य जगत् का जैसा सुंदर और तद्रूप वर्णन उन्होंने किया है, वह अत्यन्त शुद्ध और प्रभावोत्पादक है। वह पाठकों में यौवनावस्था की ऐसी सनसनी भर देता है जो हमें लियोपार्डी और टॉल्स्टाय की रचनाओं में ही मिल सकती है।"

सन् १९३६ में उनका देहान्त हो गया।

# हेनरी वर्गसन

१६२७ ई० में नोवल पुरस्कार हेनरी वर्गसन नामक प्रसिद्ध दार्शनिक, विचारक और उपदेष्टा को मिला। १६०८ ई० में यूकेन महोदय को भी इन्हीं गुणों के कारण पुरस्कार मिल चुका था। बीस वर्ष बाद पुनः उसी प्रकार की योग्यता के दार्शनिक को यह सम्मान प्राप्त हुआ। इन दोनों ही महानुभावों ने मौलिक और रचनात्मक विचारों की सृष्टि करके मनुष्य-जाति के ज्ञान का भण्डार बढ़ाया है और दोनों ही ने जड़वाद का विरोध किया है।

हेनरी वर्गसन का जन्म १८ अक्तूबर, १८५६ ई० में पेरिस में हुआ था। उनके पूर्वज पोलैंड के प्रसिद्ध यहूदी परिवारों में से थे। उनकी मां ने बचपन में ही उन्हें अंग्रेज़ी पढ़ाई थी और पढ़ने-लिखने में काफी प्रोत्साहन दिया था। नौ वर्ष की अवस्था में वे स्कूल में बैठाए गए। उन दिनों गणित की ओर उनकी विशेष रुचि थी और उन्हें गणित की योग्यता के लिए पुरस्कार भी मिला था। यह पुरस्कार 'एनल्स-डि-मैथेमेटिक्स' में प्रकाशित एक सवाल को हल करने के लिए प्रदान किया गया था। 'इकोल-नार्मल सुपीरियर' नामक पाठशाला में उनपर रैविसां का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा और बाद में उन्होंने 'फ्रेंच एकैडमी ऑफ़ मॉरल एण्ड पोलीटिकल साइंस' नामक संस्था में व्याख्यान देते समय रैविसां को 'कलाकार या कवि की आत्मा' तक कह डाला है।

ग्रजुएट होने के पश्चात् पहले उन्होंने ऐंगर्स, क्लेमाण्ट और अन्य स्थानों पर दर्शन के आचार्य का कार्य किया और फिर वे इकोल नार्मल सुपीरियर में अध्यापक नियुक्त होकर आ गए। १६०० ई० में वे कॉलेज-डी-फ्रांस में अध्यापन-कार्य कर रहे थे। दूसरे ही वर्ष वे इन्स्टीट्यूट के लिए चुन लिए गए और १६१४ ई० में फ्रेंच एकैडमी के सदस्य बन गए। उनके शिष्य उनकी अध्यापकीय योग्यता के परम प्रशंसक हुए और उनकी अध्यापन-शैली की उत्तमता की चर्चा फैल गई। उनके कॉलिज के लेक्चर बड़े चाव से सुने जाते थे, और बाद में उनके श्रोताओं में पर्याप्त वाद-विवाद और आलोचनाएं हुआ करती थीं।

एडविन ई० स्लॉसन महोदय ने 'मेजर प्राफेट्स ऑफ़ टु डे' नामक पुस्तक में वर्गसन के तत्वज्ञान और उपदेश का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि उनके स्वर में संगीत

भरा है और उनके शिष्यों ने तो उनकी उपमा लवा पक्षी से दी है, जो जितना ही ऊपर उड़ता है, उतनी ही मधुरता के साथ गाता है। अध्यापक के रूप में उनके आकर्षक प्रभाव की प्रशंसा भी स्लॉसन महोदय ने खूब की है। उनका उनके शिष्यों पर स्थायी और मधुर प्रभाव पड़ा है। वे चाहे पेरिस में हों या ग्रीष्म के दिनों में अपने स्विट्जरलैण्ड स्थित मकान में हों, उनके यहां सदा मिलने-जुलने के लिए आनेवालों का तांता लगा रहता है और उनका समस्त परिवार आगतों का यथेष्ट सत्कार करता है। वे व्याख्यान देने के लिए अनेक बार अमेरिका से आमंत्रित होकर वहां गए हैं और उनका बड़ा आदर हुआ है।

उनके दार्शनिक सिद्धान्त मुख्यतया विकासवाद-सम्बन्धी हैं, यद्यपि उनमें अनेक विषयों का समावेश है। आरम्भ में वे एक जड़वादी और निर्धारित विज्ञान के परम भक्त थे। वे यंत्रों की ओर बहुत आकर्षित हुए थे और हर्बर्ट स्पेंसर के तत्त्वज्ञान को आगे बढ़ाने के अभिलाषी थे। उन्होंने यांत्रिक सिद्धान्तों का अध्ययन करके जब उन्हें सृष्टि की व्याख्या पर लागू करने की चेष्टा की, तो उन्हें अपर्याप्त पाया—उदाहरणार्थ उन्होंने भौतिक विज्ञान मे 'काल' के विचार को विवादयुक्त माना। उनकी धारणा है कि वास्तविक 'काल' 'स्थूल व्यवधान' की तरह मापा नहीं जा सकता। घड़ी या पंचांग से उसकी माप नहीं हो सकती; हमारी चेतना के अनुसार उसमें विभिन्नता हो सकती है। 'निर्दिष्टवादी'[1] से वे 'उदारतावलम्बी'[2] हो गए और अपने इस परिवर्तन की सफाई में उन्होंने 'काल और स्वतंत्र इच्छा'[3] तथा 'भौतिक पदार्थ और स्मृति'[4] नामक पुस्तकें लिखीं।

इस प्रकार के प्रारम्भिक निर्णय के द्वारा वे इस सिद्धान्त पर पहुंचे कि मन पंचभूत से भिन्न वस्तु है और उसपर आंशिक रूप से निर्भर करता है। इसके बाद जब उन्होंने मानसिक धारा और इन्द्रियों का अध्ययन किया तथा संस्कार एवं सहज बुद्धि पर विचार किया तो उन्हें 'सृष्टि-विकास'[5] नामक दूसरी पुस्तक लिखनी पड़ी। कहने की आवश्यकता नहीं कि उन्होंने ये पुस्तकें अपनी मातृभाषा फ्रेंच में लिखी थीं और उनका अंग्रेजीअनुवाद बाद में प्रकाशित हुआ था। अनुवाद बर्गसन की आज्ञा से आर्थर मार्टेल ने किया था। लेखक ने इस पुस्तक में प्रोफेसर विलियम जेम्स के प्रति कृतज्ञता प्रकाशित की है; क्योंकि उन्हें उनसे अनुवाद में बड़ी सहायता मिली है। कई स्थलों पर विलियम जेम्स ने अन्धकारमय विषयों पर प्रकाश डाला है और कुछ ऐसे शब्दों और वाक्यों का प्रयोग किया है जिनका कि अंग्रेजी में मिलना कठिन था। होरेस मेयर केलेन ने 'विलियम जेम्स और हेनरी बर्गसन—उनके जीवन के अतिरेका-

---

१. Determinist  २. Libertarian
३. Time and Free Will  ४. Matter and Memory
५. Creative Evolution

त्मक मत का अध्ययन"[1] नामक एक पुस्तक लिखी है, जिसमें उन्होंने उन दोनों के दार्शनिक मतों में विशेष भिन्नता का दिग्दर्शन कराया है और दोनों को भली भांति समझकर उनकी व्याख्या की है।

'सृष्टि-विकास' में बर्गसन ने दार्शनिक परम्पराओं की प्रयोजनीयता को स्वीकार किया है और आधुनिक ढंग की वाक्यावली और शैली का प्रयोग किया है। उन्होंने प्लेटो और अरस्तू से लेकर डेस्कार्टिस, स्पिनोज़ा लाइबनित्ज, स्पेंसर और कैंट तक के प्रधान दार्शनिक तत्त्वों की खोज की है। इनके अन्तर्निहित विचारों का विकास जड़वाद से अध्यात्मवाद की ओर इस प्रकार प्रकट किया गया है जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि वे जड़वाद के विरोधी हैं—अर्थात् उनका कहना है कि भौतिक पदार्थ एक और सूक्ष्म मूलतत्त्व अथवा स्पन्दन के साथ आवेष्टित है, क्योंकि जहां तक निष्क्रिय जड़ पदार्थ का सम्बन्ध है, हम कोई भी भीषण भूल किए बिना उसकी प्रवाहशीलता की उपेक्षा कर सकते हैं। हम कह चुके हैं कि जड़ पदार्थ रेखागणित के बोझ से दबा है। और जड़ पदार्थ का अस्तित्व, उसकी अवःपतित अवस्था में, वास्तविकता का रूप तभी धारण करती है जब उसका उसकी ऊर्ध्वगति के साथ सम्बन्ध हो। परन्तु जीवन और चेतनता ही ऊर्ध्वगति हैं।[2]

हेनरी बर्गसन के गम्भीर और प्राणप्रद विचार ऐसी स्पष्ट भाषा में व्यक्त किए गए हैं कि उनकी रचनाओं को पढ़कर आनन्द मिलता है। उन्होंने दृष्टांत दे-देकर अपने विचारों को पाठकों के लिए ऐसा बोधगम्य बना दिया है कि पाठकों की कल्पना और तर्कशक्ति एकसाथ काम करती हैं। इस दृष्टि से बर्गसन यथार्थवादी विलियम जेम्स से बहुत मिलते-जुलते हैं। फ्रांस में बर्गसन की ऐसी धाक जम गई है कि उनकी शैली जिस किसी कला या साहित्य में पाई गई, उसे बर्गसोनियन कला या बर्गसोनियन साहित्य कहने लगे हैं—यही नहीं, धार्मिक और श्रमजीवी क्षेत्र में भी बर्गसन का नाम इतना हो चुका है कि 'बर्गसोनियन प्राचीन ईसाई' और 'बर्गसोनियन मज़दूर आन्दोलन' कहकर इनका नाम उससे सम्बद्ध किया जाता है। बर्गसन के कट्टर शिष्यों में एडवर्ड-ली-रॉय का नाम लिया जा सकता है, जो एक कैथोलिक हैं और जिन्होंने बर्गसन के तत्त्वज्ञान में धार्मिक प्रकाश का आभास पाया है। यद्यपि बर्गसन ने सीधे रूप में न तो धर्म की ही शिक्षा दी है न आर्थिक आन्दोलन पर ही कुछ लिखा है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि उप-रचनाएं भी मुख्य कृतियों के समान मूल्यवान और चित्ताकर्षक होती हैं। 'स्वप्न'[3] और 'हास्य'[4] नामक दो साहित्यिक कृतियों की उप-रच-

---

१. William James and Henri Bergson : A Study in Contrasting Theories and Life.

२. इसका तात्पर्य यह है कि आध्यात्मिक जीवन चैतन्य से सम्बन्ध रखता है जिसकी ऊर्ध्व गति होती है और जड़ इस ऊर्ध्व गतिशील चैतन्य के साथ सम्बन्ध रखकर ही अपना अस्तित्व रख सकता है। —लेखक

३. Dreams ४. Laughter

नाएं भी ऐसी ही हैं। इनमें से पहली का अनुवाद एडविन स्लॉसन ने किया। इसमें बतलाया गया है कि स्वप्न भी चेतना का अंश है और निद्रा प्रत्याहार की अवस्था है। इसमें स्वप्न के कारणों और पुनरावृत्तियों पर भी विचार किया गया है, और उसकी यथासाध्य व्याख्या करने की चेष्टा की गई है। बर्गसन ने सुपरिचित और प्रबल उपमाओं का व्यवहार किया है। उदाहरणार्थ नीचे उनका उपमालंकार देखिए : "हमारी स्मृतियां एक दबाव से उसी प्रकार दबी रहती हैं, जैसे ब्वॉयलर में वाष्प। हमारी स्मृतियां इस प्रकार ठूंस-ठूंसकर भरी हुई हैं जैसे ब्वॉयलर में वाष्प ठुंसी होती है। अत्यधिक दबाव से ब्वॉयलर के फटने का डर होने के कारण एक छोटा-सा द्वार बना रहता है जिसमें से उपयुक्त सीमा से अधिक वाष्प निकल जाती है। इसी प्रकार स्मृतियों के अतिरिक्त दबाव को कम करने के लिए स्वप्न की आवश्यकता है।"

मनोविज्ञान के पूर्ववर्ती आचार्यों ने जो कुछ खोज की है, उसको सहृदयतापूर्वक स्मरण करते हुए और पुस्तकों तथा क्रियात्मक प्रयोगों की प्रचुर व्याख्या करते हुए बर्गसन पूछते हैं कि क्या साधारणतः स्वप्न के द्वारा नये विचार की सृष्टि हो सकती है? साथ ही वे अठारहवीं शताब्दी के वाद्य-विशेषज्ञ तारतिनी जैसों को असाधारण मानते हैं, जिन्हें स्वप्न में ऐसी रागिनी सुनाई पड़ी थी जिसकी स्वरलिपि उन्होंने जागकर बनाई और जिसका नाम 'शैतान का संगीत' रखा। स्वप्न स्मृतियों से उत्पन्न होते हैं। स्मृतियां प्रायः अदृश्य छाया की अवस्था में रहती हैं पर कुछ (स्मृतियां) ऐसी भी होती हैं जो रूप और वाणी का आश्रय लेकर स्थूल रूप में प्रकट होने का प्रयत्न करती हैं और इस कार्य में वे ही सफल होती हैं जो वृश्यमान ढंग के अणुओं के साथ अपने को मिला सकती हैं और जो उन बाह्य और आन्तरिक इन्द्रियानुभूतियों के साथ—जिनको हम उपलब्धि करते हैं—सम्बन्ध रखती हैं।

बर्गसन ने भावी मनोविज्ञान के लिए, मानसिक अन्तर्विनिमय का समाधान तथा स्वप्न और चेतनता के अधःस्तर के अन्य रहस्यों पर उसके प्रभाव को सुलझाने के लिए छोड़ दिया है।

'हास्य' का अनुवाद रूसी, पोलिश, स्वीडिश, जर्मन, हंगेरियन और अंग्रेजी भाषाओं में हो चुका है और यह पुस्तक बहुत व्यापक रूप में पढ़ी गई है। इसमें हास्य का अर्थ समझाने के लिए निबंध लिखे गए हैं। इसमें हास्य पर जिन तीन लेखों का संग्रह है वे 'द रिव्यू-डि-पारी' में पहले प्रकाशित हुए थे। इसमें तीन परिच्छेद इस प्रकार हैं—साधारण हास्य और हास्य के तत्त्वों के रूप और गति, परिस्थितियों और शब्दों में हास्य तत्त्व, नैतिक चरित्र से हास्यत्व का सम्बन्ध, हास्य का मर्म क्या है? स्वप्न में जो रूप-रंग आदि दिखाई देते हैं, बर्गसन का यह मत है कि आंखों के बन्द करने पर (विशेष करके अंधकार में विभिन्न रंग के जिन सूक्ष्म वस्तुओं का पुंज दिखाई देता है) उन्हीं के परस्पर गतिशील सम्बन्ध से परिवर्तनशील रूप के ये दीखते हैं और धारणा के साधन में ये प्रथम स्तर हैं। [illegible]

अमूर्त की कल्पना की चेष्टा करते हुए अंधकारपूर्ण स्थान में नेत्रों को बंद करके जो विकीर्णित अणु दिखाई देते हैं, उनमें से कुछ अणु तो ज्योतिमान हैं और कुछ ज्योतिरहित हैं। उनपर ध्यान रखकर उनके विभिन्न प्रकार के स्पन्दन का अध्ययन किया जाता है।

"जिस वस्तु पर हम हंसते हैं उसका आधारभूत तत्त्व क्या है?" आदि स्तम्भित करनेवाले प्रश्न हैं। इसमें इस बात का समावेश भी है कि हास्य मानवीय क्षेत्र के बाहर नहीं होता, क्योंकि कोई भूभाग या जानवर नहीं हंसता, केवल मनुष्य ही हंसता है। भावावेग हास्य का शत्रु है, क्योंकि गहरे भावों के साथ वास्तविक हास्य कभी-कभी ही देखने में आता है। विवेक हास्यरस की प्रतिध्वनि है।

जहां बर्गसन ने हास्य के सम्बन्ध में यह दिखाया है कि सामाजिक भावभंगी के रूप में उसका क्या स्थान है, वह स्थल अधिक मनोरंजक है। अपने सिद्धान्त की पुष्टि में लेखक ने मौलियर, लाबिश, डिकिन्स और मोशिए-डी-स्टाल का उद्धरण दिया है। बर्गसन ने हास्य की जो यह व्याख्या की है उसमें जार्ज मिरेडिथ-रचित हास्यरस और उसके मूलतत्त्व से कुछ समानता है। बर्गसन का यह भी कहना है कि हास्यरस ही अहंभाव की एकमात्र औषध है। बर्गसन के हास्यरस के अध्ययन में जो अंतिम मीमांसा दी गई। वह विचारणीय है। उन्होंने कहा है कि हास्य का सबसे बड़ा कार्य है साम्य-स्थापना इस विषय में भी अन्यान्य विषयों की भांति प्रकृति ने असत् का उपयोग सत् की पूर्ति के लिए किया है।

इडविन जॉर्कमैन ने अपनी 'क्या संसार में कोई ऐसी नई वस्तु है?' नामक पुस्तक के निबंधों में जो प्रश्न किए थे उनका उत्तर उन्हें 'हेनरी बर्गसन—वास्तविकता के दार्शनिक' नामक पुस्तक में मिल गया। इसी प्रकार जार्ज सन्तायन ने भी बर्गसन पर 'साम्प्रदायिकता की बयार' नामक पुस्तक लिखी है जिसमें उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि हेनरी बर्गसन जीवित दार्शनिकों में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। यह सब होते हुए सन्तायन बर्गसन के दर्शन का निदान करते हुए लिखते हैं कि वे शब्द-प्रयोग करने में कुशल, निर्णय करने में समीचीन हैं और उनकी रचनाओं में भावों और रसों का आभास मिलता है, किन्तु इसपर भी उनकी विद्वत्ता में कठिन प्रयास की झलक पाई जाती है। संतायन ने उनकी ऐसी प्रशंसा करते हुए भी उनकी तीक्ष्ण आलोचना की है। इस प्रकार उन्होंने उनकी न्याय-विरोधिनी तर्कनाशक्ति, ऐतिहासिक निर्णयों में भ्रम और रहस्यवाद तथा सृष्टि-विकास की उलझनों में पड़ने की भूलें बताई हैं। संतायन का यह भी कहना है कि जब बर्गसन गणित और पदार्थ-विज्ञान छोड़कर काल्पनिक और आध्यात्मिक विचारों पर लिखते हैं तो ज्ञात होता है कि ये समझते तो हैं पर भय से कांपते हैं—अमानुषीय विचारों से वे डरते हैं।

पहले कहा जा चुका है कि हेनरी बर्गसन के सबसे बड़े प्रशंसक, भक्त और

शिष्य मोशिए ली राय हैं। ली रॉय महोदय ने 'हेनरी बर्गसन का नवीन दर्शन'[1] नामक पुस्तक लिखकर बर्गसन के दार्शनिक विचारों को समझाने की चेष्टा की है। साथ ही उन्होंने दर्शन की प्राचीन और अर्वाचीन पद्धति पर तुलनात्मक दृष्टि से विचार भी किया है। हेनरी बर्गसन के अनेक अनुयायी हैं। टेन और रेनन की तरह उनके विचारों का प्रभाव बहुत व्यापक हुआ है। उपर्युक्त दोनों दार्शनिकों के अपेक्षाकृत जड़तावादी और असत्‌वादी विचार होने के कारण नई पीढ़ी के लोग उनसे ऊब चुके हैं। इसलिए लोग बर्गसन की ओर शीघ्रतापूर्वक आकृष्ट हुए हैं। महासमर के पश्चात् उनके विचारों का प्रभाव जनता पर अधिक पड़ा और उनकी ख्याति बहुत बढ़ गई। इसीलिए उन्हें पुरस्कार भी कुछ शीघ्र मिल गया। पुरस्कार-पत्र में ये शब्द लिखे गए थे कि उनके मूल्यवान जीवनप्रद विचारों तथा उस सुन्दर कला के लिए उन्हें यह पुरस्कार दिया गया जिसमें उन्होंने वे विचार व्यक्त किए हैं और साहित्यिक कौशल को पूर्णतः निभाया है। विलियम जेम्स ने हेनरी बर्गसन से मतभेद रखते हुए भी यह लिखा है : "यदि कोई वस्तु कठिन को सरल बना सकती है तो वह बर्गसन की शैली है। उनके प्रत्येक पृष्ठ में एक नया क्षितिज खुलता है। जो कुछ किताबी कीड़े—प्रोफेसर—दुहराते हैं, उसे ही कहने के बदले वे हमें वास्तविकता के सच्चे रूप की ओर ले जाते हैं।"

सन् १९४१ में इस महान विचारक और दार्शनिक का देहावसान हो गया।

---

१. The New Philosophy of Henri Bergson

# सीग्रिद उण्डसेत

१९२८ ई० में नोबल पुरस्कार नार्वे की सुप्रसिद्ध उपन्यास-लेखिका सीग्रिद उण्डसेत को प्रदान किया गया था। पुरस्कार दिए जाने के पहले ही साहित्यिक जगत् में उनका नाम हो चुका था और साहित्यिकों में यह चर्चा थी कि उन्हें शीघ्र ही विश्वविख्यात पुरस्कार मिलेगा। पाठकगण उण्डसेत की प्रतिभा से पहले ही स्तम्भित हो चुके थे, क्योंकि वे उनके मोटे-मोटे उपन्यास भी चरित्र-चित्रण की विचित्रता के कारण बड़े चाव के साथ पढ़ते थे और उनमें एक अद्भुत सजीवता का अनुभव करते थे। इन उपन्यासों का कथाकाल चौदहवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी और घटनास्थल नार्वे होने पर भी उनमें सार्वजनिक मनोरंजन कम नहीं था। इस रमणी के अद्भुत चरित्र-चित्रण पर मुग्ध होकर पाठक उत्सुक हो उठे और उनके मन में स्वभावतः यह जिज्ञासा हुई कि यह चमत्कारपूर्ण रमणी है कौन और उसके उपन्यासों में उसका व्यक्तित्व और उसकी भावनाएं कहां तक छिपी हुई हैं।

सीग्रिद उण्डसेत का जन्म डेन्मार्क के कैलेण्डबोर्ग नामक नगर में १८८२ ई० में हुआ था। उनके पिता इंगवाल्ड मार्टिन उण्डसेत प्रसिद्ध पुरातत्त्ववविद थे। उन्होंने बचपन से ही नार्वे का इतिहास पढ़ा था और उसे हृदयंगम कर लिया था। उनकी मां डेनिश थीं। सीग्रिद ने ओसलो के महिला महाविद्यालय में शिक्षा पाई थी। कहानियां लिखने की रुचि उन्हें विद्यार्थी-जीवन से ही थी, पर उन दिनों उनकी कोई विशेष ख्याति नहीं थी। इनके सम्बन्ध में लिखे गए लेखों से यही प्रतीत होता है कि वे अकस्मात् एक अत्यन्त प्रकाशमान नक्षत्र की भांति साहित्यिक नभ-मण्डल पर उदय हुईं और जब १९२८ ई० में उन्हें नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ तो लोग उनका विशेष परिचय प्राप्त करने की चेष्टा करने लगे। उनके आरम्भिक उपन्यास 'फ्रू मर्था आउली' (१९०८ ई०) और 'आनन्दावस्था'[1] हैं। इसके बाद १९११ ई० में उनकी पहली कहानी 'जेनी' प्रकाशित हुई जिसने पाठकों को अपनी ओर आकृष्ट कर लिया। इसके कुछ ही समय पश्चात् उन्होंने ए० सी० स्वासंटेड नामक एक चित्रकार से शादी कर ली और दाम्पत्य एवं मातृत्व का आनन्दोपभोग करते हुए भी उपन्यास-लेखन जारी रखा। १९२१ ई० से वे लीलेहैमर नामक स्थान में रहने लगीं और फिर प्रकाशक भी उनकी पुस्तकों की मांग करने लगे।

१. Happy Age

यद्यपि वे लिखती बहुत धीरे-धीरे रहीं, पर लिखने का क्रम बराबर जारी रहा। वे अपने पात्रों के चरित्र के साथ तल्लीन-सी हो जातीं और उनके सम्बन्ध में सदा विचार करती रहती थीं—इसलिए यद्यपि उन्होंने लिखा बहुत थोड़ा, पर जो कुछ लिखा उसमें जीवन और वास्तविकता की गहरी छाप है। उनके पात्रों के अकृत्रिम सुख तथा उनके मानसिक एवं आध्यात्मिक द्वन्द्व का चित्र पाठकों के मन पर खिंच जाता है। उनकी आरम्भिक रचनाओं से उनकी पर्यवेक्षण और वर्णन-शक्तियों का पता लगता है। बाद में उन्होंने मध्यकालीन नार्वे के कथानक लेकर जो उपन्यास लिखे हैं उनमें उन्होंने जीवन का निश्चित आयोजन और सिद्धान्त स्थापित कर लिया था। उनका साधारण झुकाव दुखान्त की ही ओर था—जब किसी पात्र ने जाति-बन्धन और नैतिक विधान का उल्लंघन किया है तो ग्रीक नाटकों के पात्रों की तरह उसका परिणाम दुखद हुआ है और अन्तिम दृश्य परिताप या परिशोधयुक्त हुआ है। उनके बाद के उपन्यासों में उन्होंने आध्यात्मिक क्लेश का शमन शान्तिपूर्ण धार्मिक मठों में और गिरजाघरों की क्रियात्मक और आत्मबलिदान-युक्त सेवा करने में बतलाया है। उनकी रचनाओं से मानवीयता के प्रति उनकी कल्याणेच्छा प्रतिबिम्बित होती है।

सीग्रिद ने नार्वे के मध्यवर्ती श्रेणी के लोगों का चरित्र-निरूपण किया है। कथानक चौदहवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी का है। किसानों और बाजार में काम करनेवाले अन्य श्रमजीवियों के घरेलू और अल्पविस्तृत जीवन का इस लेखिका ने ऐसा सजीव चित्रण किया है कि पाठक उनके छोटे स्वार्थों और बड़ी समस्याओं में भाग लेने लगता है। इनके पात्रों में वह शक्ति है कि उनके परिचय के साथ तत्कालीन वातावरण भी आंखों के सामने आ जाता है। वातावरण का वर्णन सीग्रिद ने छोड़ा नहीं है, बल्कि उन्होंने उसे इतने सूक्ष्म विवरण के साथ किया है कि उसके द्वारा पात्रों का चरित्र प्रकाश में आ जाता है। सीग्रिद उण्डसेत ने इस कौशल के साथ चौदहवीं सदी के ग्रामीण नार्वे का दृश्य समुपस्थित किया है कि पाठकों के लिए वह वैसा ही सुगम-ग्राह्य है जैसा बीसवीं सदी का दृश्य। इन्होंने गद्य के साथ-साथ तत्कालीन गाने और धर्माचार्यों के थोड़े-बहुत दार्शनिक उपदेश भी अपनी रचनाओं में सम्मिलित कर लिए हैं।

किन्तु ऐतिहासिक उपन्यासों में हाथ लगाने के पूर्व उण्डसेत ने वर्तमान समाज के युवक-युवतियों और उनके संघर्षमय और असन्तोषजनक विवाह-सम्बन्ध आदि सामाजिक समस्याओं का सफल वर्णन करने के लिए 'अपरिचित'[१] नामक उपन्यास लिखा। किन्तु उनके ऐतिहासिक उपन्यासों की सफलता के बाद भी उनका 'जेनी' नामक उपन्यास जिस चाव से साथ पढ़ा गया वैसा अन्य कोई नहीं। इसका कारण है उनकी साहित्यिक कला और करुणरस-प्रधानता। इसका कथानक आधुनिक है और उसमें एक ऐसी गुणवती और कोमल स्वभाव की स्त्री का चित्रण किया गया है जो नार्वे छोड़कर कला-जीवन का अध्ययन करने रोम चली जाती है। किन्तु अट्ठाईस वर्ष की अवस्था में

१. A Stranger और The Happy Age नामक ग्रन्थ का एक अंश लिया गया है।

उसके हृदय में एक नई आकांक्षा का उदय होता है और वह (हृदय) प्रणय तथा प्रणयी की कामना करता है। हेल्ज, जो उसके अभिलाषापूर्ण स्वभाव को जाग्रत् करता है, जेनी से मानसिक और नैतिक साहस में दुर्बल है—वह उसके प्रति ऐसा स्नेह रखती है जिसमें पत्नी और मातृ-प्रेम का सम्मिश्रण होता है। वह जब नार्वे अपने घर लौटकर आती है तो उसे निराशा होती है। अन्त में वह पुनः रोम जाने को तैयार हो जाती है और कला में पुनः अपने को तल्लीन करके प्रेम की निराशा भुला देना चाहती है, किन्तु फिर भी वह अपनी असफलता को कुछ दिनों तक सहन करती है और अन्त में जाकर उसका दुःखद अन्त होता है। इसका अन्तिम दृश्य ऐसा दुःखद है कि सहृदय पाठक का हृदय द्रवीभूत होकर आहें भरे बिना नहीं रह सकता। इसके कथानक में करुणा रस का पूर्ण विकास हुआ है। जेनी ने गनार-हेगेन से कुछ ही शब्दों में उन स्त्रियों की दशा का वर्णन किया है जिन्हें कोई प्रेम नहीं करता और जो द्वन्द्वपूर्ण स्वभाव की हो जाती हैं।

जेनी के पश्चात् सीग्रिद उण्डसेत ने विवाहित स्त्रियों की कहानियां लिखीं और यह दिखलाया कि प्रेम करने में उन्हें संघर्ष और अड़चनों का सामना करना पड़ता है। उनके 'वसन्त' नामक उपन्यास का अंग्रेजी अनुवाद अभी तक नहीं प्रकाशित हुआ है, अतः उसके सम्बन्ध में हम कुछ लिखने में असमर्थ हैं। उनके 'दि स्प्लिंटर ऑफ़ दि ट्राल मिरर' में कई कहानियों का संग्रह है।

सीग्रिद उण्डसेत ने कितनी ही छोटी कहानियां भी लिखी हैं जिनका संग्रह 'पुअर फेट्स' नामक एक जिल्द में हुआ है। इसमें से 'साइनसेन' नामक कहानी को 'नार्वे की सर्वोत्तम कहानियां'[1] में स्थान मिला है। 'बुद्धिमती किशोरी'[2] में स्त्री के आत्म-बलिदान की भावना काव्यमयी भाषा में व्यक्त की गई है। लेखिका की सबसे प्रसिद्ध कहानी है 'क्रिस्टिन लैवरांसडेटर'। अपनी कहानियों में लेखिका ने बहुधा डेनिश माता का ही चित्रण किया है। वास्तव में लेखिका की माता भी डेनिश—डेन्मार्क की—थीं। उनके पात्र-पात्री प्रायः मध्यम श्रेणी के तथा शिथिल स्वभाव के हुआ करते हैं, किन्तु होते ऐसे हैं कि उन्हें परिश्रम करना ही पड़ता है।

सीग्रिद उण्डसेत ने आधुनिक जीवन का उपन्यास लिखते-लिखते मध्यकालीन उपन्यास लिखना क्यों शुरू कर दिया, यह प्रश्न हो सकता है। किन्तु प्राचीन कथानकों और प्राचीन गीतों का उनका प्रेम नया नहीं था—उन्होंने आधुनिक उपन्यासों में भी प्राचीन गीतों का समावेश करना पहले ही से आरम्भ कर दिया था। १९०९ ई० में ही उन्होंने 'विगो-जॉट और विवाडस' नामक उपन्यास नार्वे के प्राचीन कथानक पर लिखा था। १९१५ ई० में उन्होंने सम्राट आर्थर और उनके मुसाहबों की कहानी लिखी।

क्रिस्टिन लारेण्डेटर की कहानी लिखते समय उण्डसेत के मस्तिष्क में दो बातें

१. The Best Short Stories of Norway　　२. Wise Virgins

जम गई थीं—एक यह कि चौदहवीं शताब्दी के स्त्री-पुरुष बीसवीं शताब्दी के मानवता-युक्त स्त्री-पुरुषों से मिलते-जुलते थे; दूसरी यह कि सही और गलत, पाप और उसके परिणाम उदारतावाद के आधुनिक विचारों और क्रियाओं की प्रवृत्ति से घटाए नहीं जा सकते। इस सिद्धान्त की कि 'प्रत्येक बात को समझने का अर्थ है उसका त्याग देना' उन्होंने बड़ी निन्दा की है और कहा है कि यह उन कायरों के लिए एक शरणस्थल है जो अपने आदर्शों के अनुकूल जीवन नहीं व्यतीत कर सके हैं। १९१९ ई० में इनका 'एक स्त्री का दृष्टिबिन्दु'[1] नामक अपना निबन्ध-संग्रह प्रकाशित कराया जिसमें यह सिद्ध करने की चेष्टा की कि मध्यकाल में प्रेम का विवेचन तीन रूपों में किया जाता था—उच्च परन्तु ध्वंसक वासना, नीच और भीरुतापूर्ण क्रियाओं का प्रलोभन और सामाजिक शक्ति। उण्डसेत की राय में प्रेम के सम्बन्ध में आधुनिक विचारकों ने कोई भी नई बात नहीं मालूम की है।

सीग्रिद उण्डसेत के उपन्यासों और उनकी कहानियों का विषय-प्रसंग प्रधानतः स्त्रीत्व ही रहा है। उन्होंने अपनी आरम्भिक कहानियों में स्त्रियों को पुरुषों की अपेक्षा कहीं अधिक श्रेष्ठ चित्रित किया है। अपने एक कथानक में उन्होंने नायिका—क्रिस्टिन लावरेंसडेटर—के बचपन, परिपक्वावस्था और अन्तिम दिनों का वर्णन इस ढंग से किया है कि वह पाठकों के हृत्पटल पर आकर्षक रूप से जम जाता है। क्रिस्टिन के साथ उसकी मां रैनफ्रिड का भी चित्रण किया गया है, किन्तु उसका व्यक्तित्व 'वधू-माल'[2] के अन्तिम दृश्य तक आगे न लाकर पीछे ही रखा गया है। इस अन्तिम दृश्य में रैनफ्रिड अपनी बेटी क्रिस्टिन का विवाह हो जाने पर उसके पति से अपने जीवन के अनुभव बतलाती है और कहती है कि उसके जीवन में क्या छुपा हुआ था और उसने भावावेश में तथा पति के लिए क्या-क्या कष्ट उठाए हैं। क्रिस्टिन की मां की अपेक्षा उसके पिता का चरित्र अधिक योग्यतापूर्वक चित्रित किया गया है। लावरेंस जार गल्फसन नार्वे के प्रतिष्ठित घराने के गृहस्वामी चित्रित किए गए हैं और उन्होंने अपनी मध्यकालीन परम्परा को ठीक तौर से निभाया है तथा ख्रिष्टीय धर्म की दीक्षा पाकर उनमें और भी कोमलता और धैर्य का समावेश हो गया है। उनका पत्नी और पुत्री-प्रेम, उनका अपने दामाद एर्लेण्ड के प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार लगातार स्थिर रहा है और उन्होंने एक वीर पिता की तरह कर्तव्य-पालन किया है। आधुनिक रचनाओं में ऐसे प्रभावशाली अंश कुछ ही मिलेंगे जिनमें वैसा प्रभाव और सौन्दर्य हो जैसा पिता के अपनी पुत्री क्रिस्टिन के साथ पर्वत को जाने के वर्णन में मिलता है। जिस समय वह अपने पालतू घोड़े—गुल्डस्वेंमिन—पर चढ़ता है तो उसका वर्णन लेखिका इन शब्दों में करती है: "घोड़ा मजबूती और तेजी के कारण सारे देश में विख्यात था, पर अपने मालिक के सामने वह मेमने—भेड़ के बच्चे—के सदृश नरम बन जाता था और लावरेंस कहा करता था कि यह घोड़ा उसे छोटे भाई के सदृश प्यारा है।

1. A Woman's Viewpoint 2. The Bridal Wreath

सात वर्ष की लड़की क्रिस्टिन भी अपने पिता के साथ उसी घोड़े पर चढ़कर यात्रा के आनन्द और उत्ताप का अनुभव करती है।" घाटियों और गुलाबी फूलों के सौन्दर्य और हवा में भरे हुए पहाड़ी घासों के सौरभ का वर्णन बड़ी ही सजीव भाषा में किया गया है। लड़की के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए लेखिका ने लिखा है : "छोटी लड़की कुमुदिनी-सी मालूम होती है और उसके चेहरे से ऐसा प्रतीत होता है कि वह किसी भूत की लड़की है।" पुस्तक में वह प्रकरण और भी सुन्दर है जहां गुन्ड्रसोलिन के साथ क्रिस्टिन के महोद्यम का वर्णन किया गया है और एक छिपनी लड़की के सम्बन्ध में उसकी कल्पना का विस्तार दिखाया गया है।

क्रिस्टिन और एर्लेण्ड के विवाह के समय जो भोज दिया जाता है उसका वर्णन काव्यात्मक परम्परा और सुन्दरता से गुंथा हुआ है। वह सुनहरे तोड़ी प्रकाश के पीछे छिपे हुए अन्धकार की भांति वासना के पीछे छिपी हुई सन्तान-लालसा रखती है और समझती है कि यह बात उन्होंने अपने मेहमानों और पड़ोसियों से छिपा ली है। एर्लेण्ड साहसी और आकर्षक युवक है—वह महोद्यमी है और उसे तो अपने कामों से आनन्द मिलता है साथ ही क्रिस्टिन को भी, पर कभी-कभी उन्हें पश्चात्ताप भी होता है। दूसरी जिल्द[1] में यह दम्पति भावुकता की चरम सीमा पर पहुंच जाता है। अन्त में जब एर्लेण्ड एक राजनीतिक षड्यन्त्र में फंस जाता है तो साइमन एण्ड्रेसन, जिसके साथ क्रिस्टिन की एर्लेण्ड से पूर्व सगाई हुई थी, उसे उस मामले से छुड़ाता है, यद्यपि एर्लेण्ड को उस राज्य (हजबी) से निकल जाना पड़ता है।

क्रिस्टिन में स्त्रीत्व और मातृत्व पूर्ण अंश में है। जिस समय उसके बच्चा पैदा होता है उसी समय से उसे अपने दोनों ही कर्तव्यों का पूर्णतः पालन करते देखा जाता है। वह अपने अव्यवस्थित पति के प्रति नमित-भाव रखती है और अपने उदीयमान बच्चों के प्रति वात्सल्य-प्रेम। जब उसके लड़कों का विवाह हो जाता है और एर्लेण्ड के जीवन का अन्त हो जाता है, तो क्रिस्टिन संसार के झंझटों से छुट्टी लेकर एक मठ में निवास करती है और इस प्रकार जन्म-भर दूसरों की सेवा करते हुए अन्त में परलोकगामिनी होती है।

उण्डसैत ने मानवीय भावनाओं—आह्लाद और शोक—का मिश्रण सुन्दर रूप में किया है। भावों की उच्चता और शब्दों की सरलता एवं सामंजस्य उनकी विशेषता है। कई आलोचकों का कहना है कि उनकी बाद की रचनाएं—विशेषतः 'हेस्टविकेन के स्वामी'[2] जिसके अन्तर्गत 'कुल्हाड़ी'[3] 'सांप का बिल'[4] 'अरण्य में'[5] और 'प्रतिशोधक का पुत्र'[6] हैं—उपर्युक्त रचना की अपेक्षा अधिक प्रौढ़ और भावापन्न हैं। किन्तु थोड़ी-बहुत सूक्ष्म त्रुटियों के होते हुए भी इनके उपन्यासों में सजीवता और मानवीय समस्याओं

१. The Mistress of Husaby
२. The Master of Hestviken
३. The Axe
४. The Snake Pit
५. In the Wilderness
६. The Son at Avenger

का समावेश प्रशंसनीय ढंग से किया गया है। इनमें मध्यकालीन इतिहास की दन्त-कथाओं का आकर्षक सन्निवेश है और इन्हें क्रमपूर्वक पढ़कर पाठक लेखिका के कौशल की सराहना किए बिना नहीं रहेंगे।

'हेस्टविकेन के स्वामी' में ओलेव ऑडेन्सन नामक व्यक्ति नायक है। उसकी स्त्री का नाम है इनगन। इनगन का चरित्र क्रिस्टिन से बिल्कुल भिन्न है—उसके व्यक्तित्व और साहस में क्रिस्टिन के व्यक्तित्व और साहस से बड़ा पार्थक्य है। जिस प्रकार लॉवरेंस को भूखण्ड से प्रेम था वैसे ही ओलेव को समुद्र से प्रेम है। उसकी जीवन-गाथा नार्वे के व्यापारिक महोद्योगों से भरी हुई है। ओलेव के चरित्र को विकसित करने के लिए उसके साथ दूसरा पात्र ईरिक रखा गया है जो इनगन के पहले पति टीट से पैदा हुआ पुत्र है। ओलेव ने टीट को मारकर इनगन को प्राप्त किया था। बहुत दिनों तक ओलेव अपने कुकृत्यों पर झुंझलाकर बेचारे दुर्बल और विक्षिप्त युवक ईरिक से घृणा करता रहा, किन्तु धीरे-धीरे समय बीतता गया और वह स्थिति आ गई जब ओलेव को पक्षाघात (लकवा) की बीमारी हो गई और एकाकी और रुग्णावस्था में उसके हृदय में ईरिक के प्रति स्नेह उत्पन्न होने लगा। ईरिक ने ओलेव की सेवा-शुश्रूषा करने के कारण अपनी सौतेली बहन सेसीलिया की भर्त्सना भी की थी। सेसीलिया का चरित्र लेखिका ने उसकी मां इनगन के विपरीत चित्रित किया है। कुमारी अवस्था में सेसीलिया को उसका बाप 'प्रभात के ओसकण के समान शीतल और शुद्ध तथा सन्मार्ग से विचलित न होनेवाली' समझता था। किन्तु स्त्रीत्व प्राप्त करने और अपने पति जॉरण्ड तथा प्रणयी एस्लाक से आकम्पित होकर उसमें वासना की आग ऐसी धधक उठती है कि वह पिता के प्रति अपने कर्तव्य को भूलने लगती है और प्रेम, घृणा एवं कर्तव्य के संघर्ष में उसका चेहरा परिवर्तित और शोकाकुल हो जाता है। वह न कभी अपने बच्चों को खिलाती और न हंसती-बोलती है; उसके नेत्रों का सौन्दर्य जाता रहता है।

उण्डसेत के उपन्यासों में गार्हस्थ्य जीवन का सुन्दर चित्रण है। गृहस्वामी, स्त्री-बच्चे, नौकर-चाकर सभीका चरित्र-चित्रण सुन्दर एवं स्वाभाविक है। सभी परिवार और समाज की भलाई के लिए कार्य करते दिखलाए गए हैं। ओलेव जब समुद्र-यात्रा करके लन्दन से लौटता है तो वह वहां की अपेक्षा अपने घर के सीधे-सादे जीवन में अधिक शान्ति का अनुभव करता है। उण्डसेत के उपन्यासों में दैनिक जीवन का चित्रण अधिकता से पाया जाता है—हरे-भरे खेतों और पर्वतावलियों का वर्णन भी उनकी रचनाओं में प्रायः आता है। उनकी रचनाओं में घटना-विकास बहुत धीरे-धीरे होता है और उन्हें धीरे-धीरे अधिक समय में पढ़ने में ही आनन्द आता है। उनमें आध्यात्मिकता और गिरजाघरों को काफी महत्त्व दिया गया है। उनके पात्रों ने कुकृत्यों के लिए पश्चात्ताप भी खूब किए हैं। फिर भी लेखिका का यह विचार मालूम होता है कि संसार में निष्पाप जीवन हो ही नहीं सकता, क्योंकि उन्होंने ईरिक के मुंह से एक जगह कहलवाया है कि बिना पाप किए कोई मनुष्य जीवन व्यतीत कर ही नहीं सकता।

नोबल पुरस्कार प्राप्त करनेवाली दोनों लेखिकाओं—सेल्मा लागरलोफ और सीग्रिद उन्डसेत—में पूरा वैपरीत्य है। १९२० ई० में जब इन दोनों लेखिकाओं की दो रचनाएं—जिनके नाम क्रमशः 'लावेन्सकोल्ड की अंगूठी' और 'प्रतिशोधक का पुत्र'—प्रकाशित हुईं तो इनकी तुलनात्मक आलोचना विख्यात पत्र-पत्रिकाओं ने की—'प्रतिशोधक का पुत्र' मानवीय भूल, रक्त-पात, पारिवारिक प्रेम और क्षमाशीलता की कहानी है तो 'लावेन्सकोल्ड की अंगूठी' प्रमोदमय, उत्कट कल्पनापूर्ण और आशावाद की गाथा है।

ऐतिहासिक उपन्यास लिखने में सीग्रिद उन्डसेत ने जो सफलता प्राप्त की है, वह केवल कुछ ही लेखकों को प्राप्त हो सकी है। उन्होंने दिखा दिया है कि बीसवीं शताब्दी के लोग सात सदी पहले के लोगों की भावनाओं और समस्याओं को समझने की योग्यता रखते हैं। उन्डसेत में यह योग्यता योंही नहीं आ गई—उन्होंने पन्द्रह वर्ष तक मध्यकालीन इतिहास का अध्ययन करके तब इस विषय पर लेखनी उठाई थी। वे यथार्थवादी और भावना-प्रवण महिला थीं और उन्होंने ऐतिहासिक चरित्र-चित्रण और तत्कालीन वातावरण का दिग्दर्शन कराने में अपनी अद्भुत क्षमता का परिचय दिया है। अपने इन्हीं गुणों के कारण उन्डसेत को बीसवीं शताब्दी के सर्वश्रेष्ठ लेखकों में स्थान मिला है। उनकी उन्नति आकस्मिक रूप में और एकाएक न होकर क्रमबद्ध रूप में हुई थी, यद्यपि उनकी प्रारम्भिक रचनाओं में 'फ्रू मर्था आउलिन' और 'जेनी' में भी उनकी प्रतिभा झलकती थी। कुमारी लार्सेन ने उनकी प्रशंसा में कहा है कि उन्डसेत ने जीवन-युद्ध और उसके परिवर्तनों का सुन्दर अनुभव किया था।

उनकी आधुनिक काल के विषय-प्रसंग पर की गई रचनाओं में 'दि वाइल्ड आर्किड' को उच्च स्थान प्राप्त है। इसके परिशिष्ट के रूप में उन्होंने 'बर्निंग बुश' लिखी जो उनकी नवीनतम पुस्तक है।

सन् १९४९ में सीग्रिद उन्डसेत ने अपना यह पार्थिव शरीर त्याग दिया।

# टॉमस मान

१९२९ ई० का साहित्यिक नोबल पुरस्कार जर्मन लेखक टॉमस मान को मिला था। यह पुरस्कार उन्हें केवल उनके एक उपन्यास पर मिला था जिसका नाम 'बडन ब्रुक्स' है। पुरस्कार-प्राप्ति के बहुत पहले ही यह रचना सामयिक साहित्य में उच्च स्थान प्राप्त कर चुकी थी। इस प्रकार नोबल पुरस्कार के इतिहास में चौथी बार यह पारितोषिक जर्मन विद्वान को मिला। टॉमस मान की प्रतिष्ठा जर्मनी के पहले तीन नोबल पुरस्कार-विजेताओं की अपेक्षा स्वदेश और विदेश के साहित्यिकों—आलोचकों, प्रगतिशील और पुराने लेखकों—में विशेष रूप में थी। युद्ध के बाद जर्मन भाषा और साहित्य के प्रति यूरोप और अमेरिका के कुछ प्रदेशों ने उपेक्षा-भाव प्रदर्शित किए थे। विश्वविद्यालयों तक में उसका मान घट चला था, किन्तु सत्रह वर्ष पश्चात् टॉमस मान को उपर्युक्त पुरस्कार मिलने पर पूर्वभावना पुनर्जीवित हो उठी। गेटे, शिलर और हीन की रचनाएं पुनः पढ़ी जाने लगीं। इन्हीं दिनों एमिल लडविग नामक प्रसिद्ध जर्मन लेखक ने गेटे की जीवनी नये ढंग से लिखी और लिविस आर० ब्राउन ने हीन की। ये पुस्तकें विद्यार्थियों और साहित्यिकों ने बड़े चाव से पढ़ीं।

टॉमस मान के पिता हैंसियाटिक लीग के कैपिटल के सिनेटर (सभासद) तथा ल्यूबेक नगर के मेयर रह चुके थे। उनकी फौजी सलामी के साथ इज्जत की जाती थी। टॉमस मान का जन्म १८७५ ई० में हुआ था। उनपर अपने पिता की अपेक्षा माता का अधिक प्रभाव पड़ा था। उनके भाई हीनरीच के चरित्र पर भी माता का बड़ा प्रभाव पड़ा था। उनकी माता का जन्म ब्रेजिल में हुआ था और वे एक जर्मन बगीचेवाले की लड़की थीं। उनका नाम जूलिया सिल्वा था। उन्होंने ल्यूबेक में ही शिक्षा प्राप्त की थी और इसी स्थान को अपनी मातृभूमि मान लिया था। फिर भी उन्हें अपनी वास्तविक जन्मभूमि नहीं भूली और वे प्रायः अपने पुत्र (टॉमस) से ब्रेजिल के दृश्यों का वर्णन प्रशंसात्मक शब्दों में किया करती थीं। बिना किसी विशेष प्रयास के व्यापारिक और राजनीतिक नेता का बेटा प्रकाण्ड साहित्यिक बन बैठा।

पाठशाला में पढ़ते समय टॉमस मान की गणना प्रायः मन्द बुद्धि के विद्यार्थियों में हुआ करती थी। उन्होंने संगीत और किम्वदन्तियों के प्रति शुरू से ही विशेष अनुराग प्रदर्शित किया था। कुत्ते पालने का शौक भी उन्हें था। पुतलियों का खेल भी उन्हें

बहुत प्रिय था। उन्होंने अपनी रचनाओं—विशेषत: बडन ब्रुक्स—में अपनी इन बाल-प्रवृत्तियों और अपने सुन्दर घर का चित्रण अच्छे ढंग से किया है।

जिस समय वे ल्युबेक के स्कूल में पढ़ ही रहे थे, तभी से उन्होंने पाठशाला की मासिक पत्रिका के लिए पॉल टॉमस के नाम से लेख लिखकर अपनी उर्वर कल्पना-शक्ति का परिचय दिया था। १८९३ ई० से उन्होंने अपने नाम—टॉमस मान—से लिखना आरम्भ किया था। उनकी पहली कविता लिपज़िग की 'जेसिलशाफ्ट' नामक पत्रिका में १८९४ ई० में छपी थी। उपन्यासकार बन जाने पर भी उन्होंने कविता लिखना बिलकुल बन्द कभी नहीं किया।

बालक टॉमस की अवस्था जब पन्द्रह वर्ष की हुई तभी उनके पिता का देहान्त हो गया। इसके बाद उनकी आर्थिक अवस्था पूर्ववत् सम्पन्न नहीं रही। जब वे उन्नीस वर्ष के हो गए तो अपनी माता के साथ म्यूनिच चले गए और वहीं रहने लगे। पारिवारिक परम्परा के अनुसार उनका व्यापारिक क्षेत्र में पड़ना आवश्यक था, किन्तु उन्होंने उस ओर कभी उत्साह नहीं प्रदर्शित किया। फिर भी धैर्य के साथ वे दिन में अपने आग के बीमावाले ऑफिस में आधे मन से काम करते रहे। रात को या जब कभी समय मिलता वे अध्ययन करने या लिखने में लग जाते थे। धीरे-धीरे उन्होंने शुभ संयोग प्राप्त किया और १८९४ ई० में पहला उपन्यास 'जेफालेन' नाम से प्रकाशित किया जिसमें इन्हें पर्याप्त लाभ भी हुआ। इसके बाद उन्होंने बीमे का काम छोड़ दिया और वे उत्सुकता-पूर्वक इतिहास, साहित्य और कला के अन्वेषण में लग गए। इसके पश्चात् वह समय आ गया जिसका स्वप्न टॉमस मान देखा करते थे और जो एक अप्राप्य कल्पना-सी मालूम होती थी—यह स्वप्न था इटली देश का दर्शन। एक वर्ष तक वे इटली में आनन्द प्राप्त करते हुए अपनी कल्पना-शक्ति को विवर्द्धित करते रहे। इसके बाद उनके अन्दर अपनी माता की तरह मातृभूमि-प्रेम जाग्रत् हुआ और वे उत्तरी यूरोप के आकाश और समुद्र की याद करने लगे। उनकी माता उनके बचपन में जिन दृश्यों का वर्णन किया करती थीं वे उनके लिए बड़े ही आकर्षक और सुखप्रद सिद्ध हुए। अपने पारिवारिक इतिहास के अध्ययन के फलस्वरूप ही उन्होंने 'बडन ब्रुक्स' लिखा। इसके बाद टॉमस मान ने अपना साहित्यिक भविष्य बना लिया। 'बडन ब्रुक्स' के जर्मन भाषा में पचास संस्करण दस वर्ष के अन्दर हो गए थे और अब तक सौ संस्करण से भी अधिक हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त इसके अनुवादों के भी अनेक संस्करण हो चुके हैं। इस पुस्तक का कुछ अंश इटली में लिखा गया था। दक्षिण के सौन्दर्यमय दृश्यों को देखकर टॉमस मान ने इस रचना में उसका जो समावेश किया है, वह साहित्य की एक स्थायी वस्तु बन गई है। इसमें एक जर्मन परिवार की तीन पीढ़ियों का वर्णन है। इन पीढ़ियों के भावों तथा आर्थिक परिवर्तनों के संघर्ष का वर्णन बहुत ही सफल हुआ है। लगभग सत्तर वर्ष के परिवर्तन का मनोवैज्ञानिक वर्णन टॉमस मान की इस रचना में है। इसमें वर्णित प्रत्येक पात्र में ऐसी सजीवता और विशेषता है कि किसी एक को लेकर उसकी आलो-

चना करना व्यर्थ है—सारी की सारी पुस्तक वर्णन-चातुर्य से पूर्ण है। पुस्तक लम्बी और घटना-विकास की न्यूनता से युक्त होते हुए भी वर्णन में सजीवता और आकर्षण से शून्य नहीं है—कहीं भी पाठक को इसमें शिथिलता और अवसाद दिखाई नहीं देता। 'बडन ब्रूक्स' में क्रिश्चियन के शब्द स्मरणीय हैं। वे पाठकों के हृदय-पटल पर अङ्कित-से हो जाते हैं। पुस्तक की दूसरी जिल्द में विगत पीढ़ी के व्यक्तियों में बड़े दिन का त्योहार किस प्रकार मनाया जाता था, इसका रोचक वर्णन है। इसमें टॉनस बडन ब्रूक्स की विधवा गर्डा की उस अवस्था का वर्णन पाठकों के हृदय में करुणा उत्पन्न करता है जब वह अपने पति और पुत्र से विहीन होकर अपने वृद्ध पिता के घर लौटती है। गर्डा के चरित्र को इस प्रकार का चित्रित किया गया है जिससे वह जर्मन परिवार के लिए उपयुक्त और अनुकूल नहीं जान पड़ती।

टॉमस मान की दूसरी उल्लेखनीय रचना 'कॉनिगलिशे होहीट' है जिसका अंग्रेजी अनुवाद 'रायल हाईनेस' के नाम से हुआ है। इसमें जर्मन दरबार के जीवन का सुन्दर चित्रण है। सारी पुस्तक में सैनिक वातावरण है। इसके मुख्य पात्र क्लाज हीनरीच को प्रायः परम्परागत बातों का विरोध करना पड़ता है। इनकी साधारण रचनाओं में 'एक आदमी और उसका कुत्ता'[1] विशेष उल्लेखनीय है। इसका जर्मन से अंग्रेजी में अनुवाद १९३० ई० में हर्मन जार्ज शेफार ने किया था। यह कुत्ते पर लिखी हुई सर्वश्रेष्ठ कहानी है। कुत्ते का नाम बाशन है जो छोटे बालोंवाला सुन्दर और शिकारी श्वान है।

टॉमस मान की नौ कहानियों का संग्रह 'बच्चे और मूर्ख'[2] नाम से प्रकाशित हुआ है जिसका अनुवाद हर्मन जार्ज शेफार ने १९२८ से १९३० ई० तक किया है। इनमें पहली कहानी 'विकृति और सन्ताप'[3] में पारिवारिक जीवन का सुन्दर चित्रण किया गया है। इसमें पिता और बच्चों के सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध का वर्णन बड़ा ही आकर्षक है। युद्ध के पूर्व का जर्मनी संघर्ष और कठिनाइयों में पड़कर किस प्रकार परिवर्तित हुआ है, इसका चित्र इस पुस्तक द्वारा पाठकों के सम्मुख उपस्थित हो जाता है।

टॉमस मान ने अपनी सर्वोत्कृष्ट पुस्तक—'जादू का पर्वत'[4]—लिखने के पहले जीवन-चरित्र और तत्त्वज्ञान पर निबन्ध लिखे थे। उनके 'गेटे और टॉलस्टॉय' नामक निबन्ध का अनुवाद १९२९ ई० में एच० टी० लो-पोर्टर ने किया था। उन्होंने गेटे, शिलर, टॉलस्टॉय और दोस्तोव्स्की का तुलनात्मक अध्ययन करके सुन्दर निबन्ध लिखे थे।

समालोचकों ने उनके 'जादू का पर्वत' की तुलना 'पिल्ग्रिम्स प्रोग्रेस' और रोम्यां रोलां के 'जीन क्रिस्टोफ' से की है। इसमें नागरिक सभ्यता से दूर पर्वत के अस्पताल में विभिन्न स्त्री-पुरुषों की अवस्थाओं का वर्णन है। जीवन और मृत्यु के सम्बन्ध में इन लोगों के विचारों का प्रभावोत्पादक वर्णन पुस्तक में मिलता है। हैन्स कैस्टार्प नामक

---

१. A Man and His Dog
२. Children and Fools
३. Disorder and Sorrow
४. The Magic Mountain

व्यक्ति, अपने एक रिश्तेदार से मिलने के लिए आल्प्स (पर्वतमाला) की यात्रा करता है और मानसिक तथा शारीरिक बाधाओं के कारण वहीं रुक जाता है, और सात दिन, सात सप्ताह, या सात मास नहीं—सात वर्ष तक नहीं लौट पाता।

लेखक ने यात्रा में आनेवाले दृश्यों का वर्णन जैसी मधुर भाषा में किया है वह सहृदय पाठकों को मुग्ध किए बिना नहीं रह सकता। हैंस कैस्टार्प भाग्य पर भरोसा करके अपने साथियों के स्वार्थों की ओर अधिक ध्यान देने लगता है। एक असावधान युवक से हैंस एक महान विचारक बन जाता है। वह विभिन्न व्यक्तियों—वैज्ञानिक, दुरात्मा[1] मानव-स्वभाव के पारखी[2] और इन्द्रिय-परायण[3] की बातें सुनता है और उनके आधुनिक विचारों का सम्मिश्रण और सन्तुलन करता है।

टॉमस मान प्रायः अपने म्यूनिच के घर में ही रहते थे और उनकी स्त्री अपने सद्गुणों द्वारा उन्हें अधिकाधिक लिखने की प्रेरणा दिया करती थी। कला और साहित्य के साथ ही उनका आधुनिक अर्थशास्त्र-ज्ञान भी बहुत विस्तृत था।

नोवल पुरस्कार की घोषणा हो जाने पर जिस समय टॉमस मान उसे प्रथानुसार लेने के लिए स्टॉकहोम गए, तो उन्होंने अपने सलज्ज स्वभाव और देशभक्ति का परिचय दिया। उन्होंने अपने भाषण में सम्राट तथा अन्य उपस्थित सम्भ्रान्त व्यक्तियों को सम्बोधन करते हुए कहा कि वह कोई व्याख्यानदाता नहीं हैं। उन्होंने यह भी कहा कि उन्हें जो पुरस्कार प्राप्त हुआ है उसे वे अपने देश और देशवासियों के चरणों में अर्पित करते हैं।

टॉमस मान की कुछ और कहानियों का अंग्रेज़ी अनुवाद 'मेरिओ और जादूगर'[4] नाम से हुआ है। यह एक कुबड़े और एक जादूगर की अनोखी कहानी है। इसमें मनोविज्ञान और नाटकीय कला का पर्याप्त सम्मिश्रण है। एक सम्मोहिनी विद्याविशारद[5] मेरिओ पर अपनी विद्या का प्रयोग करके उसे एक घृणित जीव से प्रेम करने के लिए विवश करता है। कहानी दुखान्त है। इसमें व्यंग्य का भी विश्लेषण है। इस कहानी का घटनास्थल इटली है। इसमें रोमन अमीरों के चरित्र भी उत्तम रीति से चित्रित किए गए हैं।

टॉमस मान ने कहानी के बहाने युद्ध के पूर्व पाश्चात्य संस्कृति की दुरवस्था और पाश्चात्यों के मस्तिष्क और आत्मा की बीमारी का मार्मिक ढंग से वर्णन किया है।

टॉमस मान की प्रसिद्ध रचना 'रिफ्लेक्शन्स' प्रकाशित हुई जिसकी प्रशंसा भाषा, शैली और विचारों की शुद्धता के कारण सर्वत्र हुई।

टॉमस मान की रचनाओं में जान वेक और रिचार्ड वाग्नर का उल्लेख विशेष रूप में मिलता है। इनकी गद्य-शैली सम्पूर्ण जर्मन साहित्य में अद्वितीय मानी जाती है।

---

१. Cynic
२. Humanist
३. Sensualist
४. Mario and the Magician
५. Hypnotist

टॉमस मान की रचनाओं में 'वडन ब्रुक्स', 'दि मैजिक माउण्टेन' (जादू का पहाड़) और 'डॉक्टर फास्टस' नामक तीन उपन्यास बहुत प्रसिद्ध हैं। इनकी रचनाओं पर बाइ-बल का विशेष प्रभाव है। वर्तमान युग के लिए पुराने साहित्य और विचार को उप-योगी ढंग से उपस्थित करना टॉमस मान की विशेषता है जो बहुत कम लेखकों में पाई जाती है। उन्होंने मानवीय भावनाओं को ऊपर उठाने के लिए श्रेष्ठ प्रतीक पेश किए हैं और इस प्रकार अपने साहित्य को शानदार ही नहीं, यशस्वी और उपयोगी भी बनाया है। पाश्चात्य संस्कृति को जिस लाक्षणिक रूप में उन्होंने प्रदर्शित किया वैसा कोई भी एक लेखक नहीं कर सका। नोबल पुरस्कारदात्री समिति ने उनके इन्हीं विचारों और गुणों को दृष्टि में रखते हुए उन्हें परिष्कृत किया।

टॉमस मान ने पहले यूरोपीय महासमर के कारणों पर विचार प्रकट करते हुए जर्मनी को ही पाश्चात्य या यूरोपीय संस्कृति के रहस्य का अधिष्ठाता माना है। उन्होंने यंत्रवाद और हिंसा की निन्दा की है और सच्चे मानवतावाद का समर्थन किया है। वर्तमान सभ्यता और उसके विकास को उन्होंने कृत्रिम माना है। उन्होंने कठोरतम कसौटी और कटुता के सामने अपने देशवासियों के विचारों का विरोध कर नीत्शे की परम्परा का समर्थन किया और उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

देश से दूर रहने पर भी उन्होंने अपने देश के महान विचारकों की परम्परा की प्रशंसा से मुख नहीं मोड़ा। संघर्ष का सामना करके भी उन्होंने यूरोपीय संस्कृति के सद्-गुणों का सतत गान किया और अपने इस प्रयत्न में निरन्तर लगे रहे।

प्रथम महायुद्ध में जब जर्मनी सारे संसार को नष्ट करने पर तुला दीखता था, टॉमस मान ने उसके उस रुख की—हिंसात्मक विचार और युद्ध की—निन्दा की और ब्रिटेन, फ्रांस, इटली और जारशाही रूस के साथ-साथ बिस्मार्क के जर्मनी की भी खूब खबर ले डाली। उन्नीसवीं सदी के आरम्भ से ही जर्मनी में यह विचार फैलता जा रहा था कि प्रत्येक आदर्श की सृष्टि जर्मन क्षितिज पर होती है और भगवान ने उसी-पर संसार के उद्धार का भार डाला है। इस विचार ने जर्मनी को एक अद्भुत दर्प से मत्त किया और वह सभीको तुच्छ समझने लगा। कैसर मानो इस नये वाद का युगाव-तार बनकर आया और उसने प्रथम महायुद्ध को अस्तित्व में लाने का काम द्रुत वेग से किया।

टॉमस मान पहले तो जर्मन विजय में विश्वास रखते थे और उसे औचित्य की परिसीमा मानते रहे, पर बाद में चलकर उन्होंने अन्य तथ्यों का पर्यवेक्षण किया, और १९१८ में जब जर्मनी परास्त होकर धराशायी हो गया तो टॉमस मान के विचारों को बल मिला। उन दिनों वे 'वडन ब्रुक्स' लिख रहे थे जिसमें जर्मन और यूरोपियन भावना के परिपूर्ण उद्गार सन्निविष्ट हैं। उन्होंने इस उपन्यास में अपने देशवासियों की भर्त्सना अच्छी तरह की है और उनके औद्योगिक जड़वाद की निन्दा और हार में कर डाली है। उन्होंने इस जड़वाद में निहित मिथ्या आडम्बर को विनाशक दुर्गुण बताया है।

इसीलिए उन्हें बिस्मार्क के जर्मनी के पराजय पर आश्चर्य नहीं हुआ। जर्मनी की इस हार के बाद तो उन्हें और भी इस प्रकार के विचार प्रकट करने का प्रोत्साहन मिला। लेनिन और पोयंकारे के बुद्धिवाद के बीच खड़ा होने का सुअवसर मिल गया। यही नहीं, उन्होंने अपने विचार इस प्रकार प्रकट किए जैसे उन्हें जर्मनी के इस पराभव का पूर्वज्ञान था।

टॉमस मान ने 'जादू का पहाड़' (मैजिक माउण्टेन) लिखकर जर्मन गणतंत्र को समुचित स्थल पर स्थापित करने का प्रयत्न किया, यद्यपि इस पुस्तक में कृत्रिमता की भरमार है। उन्होंने पाश्चात्य संस्कृति की जो व्याख्या की है वह रूसी साम्यवाद का विरोधाभास है। इस पुस्तक में शरीर को राष्ट्र का एक प्रतीक मानकर विवेक द्वारा उसके रोगों के शमन का उपाय सोचा गया है। १६१८ ई० में पहला विश्वयुद्ध समाप्त होने पर जर्मनी के नवविधान का पर्यवेक्षण मान ने जिस रूप में किया था, उसके आधार पर ही उन्होंने राष्ट्र के भविष्य की कल्पना की और नीत्शे के सिद्धान्त पर आकर सर्वोत्तम के चुनाव में नये नमूने को प्रश्रय दिया। हरमन और कैसरलिंग भी टॉमस मान के समकालीन थे और वे भी इसी विचार-शैली से प्रभावित हुए।

जर्मनी का आर्थिक ढांचा १६२० से १६२४ तक बहुत बिगड़ गया और शासक-वर्ग पुरानी गलतियां दुहराने से तब भी बाज नहीं आया। टॉमस मान ने देखा कि जर्मनी तो पाश्चात्य जगत् की अपूर्णताओं और साम्यवाद के खतरे के बीच झूल रहा है।

टॉमस मान पहले लेखक थे जिन्होंने व्यक्ति को राष्ट्र का हथियार-मात्र मानने से इन्कार किया और उसे सैन्यवाद के हाथों की कठपुतली बनने का विरोध किया। उनका कहना था कि इस प्रकार का गणतन्त्र तो हमारी सभ्यता और संस्कृति के विनाश का कारण होगा। राजनीतिक परिपक्वता गणतन्त्रीय दीवालियेपन के द्वारा नहीं प्राप्त हो सकती, इसका अनुभव जर्मन लेखकों ने नहीं किया था, जिससे जर्मनी का समूचा इतिहास ही इस विचार से वंचित रह गया और वहां १६३० से १६३३ तक गणतन्त्र के नाम पर सैनिक तानाशाही और गुप्त शस्त्रास्त्र की तैयारियां जारी रहीं।

मार्शल हिंडेनबर्ग के अधिकारारूढ़ होने पर हिटलर का दल आगे बढ़ता गया। मान ने इस बर्बरता के द्वारा जर्मनी के सामाजिक और आर्थिक संकट का दृश्य जैसे पहले ही से देख लिया। उन्होंने बिना हिचक और पूरी दृढ़ता से इसका विरोध किया और कहा कि इससे तो राष्ट्र की बेकारी और बर्बादी बेहद बढ़ जाएगी।

१६३० ई० में जब चुनाव में नाज़ियों की विजय हो गई तो उन्होंने इस घटना को 'गुप्त पड़ी हुई और उपेक्षित शक्तियों का विस्फोट' बताया। मान ने युद्ध के बाद भी जर्मनी का नाम शेष रहने देने के लिए मित्र-शक्तियों—ब्रिटेन, फ्रांस और अमेरिका—की सराहना की। जर्मनी के पराभव का भविष्य पहले से निर्भीक भाव से कह देने के कारण मान को अपने सर्वस्व से हाथ धोना पड़ा था और उन्हें हिटलर के रोष का शिकार बनना पड़ा था। इसीलिए उन्हें जर्मनी से भागकर संयुक्त राष्ट्र अमेरिका

जाना पड़ा था। वहां से वे रेडियो पर अपने देशवासियों को सम्बोधन कर उनके कर्तव्य का ज्ञान कराते रहे, और उन्हें शैतानी, बर्बरता का भक्ष्य बनने से बचने का प्रयत्न करते रहने का आदेश करते रहे। मान ने हिटलर के इस दावे का विरोध किया कि जर्मनी पर यूरोप और संसार के उद्धार का भार है और उसे इसे पूरा करने का प्रयत्न करना ही चाहिए। मान चाहते थे कि जर्मनी से हिटलरवाद तो समाप्त हो जाए, पर वह राष्ट्र के रूप में जीवित, सजग और प्रबल बना रहे।

युद्ध के दिनों से ही मान ने जो विचार व्यक्त किए और युद्धोत्तरकाल में उनके इन विचारों का संसार को जो परिचय मिला, उसके परिणामस्वरूप उन्होंने 'डाक्टर फास्टस' लिखा जिससे उनकी ख्याति और बढ़ी। इस उपन्यास में उन्होंने जर्मनी का बौद्धिक इतिहास ही कूट-कूटकर भर दिया। उनकी लेखन-शक्ति पुरानी होने पर भी उसमें संस्कृति और संगीत को विशेष रूप में मुखरित किया गया है। १९४३ ई० से वे इस प्रकार की विशिष्ट और अर्द्धराजनीतिक रचनाओं में लग गए। 'बडन ब्रुक्स', 'दि मैजिक माउण्टेन' (जादू का पहाड़), 'जोजेफ और उनके भाई' आदि उपन्यास कला-प्रधान हैं। इसके बाद मान फ्रैंकफर्ट विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ० अडर्नो के साथ संगीत के उस पूर्ण तत्त्वज्ञान के समर्थन में लग गए, जिसके लिए शोपेनहावर, वाग्नर और नीत्शे इतना अधिक लिख गए थे।

१९४५ के बाद जर्मन लोकमत टॉमस मान के विरुद्ध हो गया जिसका मुख्य कारण राजनीतिक था। लोगों ने 'डॉ० फास्टस' की वस्तुकथा और वर्णन का मनमाना अर्थ लगाना शुरू कर दिया। किन्तु फ्रांस में उनका और उनकी रचनाओं का पूरा स्वागत-सत्कार हुआ। फिर तो हैम्बर्ग के बुद्धिवादियों ने भी उनकी रचनाओं की कद्र की। उनकी ताजातर रचना 'फेलिक्स क्रुल' का वहां और भी सम्मान हुआ। १९५५ में उन्होंने स्तुतगार्ट में अपने विचार पूरी स्पष्टता से व्यक्त किए। उन्होंने जर्मनों की आध्यात्मिक एकता पर बहुत जोर दिया।

१९५५ में टॉमस मान का देहान्त होने पर उनके शव को स्विस भूमि में दफनाया गया। लेखक ने 'डाक्टर फास्टस' में जो विचार व्यक्त किए हैं, उनकी व्याख्या अब जर्मनी तथा अन्य देशों का राजनीतिपरक विद्वत्समाज अनेक ढंग से कर रहा है।

# सिंक्लेयर लेविस

अमेरिकन साहित्य के तीन समय-विभाग किए जा सकते हैं—पहला वह जो औप-निवेशिक है और विद्रोह से सम्बन्ध रखता है, किन्तु जो बहुत अल्प परिमाण में प्राप्य है, दूसरा वह जिसे साहित्यिक मध्यकाल का ठोस साहित्य कह सकते हैं और तीसरा समय-विभाग उसे कहा जा सकता है जो उन्नीसवीं सदी के अन्तिम तथा बीसवीं शताब्दी के आरम्भिक दस वर्षों में लिखा गया है। इस अन्तिम अवधि में अधिकाधिक लेखकों का प्रादुर्भाव हुआ है। यह बात नहीं है कि इस अन्तिम काल में केवल लेखकों की संख्या ही बढ़ी हो, प्रत्युत अभूतपूर्व लेखकों और समालोचकों ने इसे पूर्व की अपेक्षा अधिक प्रख्यात बना दिया है। इस अन्तिम श्रेणी के लेखकों में सिंक्लेयर लेविस का एक खास दर्जा है। तीस वर्ष से नोबल पुरस्कार का प्रचलन होते हुए भी अमेरिका के इस विख्यात लेखक को १९३० ई० में पुरस्कार इसलिए प्रदान किया गया कि इस अद्वितीय लेखक की ओर समस्त संसार—विशेषतः पश्चिमी यूरोप—का ध्यान पूर्णतः आकर्षित हो गया था, और इनकी रचनाओं के अनुवाद भी अनेक भाषाओं में हो चुके थे।

सिंक्लेयर लेविस का जन्म सॉक सेण्टर (मिनेसोटा) में ७ फरवरी, १८८५ ई० में हुआ था। सॉक सेण्टर अमेरिका के मिडिल वेस्ट प्रदेशान्तर्गत एक गांव है जिसकी जनसंख्या ढाई हज़ार से अधिक नहीं है। लेखक की 'मुख्य मार्ग'[1] नामक पुस्तक में इस गांव का वर्णन सुन्दर रीति से हुआ है। सिंक्लेयर लेविस विशुद्ध अमेरिकन वंश के हैं। उनके पूर्वज कृषि, व्यापार और चिकित्सा आदि विभिन्न कार्य करते थे। उनके पिता भी उनके नाना की भांति देहाती चिकित्सा का कार्य करते थे। उनके चाचा और भाई भी चिकित्सा का ही पेशा करते थे। बचपन में वे अपने पिता के साथ देहात में घूमा करते थे और चिकित्सा-कार्य में उनके सहायक बनकर औज़ार आदि ले जाने का कार्य करते थे।

स्कूल में उन्होंने लावेल और लांगफैलो की रचनाओं को पढ़ाए जाने का विरोध किया। साथ ही उन्होंने फ्रेंच और बाइबल के जोना और ह्वेल जैसे 'सत्य' के पढ़ाए जाने का भी कम विरोध नहीं किया। उन्होंने अन्य विद्यार्थियों की तरह आंख मूंदकर वहीं पढ़ने के बदले मिनेसोटा विश्वविद्यालय में भर्ती होने का निश्चय कर लिया और

---

१. Main Street

कुछ लोगों का विरोध करने पर भी दाखिल हो गए।

बाद में पिता की आज्ञा लेकर सिंक्लेयर 'एल' चले गए, जहां वे एक साहित्यिक पत्रिका का सम्पादन करने लगे। वे सर्वत्र अपने सहपाठियों और साथियों से पृथक् व्यक्ति मालूम होते थे। प्रायः सभी विषयों में उनका सबसे मतभेद रहता था और उनमें समालोचना की विशेष प्रवृत्ति देखी जाती थी। ग्रेजुएट होने के पश्चात् सिंक्लेयर लेविस ने अपने मित्रों और सहपाठियों से कहा था कि उनकी इच्छा अमेरिकन जीवन का परिचायक एक सुन्दर उपन्यास लिखने की है। ग्रेजुएट होने के पूर्व ही उन्होंने इसके लिए ज्ञान-सम्पादन आरम्भ कर दिया था। उन्होंने उपटन सिंक्लेयर द्वारा संचालित हेलिकन (न्यू जर्सी) स्थित समाजसत्तावादी उपनिवेश में भाग लिया। संचालकों ने उसे 'स्वर्ग' का नाम दे रखा था। किन्तु सिंक्लेयर को इस संस्था से संतोष और आशातीत अनुभव नहीं प्राप्त हुआ और वे इसे छोड़कर अपने एक साहित्यिक मित्र के साथ मैनहैटन में रहने लगे। उन्होंने 'लाइफ' और 'पक' नामक पत्रिकाओं के लिए हास्यात्मक लेख लिखे जो गद्य और पद्य दोनों ही में थे। कुछ समय तक वे 'ट्रांस एटलाण्टिक टेल्स' नामक पत्रिका के सहकारी सम्पादक रहे। इसके पश्चात् उन्होंने जहाज द्वारा पनामा की यात्रा करने का निश्चय किया। इसके पूर्व उन्होंने जानवरों को ले जानेवाले जहाजों पर कॉलिज की छुट्टियों के दिनों में इंग्लैण्ड की यात्रा की थी। उन्होंने पनामा नहर पर कोई नौकरी प्राप्त करने की चेष्टा की थी, किन्तु काम न मिलने पर 'एल' वापिस आ गए। १९०८ ई० में वे ग्रेजुएट हो गए थे।

सिंक्लेयर लेविस की अभिलाषा उच्चकोटि का लेखक बनने की थी। उन्होंने वाटरलू, आइवा, सेन फ्रांसिस्को और वाशिंगटन में अनेक स्थानों पर सम्पादन-कार्य किया, पर अधिक समय के लिए वे कहीं भी नहीं ठहरे। कैलीफोर्निया में वे छः मास तक विलियम रोज बेनेट के साथ रहे और उनके साथ लेखन-कार्य करते रहे, किन्तु दर्जनों कहानियों में से वे केवल अपनी 'जज' नामक आख्यायिका का स्वत्वाधिकार बेच सके और फिर न्यूयार्क लौटकर वहां अपनी साहित्यिक सफलता के लिए चेष्टा करने लगे।

सबसे अधिक समय के लिए सिंक्लेयर लेविस फ्रेडरिक ए० स्टोक्स कम्पनी (न्यूयार्क) के सम्पादकीय विभाग में ठहरे। वहां वे कुल दो वर्ष रहे। आरम्भ में उन्हें साढ़े बारह डॉलर प्रति सप्ताह वेतन मिलता रहा। १९१२ ई० तक वहां रहकर उन्होंने सबसे विशेष उल्लेखनीय सफलता यह प्राप्त की कि उनकी 'हाइक और वायुयान'[1] पुस्तक प्रकाशित हुई। इसके लिए आर्थर हचिन्स ने दोरंगे चित्र भी बनाए थे और इसका समर्पण लेखक ने अपने सबसे पुराने मित्र एडविन और इवांजिल लुई को किया था। इसमें एक सोलह वर्षीय बालक हाइक ग्रिफिन की मनोरंजक कहानी सरल और स्पष्ट भाषा में लिखी गई है। इसमें बचपन और युवावस्था के

1. Hike and the Aeroplane

अनुभवों का सुन्दर चित्रण है। इस कथानक का घटनास्थल कैलीफोर्निया है। हाइक एक प्रसिद्ध फुटबाल-खिलाडी लड़का है। उसके साथी का नाम टॉरिंगटन इर्वी था जिसका स्कूली नाम 'पूडिल' या 'पूड' भी था। ये दोनों खिलाड़ी लड़के, वायुयान के अर्द्धविक्षिप्त आविष्कर्ता मार्टिन प्रीस्ट को उसके अधूरे हवाई जहाज को लेकर आश्चर्य में डाल देते हैं। ये दोनों उदीयमान बालक लेफ्टिनेण्ट एडलर और हवाई बेड़े के बोर्ड को आश्चर्यचकित कर देते हैं। इन दोनों लड़कों ने वायुयान के उड़ाने में आविष्कर्ता को जो सहायता दी और डेढ़ सौ मील प्रति घण्टा उड़ने का जो महोद्योग किया वह वास्तव में प्रशंसनीय है। इस पुस्तक में यह भी दिखाया गया है कि हाइक जैसे एक पराक्रमी बालक के उद्योग से विद्रोही लोगों के आक्रमण से वार्सटन के रैंचो (Rancho) की रक्षा किस प्रकार की जा सकी। हाइक हवाई जहाज़ उड़ाकर उससे पहरा देने का काम करता है।

इस पुस्तक के पश्चात् सिंक्लेयर लेविस ने 'एडवांचर' नामक पत्रिका का सम्पादन आरम्भ किया और फिर वे जार्ज एच० डोरान कम्पनी के विज्ञापन-मैनेजर और एक पत्र-प्रकाशन-संस्था में सम्पादन का कार्य करते रहे। इन दिनों उन्हें आठ घण्टे से भी अधिक काम करना पड़ता था। इतना काम करते हुए भी वे रात को या बचे हुए समय में 'हमारे श्री० रेन'[1] नामक उपन्यास लिखते रहे, जो १९१४ ई० में हार्पर एण्ड ब्रदर्स ने प्रकाशित किया। परिपक्वावस्था के पाठकों के लिए यह उनका प्रथम उपन्यास था। लेखक के, जानवरों को ले जानेवाले जहाज़ में, इंगलैण्ड जाने का अधिकांश अनुभव इस पुस्तक में आ गया है। इसमें न्यूयार्क के एक मुहर्रिर और उसके परिवर्तित भाग्य का दिग्दर्शन कराया गया है। इस पुस्तक के लिखे जाने के बाद सिंक्लेयर लेविस ने अपना विवाह ग्रेस लिविंग्स्टन हेगर से कर लिया। 'हमारे श्री० रेन' की साधारण सफलता से उत्साहित होकर उन्होंने दूसरे वर्ष (१९१५ ई० में) 'दि ट्रेल आफ दि हॉक' नामक उपन्यास लिख डाला। इसका कथानक भी उसी ढंग का है जैसा बच्चों के लिए लिखी गई 'हाइक और वायुयान' का है। इसके पश्चात् उन्होंने 'नौकरी'[2] नामक उपन्यास लिखा जिसमें न्यूयार्क की स्त्रियों के व्यापारिक जीवन का सफल चित्रण है।

सिंक्लेयर लेविस के जीवन का महत्त्वपूर्ण समय १९१५ ई० का ग्रीष्म-काल है जब वे पत्रकार और पुस्तक-सम्पादक से एक स्वतन्त्र लेखक बन गए। छुट्टी के दिनों में जब वे अपनी स्त्री के साथ केप कोड का पैदल भ्रमण कर रहे थे, उन्हीं दिनों एक संक्षिप्त कहानी लिखकर उन्होंने उसे 'सैटर्डे ईवनिंग पोस्ट' को, जो अमेरिका का सर्वश्रेष्ठ साप्ताहिक समझा जाता है, भेजने का निश्चय किया। उन्हें आश्चर्य हुआ, क्योंकि पहले की भांति उपर्युक्त पत्र ने छापने से इन्कार न करके उसे छाप दिया। यही नहीं, जॉर्ज होरेस लॉरीमर ने उनसे और भी ऐसी कहानियां लिखने का अनुरोध

१. Our Mr. Wrenn २. The Job

किया। इसपर सिक्लेयर लेविस ने तीन और कहानियां लिख भेजीं जो तीन मास के अन्दर स्वीकृत हो गईं। इसपर उन्होंने पत्रों और पुस्तक-प्रकाशकों के दफ्तरों में काम करना बिलकुल बन्द कर दिया। उपर्युक्त पत्र में ही उन्होंने धारावाहिक रूप में 'स्वतंत्र वायु'[1] नामक उपन्यास लिखना आरम्भ किया जिसमें महोद्योग की बातें प्रचुर मात्रा में भरी हुई हैं। इसमें व्यंग्य और श्लेष का भी अभाव नहीं है। इस कहानी का नायक गैरेज (मोटर किराये पर रखने का घर) किराये पर चलाता है। इसमें लेखक ने अपने उस जीवन के अनुभव का चित्रण किया है जब वे नौकरी के उम्मीदवार होकर इधर-उधर मारे-मारे फिरते थे।

जिन दिनों सिक्लेयर लेविस अपनी स्त्री के साथ भ्रमण कर रहे थे, उन्हीं दिनों उनके मन में उपन्यासकार बनने की प्रबल अभिलाषा जाग्रत् हो रही थी। जाड़े के दिन उन्होंने वाशिंगटन में काटे। यहीं ठहरकर उन्होंने 'मुख्य मार्ग' नामक उपन्यास के प्रधान अंश लिख डाले थे। अब से पन्द्रह वर्ष पूर्व कॉलेज की छुट्टियों में ही उन्होंने इस उपन्यास का कथानक सोच लिया था। इसका मुख्य पात्र उन्होंने एक वकील को चुना था जिसका नाम गुई पोलक था। इस उपन्यास का दूसरा नाम उन्होंने 'दि विलेज वीरस' भी चुना था। इस कथानक का मसविदा उन्होंने तीन बार लिखा और बराबर इसके सम्बन्ध में सोचते रहे। इसके सम्बन्ध में निरन्तर यही निश्चय करते रहे कि उन्हें यह उपन्यास अवश्य लिखना है। उन्होंने यद्यपि इस पुस्तक की अधिक बिक्री की आशा नहीं की थी; किन्तु फिर भी इसे वे अपनी उन्नति का सोपान समझते थे। एक वर्ष तक उन्होंने इसके लिखने और विकसित करने में पूर्ण परिश्रम किया। १९२० ई० के अक्टूबर मास में यह उपन्यास प्रकाशित हो गया। 'मुख्य मार्ग' का नायक आकर्षण और उत्सुकता का केन्द्र बन गया। दो ही मास में इसकी ५६,००० प्रतियां बिक गईं—दो वर्ष में इसकी ३,९०,००० प्रतियां बिकीं और जर्मन, डच, स्वीडिश और फ्रेंच भाषाओं में इसके अनुवाद भी प्रकाशित हो गए।

'मुख्य मार्ग' सिक्लेयर लेविस का प्रथम महत्त्वपूर्ण उपन्यास माना जाता है। इसमें उन्होंने अपनी लेखन-शैली को विकसित किया है और वातावरण उपस्थित करने के लिए आवश्यक वर्णन विस्तारपूर्वक किया है। फिर भी चूंकि पुस्तक में समय-समय पर अनेक परिवर्तन और परिवर्द्धन किए गए हैं और यह एक बड़े अर्से के बाद तैयार हो पाई है, इसलिए इसके ढांचे में त्रुटियां रह गई हैं। प्रसिद्ध समालोचक डॉक्टर हेनरी सीडेल कैनबी का कहना है कि पुस्तक के ढांचे में अनेक स्थल कमजोर हैं और इसकी प्रधान नायिका के चरित्र में भी ऐसी ही त्रुटियां पाई जाती हैं फिर भी अमेरिकन कस्बे का वातावरण जिस उत्तमता के साथ इसमें उपस्थित किया गया है, वह पाठकों को सदैव और आकर्षित करने की विशेष क्षमता रखता है।

इसके पश्चात् सिक्लेयर ने देश के बाहर जाकर 'बैबिट'[2] लिखा। साधारणतः

1. Free Air 2. Babbitt

साहित्यिकों का इसके प्रकाशन-काल से अब तक यही मत रहा है कि 'बैबिट' ही लेखक की सर्वोत्कृष्ट रचना है। इसका कथानक 'मुख्य मार्ग' के कथानक से अधिक ठोस और दृढ़ है तथा इसके सम्वाद और चरित्र-चित्रण में भी पहले की अपेक्षा अधिक प्रगतिशीलता पाई जाती है। इस उपन्यास द्वारा लेखक ने पाठकों की क्षमता की भी परीक्षा ले डाली है, क्योंकि इसमें वर्णित व्यंग्य और हास-परिहास सबकी समझ में नहीं आ सकते। इस पुस्तक के प्रकाशित होते ही सिक्लेयर लेविस का नाम देश-विदेश में सर्वत्र फैल गया। इंग्लैण्ड के साहित्यिकों ने इनको डिकेंस, थैकरे और बालज़क के जोड़ का लेखक माना। कुछ समालोचकों ने 'बैबिट' को 'अत्यधिक अमेरिकन' कहकर उसके चरित्र-चित्रण में अत्यधिक आंचलिकता होने का दोषारोपण भी किया, और यह कुछ अंशों में ठीक भी है, क्योंकि अमेरिकन रीति-रिवाज और स्थिति से नितान्त अनभिज्ञ पाठक, लेखक के अति विस्तृत स्थानीय वर्णन से अवश्य उकता जाएंगे—किन्तु इससे पुस्तक के महत्त्व में कमी नहीं आती—हां, यह अवश्य कहा जा सकता है कि यदि पुस्तक में स्थानीय वर्णन इतना अधिक न होता तो शायद अन्य देशों में इसका और भी अधिक व्यापक रूप में प्रचार होता।

'बैबिट' के बाद सिक्लेयर ने 'ऐरोस्मिथ' की रचना की। 'बैबिट' में जहां लेखक ने उसके मुख्य पात्र मि० बैबिट के साथ समय-समय पर सहानुभूति दिखाई है, वहां 'ऐरोस्मिथ' में मार्टिन ऐरोस्मिथ के प्रति वे निश्चित रुख नहीं रख सके हैं। इसी प्रकार संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के सामाजिक जीवन और चिकित्सकों के पेशे के प्रति भी निर्धारित मत नहीं प्रदर्शित कर सके हैं। इसमें १९२० ई० के संयुक्त राष्ट्र अमेरिका का सजीव चित्रण पाया जाता है।

विदेशों का भ्रमण करके तथा संयुक्त राष्ट्र की छब्बीसों मुख्य रियासतों में भ्रमण करने के पश्चात् सिक्लेयर लेविस ने किसी छोटे नगर में बस जाने का निश्चय किया। उन्होंने हार्टफोर्ट में देहात से मिलता हुआ एक मकान ले लिया और वहां परिचय बढ़ाने लगे—विशेषतः मजदूरों से उन्होंने बड़ी घनिष्ठता बढ़ानी शुरू कर दी। दूसरा उपन्यास लिखने की इच्छा उन्हें थी, किन्तु एक विशेष प्रेरणात्मक घटना तक वे रुके रहे। एक दिन न्यूयार्क जाते हुए अपना उपन्यास लिखने का उपकरण उन्हें मिल गया—वह एक ऐसे आदमी से मिले जिसके ढंग का प्रधान नायक वे अपने नये उपन्यास में रखना चाहते थे। उनके इस प्रधान का नाम डॉक्टर पॉल-डि-क्रूफ था। महायुद्ध के दिनों में इस डॉक्टर ने अमेरिकन सेना में डॉक्टर का काम किया था। इसने गैस (विषाक्त वायु) सम्बन्धी कुछ खास आविष्कार किए थे और बाद में रॉकफेलर इन्स्टीट्यूट में भी कई आविष्कार करने में सफलता प्राप्त की थी। लेखक ने जिस व्यक्तित्व की कल्पना अपने मन में की थी उसकी पूर्ति डॉक्टर क्रूफ द्वारा होती थी। इसीलिए उपर्युक्त डॉक्टर की सहायता से लेखक ने महामारी की चिकित्सा का वर्णन अत्यन्त सफलता के साथ किया है। इसके विभिन्न अंश क्रमशः लन्दन और फाण्टेन-ब्ली में

लिखे गए थे। इसके लिखने में लेखक ने दिन-रात परिश्रम किया। इसकी आवृत्ति लेखक ने तीन बार की। अन्त में मार्ग में जहाज पर ही वह समाप्त हुई और १६२५ ई० में जाड़े के दिनों में वे अमेरिका वापस आ गए। 'ऐरोस्मिथ' में चरित्र-चित्रण सुन्दर हुआ है। इसमें आधुनिक धूर्तता का श्लेषात्मक वर्णन किया गया है और वैज्ञानिक अन्वेषण के मार्ग में आनेवाली कठिनाइयों पर आक्रमण किया गया है। चरित-नायक की सबसे बड़ी अभिलाषा वैज्ञानिक उन्नति की ओर है। इन सब गुणों के होते हुए भी इस उपन्यास में नाटकीय गुणों की प्रौढ़ता का अभाव है। इस उपन्यास में सैनिक उपयोग में आनेवाले वैज्ञानिक अन्वेषणों का जो विरोध किया गया है, बहुत-से वैज्ञानिकतापूर्ण मस्तिष्क रखनेवाले पाठक उसे पसन्द नहीं करते। अन्तिम दृश्य में 'ऐरोस्मिथ' के वर्षों के अन्वेषण का बाह्य दुःखान्त प्रदर्शित किया गया है।

'ऐलमर जेण्ट्री' नामक इनका बाद का उपन्यास समाज के लिए एक फोड़े के चीरने के सदृश है और वह भी कोमल अंग के फोड़े के समान। पुस्तक क्या है, समाज पर भीषण प्रहार है। इस पुस्तक के लिखने के पश्चात् सिक्लेयर की 'डाड्स्वर्थ' नामक रचना प्रकाशित हुई। इसमें सैम डाड्स्वर्थ का चरित्र चित्रित किया गया है। डाड्स्वर्थ का चरित्र बैबिट से अधिक परिष्कृत चित्रित किया गया है। वह पचास वर्ष की अवस्था में मोटर के व्यापार में धन कमाकर अवकाश ग्रहण करके यूरोप की प्राचीन संस्कृति का आनन्द लेने का निश्चय करता है। उसके साथ उसकी स्त्री फ्रान भी होती है। उसकी स्त्री उससे अपेक्षा दस वर्ष कम अवस्था की और पुंश्चली युवती है—साथ ही वह कुछ मन्द-बुद्धि और स्वार्थ-परायणा भी है। दोनों पति-पत्नी में प्रायः वाग्युद्ध हुआ करता है। उनके वार्तालाप से उनकी शिक्षा और परिष्कृति का पता चलता है। यूरोप के नगरों और वहां के समाज पर भी सिक्लेयर ने व्यंग्य किया है। कई समालोचकों ने इस उपन्यास की तुलना १६३१ ई० में प्रकाशित स्ट्रुथर्स बर्ट के 'त्योहार'[1] नामक उपन्यास से, जिसमें अमेरिकन व्यापारी का चरित्र-चित्रण बड़ी सफलतापूर्वक किया गया है, की है। सिक्लेयर की अन्य कहानियों में 'मैण्ट्रप' और 'कूलिज को जाननेवाला मनुष्य'[2] अधिक प्रसिद्ध हैं। ऊपर जिन चार प्रसिद्ध उपन्यासों का वर्णन किया गया है वे एक प्रकार से सामाजिक इतिहास कहे जा सकते हैं। इनमें सामाजिक विषयों का विश्लेषण सुन्दर रीति से किया गया है। अमेरिका की भौतिक पदार्थों की उपासना को इनमें व्यंग्यात्मक ढंग से चित्रित किया गया है। इन सबमें 'मुख्य मार्ग' की प्रशंसा 'बैबिट' से कुछ ही घटकर हुई है। फिर भी सिक्लेयर लेविस को समझने के लिए उनकी सभी रचनाओं को पढ़ने की आवश्यकता है।

सिक्लेयर लेविस की मृत्यु १६५१ ई० में हुई।

---

१. Festival   २. The Man Who Knew Coolidge

# एरिक एक्सेल कार्लफेल्ट

१६३१ ई० का नोबल पुरस्कार प्रसिद्ध स्वीडिश कवि और गायक डॉक्टर कार्लफेल्ट को मिला। अब तक स्वीडिश एकेडमी ने जितने व्यक्तियों को पुरस्कार प्रदान किए थे, वे सभी जीवित थे और उन्होंने अपने जीवन-काल में ही पुरस्कार प्राप्त किया था, किन्तु डॉक्टर कार्लफेल्ट के देहान्त के पश्चात् उनके पुरस्कार की घोषणा हुई। यद्यपि १६२० ई० से ही उन्हें अनेक बार यह पुरस्कार प्रदान करने का प्रस्ताव किया गया, किन्तु उन्होंने इसे लेने से साफ इन्कार कर दिया। इसका कारण यह था कि डॉक्टर कार्लफेल्ट स्वीडिश एकेडमी (पुरस्कार-दायी समिति) के सदस्य और मन्त्री रह चुके थे। ऐसी अवस्था में उन्होंने यह आदर ग्रहण करने से बराबर इन्कार ही किया। उनका शरीरान्त होते ही १६३१ ई० में समिति ने उन्हें पुरस्कार दिए जाने की घोषणा कर दी और पुरस्कार की रकम उनके तीनों बच्चों के नाम कर दी। इसपर साहित्यिक संसार ने एकेडमी के इस कार्य पर कुछ आपत्ति भी की और अल्फ्रेड नोबल के उद्देश्यानुकूल पुरस्कार दिया गया या नहीं, इसे विवाद का विषय बना लिया गया और कहा गया कि नोबल महोदय का उद्देश्य यह था कि पुरस्कृत व्यक्ति धन पाकर अपने क्षेत्र में मानव-जाति की अधिकाधिक सेवा करने के लिए दत्तचित्त हों और इस प्रकार यह रकम उन्हें प्रोत्साहन के लिए दी जानी चाहिए, न कि मरे हुए व्यक्ति को पुरस्कार देकर भावी उन्नति की आशा से वञ्चित होना ! यह भी प्रश्न हुआ कि यह पुरस्कार भूतकाल में की गई सेवाओं के लिए ही होता है या भविष्य में भी उत्तेजन या प्रोत्साहन देने के लिए ? उत्तर-प्रत्युत्तर में यह बात भी कही गई कि पहले जिन व्यक्तियों को बुढ़ापे की मरणासन्न अवस्था में पुरस्कार प्रदान किया गया था उनके द्वारा भी मानव-जाति की और अधिक सेवा होने की सम्भावना नहीं थी।

कुछ भी हो, यह बात तो निर्विवाद है कि एरिक एक्सेल कार्लफेल्ट की काव्यमयी प्रतिभा प्रशंसनीय थी। दो दशाब्दी से वे स्वीडन के सर्वाग्रणी जीवित कवि समझे जाते थे। स्वीडन के १८६५ ई० के महान राजनीतिक परिवर्तन और कृषक-समुदाय की अधिकार-प्राप्ति ने उस देश के साहित्य में जीवन फूंक दिया। प्राचीन संस्कृति की उच्चता के द्योतक अद्भुतालय खोले गए—तत्कालीन साहित्य के प्रकाशन में दिलचस्पी ली गई और सेल्मा लागरलोफ, ऑस्कर लिवरटिन तथा गस्टाफ फ्रॉडी ने संसार में उसकी ख्याति

बढ़ाने में अद्‌भुत कार्य किया। कार्लफेल्ट ने भी अपने देश की प्राचीन संस्कृति और कृषक-जीवन का चित्रण करने में अपनी कला का परिचय दिया है। पूर्णवर्ती स्वीडिश कवियों की भांति उन्हें भी अपने कृषक-वंश और प्रकृति-शोभा-संयुक्त देश पर बड़ा गर्व था।

कार्लफेल्ट का जन्म २० जुलाई, १८६४ ई० को फोकारना में हुआ था। स्थानीय स्कूल में शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् उन्होंने उपसाला-विश्वविद्यालय में उच्च शिक्षा प्राप्त की। कुछ समय तक शिक्षक का कार्य करने के पश्चात् १९०३ ई० में उन्होंने कृषि-इंस्टीट्यूट के पुस्तकालय में पुस्तकालयाध्यक्ष का काम किया। वे बड़ी ही कोमल प्रकृति के थे और शांतिपूर्वक अपने उद्देश्य-पूर्ति के लिए कार्य किया करते थे। उन्होंने कभी भी सार्वजनिक जीवन में ख्यातिप्राप्त बनने की चेष्टा नहीं की। ये कई बार शिक्षा-सम्बन्धी कमीशनों में चुने गए। १९०४ ई० के पश्चात् स्वीडिश एकेडमी के सदस्य हो गए। इस प्रकार उनका संसर्ग संसार के प्रमुख विद्वान आगन्तुकों और लेखकों से हो गया जिन्होंने उनकी कविताओं की प्रशंसा की। इससे उन्हें पर्याप्त प्रोत्साहन मिला, किन्तु अभी तक स्कैंडेनेविया के बाहर उनका नाम थोड़े ही पाठकों में सुपरिचित था। उनकी रचनाओं का अंग्रेजी अनुवाद करनेवाले और उनके लिए दुभाषिये का काम करनेवाले चार्ल्स व्हार्टन स्टॉर्क ने उनके काव्य और व्यक्तित्व दोनों ही की प्रशंसा की है।

उनकी पहली पुस्तकाकार रचना एक जिल्द में 'प्रेम और अरण्य के गीत'[1] उस समय प्रकाशित हुई थी जब कार्लफेल्ट की अवस्था इकत्तीस वर्ष की थी। इसमें उन्होंने अपने देश के गांवों और उनके स्त्री-पुरुषों की गम्भीर भावनाओं का कलापूर्ण वर्णन किया है। १८९८ और १९०१ ई० में इस पुस्तक की दूसरी और तीसरी जिल्दें प्रकाशित हुईं। स्टॉर्क का कथन है कि उनकी इन जिल्दों में व्यक्तित्व की अपेक्षा सामूहिकता का विशेष चित्रण है—लेखक ने जनता के मनोभावों का अध्ययन करके उसे सुन्दर रूप में प्रकट करने की चेष्टा की है।

दूसरी और तीसरी जिल्दें बाद में 'फ्रिडोलिन का काव्य'[2] नाम से संयुक्त रूप में प्रकाशित हुईं। इस काव्य का नायक एक कृषक है जो प्रेमी, हंसोड़ तथा दयालु प्रकृति का आदमी है। कवि की भांति नायक—फ्रिडोलिन—ने भी विश्वविद्यालय की शिक्षा प्राप्त की थी, किन्तु प्रौढ़ावस्था में वह कृषि-कार्य करने लगा था और उसमें पूरा आनन्द लेता था। यहां बाल्यावस्था की स्मृति उसे मुग्ध कर देती थी। कार्लफेल्ट का ग्राम-जीवन का सादा किन्तु कवित्वपूर्ण वर्णन उनकी तुलना बर्न्स और टेनिसन से कराता है।

'प्रतीक्षा'[3] शीर्षक कविता का नमूना देखिए—

प्रतीक्षा की सुमधुर घड़ियां।
विपुल जल-राशि-सदृश जातीं,

---

१. Songs of Love and Wilderness
२. Fridolin's Poetry, or The Songs of Fridolin
३. Time of Waiting

सुकोमल कलिका-सी भातीं,
जिन्हें विकसाती पंखड़ियां। प्रतीक्षा की० ॥

× × ×

मई के दिन होते सुन्दर,
मनोहर आकर्षक मृदुतर;
बुरी एप्रिल की दुपहरियां। प्रतीक्षा की० ॥

× × ×

आर्द्र वन हैं अतिशय शीतल,
जुड़ाते हैं सबके हृत्तल,
वृक्ष करते हैं रंगरलियां। प्रतीक्षा की० ॥

नई पीढ़ी के कवियों की भांति कार्लफेल्ट ने पद्य के साथ ही गद्य लिखने की चेष्टा नहीं की। उन्होंने नाटक भी नहीं लिखे। उनकी कविताओं की कुल छः जिल्दें प्रकाशित हुई हैं जिनमें से अन्तिम १९२७ ई० में प्रकाशित हुई है जिसका नाम 'पतझड़ की घंटी'[1] है। उनकी अन्तिम कविता 'शीतकाल का वाद्य' मानी जाती है। अपने देश-वासियों के आखेट और नृत्य-गान-प्रेम को भी उन्होंने भली भांति प्रदर्शित किया है। उनमें आरम्भिक भावावेगों, प्रबल भावनाओं और हास्य-प्रेम का भी सुन्दर दिग्दर्शन कराया गया है। उनकी एक और कविता का नमूना देखिए—

तुम्हारा जीवन है कैसा ?
कहो, क्या यह है झंझावात ?
वेदना का निष्ठुर संघात ?
बना है या यह अति दुस्ताप—
युद्ध के दारुण दुःख जैसा ? तुम्हारा० ॥

× × ×

हुआ है यह बुझती लौ-सा,
व्यर्थ आशा के शैशव-सा,
सूर्य-से लड़नेवाले मेघ,
और उसके क्षण-वैभव-सा।
किन्तु है सुखी आज कैसा ! तुम्हारा० ॥

इनकी 'एज़म्पशन ऑफ़ एलीजाह' शीर्षक कविता भी अत्यन्त सजीव भाषा में लिखी गई है।

विश्वव्यापी महासमर से कार्लफेल्ट को भी वैसा ही दुःख हुआ था जैसे अन्य बहुत-से भावुक कवियों को हुआ था। उनके काव्यमय गद्य का नमूना देखिए :

"युद्ध में व्यस्त मानव-मेदिनी पागलों का सा कार्य कर रही है। ऐसे जगत् को

१. The Horn of Autumn

छोड़कर हमें वहां चलना चाहिए जहां हम एक-दूसरे से पहले मिले थे और देखना चाहिए कि वहां वसन्त ऋतु किस प्रकार आगे बढ़ रही है।...तू वायु के ताजे झोंके के सदृश है, मुझे वही स्नेह प्रदान कर जिसे मैं पहले प्राप्त कर चुका हूं।...मुझे कंजड़ों की भांति स्वतन्त्र करके मुक्त भ्रमण करने दे। मुझे शोक और हास्य का वह सौख्य प्रदान कर जो जीवन और मृत्यु की शक्ति देता है।"

डॉक्टर एक्सेल अपवाल ने डॉक्टर कार्लफेल्ट की कविताओं की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि कार्लफेल्ट ने रूसी लेखक तुर्गनेव की भांति निर्जीव पदार्थों में भी जीवन डाल दिया है। पृथ्वी को उन्होंने 'पृथ्वीमाता' के रूप में याद किया है। स्वीडिश कवि बेलमैन की भांति उनकी रचना की प्रत्येक पंक्ति संगीतमय है।

कार्लफेल्ट की मृत्यु १६३३ ई० में हुई।

# जॉन गॉल्सवर्दी

१९३२ ई० का नोबल पुरस्कार ब्रिटेन के विख्यात उपन्यासकार और नाटककार जॉन गॉल्सवर्दी को प्राप्त हुआ था।

गॉल्सवर्दी का जन्म १४ अगस्त, सन् १८६७ ई० को सरी के कूम्ब नामक स्थान में हुआ था। उनकी शिक्षा हैरो और ऑक्सफोर्ड में हुई थी। ऑक्सफोर्ड में न्यू कॉलिज के भी वे सदस्य रह चुके थे। पहले उनकी इच्छा बैरिस्टर बनने की थी, किन्तु साहित्यिक आकर्षण के कारण वे उसमें सफल नहीं हुए और शीघ्र ही उन्होंने पुस्तक-लेखन आरम्भ कर दिया। तीस वर्ष की अवस्था में उन्होंने अपना प्रथम उपन्यास 'जोसलिन'[1] लिखना शुरू किया था।

उनका 'सम्पत्तिशाली'[2] १९०६ ई० में प्रकाशित हुआ। उस समय गॉल्सवर्दी की अवस्था चालीस वर्ष की हो चुकी थी। इसी उपन्यास के बाद साहित्यिक क्षेत्र में उनका नाम हुआ। बाद में यह उपन्यास 'दि फॉर्साइट सागा'[3] के नाम से प्रकाशित हुआ। इसके नये संस्करण में एक ही जिल्द में दो-तीन उपन्यास प्रकाशित हुए हैं जिनके नाम 'सम्पत्तिशाली,' 'इन चान्सरी'[4] और 'टू लेट'[5] हैं। इनके मध्य में, 'इंडियन समर ऑफ़ फॉर्साइट' और 'जागृति'[6] नामक दो एकांकी प्रहसन भी हैं। इस जिल्द की अब तक कई लाख प्रतियां बिक चुकी हैं। वास्तव में इसी जिल्द में 'मॉन फॉर्साइट चेज़' भी जुड़ना चाहिए था। इस पुस्तक की भूमिका लिखते हुए जॉन गॉल्सवर्दी कहते हैं: "बहुत मांग और आलोचनाओं के पश्चात् मैं यह जिल्द पाठकों के हाथ में दे रहा हूं।"

उनकी दूसरी प्रसिद्ध जिल्द 'ए मॉडर्न कॉमेडी' (आधुनिक सुखान्त) में भी तीन उपन्यास सम्मिलित हैं जिनके नाम 'सफ़ेद बन्दर'[7], 'चांदी का चम्मच'[8] और 'हंस-गान'[9] हैं। उनके मध्य में भी दो एकांकी प्रहसन 'मूक प्रेम'[10] और 'बटोही'[11] हैं। 'हंस-गान' के

---

१. Joscelyn
२. The Man of Property
३. The Forsyte Saga
४. In Chancery
५. To Let
६. Awakening
७. The White Monkey
८. The Silver Spoon
९. Swan Song
१०. A Silent Wooing
११. Passersby

बाद गॉल्सवर्दी ने युद्ध के पूर्व की सामाजिक अवस्था से युक्त वर्णन लिखकर फॉर्सीट के नाटक को पूरा किया था।

१६१० ई० में जब उनका 'न्याय'[1] प्रकाशित हुआ तो उनका नाम आधुनिक नाटककारों की प्रथम श्रेणी में आ गया। इंसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका में उन्हें ऐसा पहला अंग्रेज नाटककार लिखा गया है जिनका नाटकीय सम्वाद स्वाभाविकतापूर्ण है और जिनकी शैली बर्नार्ड शॉ की शैली से मिलती-जुलती है। किन्तु हम 'इंसाइक्लोपीडिया' के विद्वान सम्पादकों के इस अन्तिम कथन से सहमत नहीं हैं कि उनकी सम्वाद-प्रणाली बर्नार्ड शॉ की सम्वाद-प्रणाली से मिलती है। इंग्लैण्ड जैसे प्रोपेगेण्डा-प्रधान देश में रहकर ही जॉन गॉल्सवर्दी ने ख्याति प्राप्त की, और इसी कारण उन्हें नोबल पुरस्कार भी प्राप्त हुआ। अन्य देश के ऐसे लेखक को कदाचित् यह पुरस्कार कभी न मिलता। गॉल्सवर्दी जैसे लेखक हैं, उसका परिचय पाठक उनकी हिन्दी में अनूदित पुस्तकें[2] पढ़कर जान सकते हैं। कुछ भी हो, जॉन गाल्सवर्दी थे एक परोपकारी वृत्ति के मनुष्य और उन्होंने अपनी उदारता का परिचय अनेक बार दिया है।

उनकी रचनाओं में यह विशेषता अवश्य है कि उन्होंने नैतिक और चारित्रिक दृष्टिकोण से कभी कुछ ऐसा नहीं लिखा जिसकी एक पंक्ति भी आपत्तिजनक कही जा सके। १६२६ ई० में उन्हें 'सर' की उपाधि मिल रही थी, पर उन्होंने यह पदवी स्वीकार नहीं की। वास्तव में उन्हें पुरस्कार 'दि फार्सीट सागा' के लिए मिला है जो उनकी सर्वश्रेष्ठ और उच्चकोटि के साहित्य में स्थान पाने योग्य रचना है।

इनकी रचनाओं की सूची इस प्रकार है :

१. दि आइलैण्ड फैरिसीज (The Island Pharisees)
२. दि कंट्री हाउस (The Country House)
३. फ्रैटर्निटी (Fraternity)
४. दि पैट्रीशियन (The Patrician)
५. दि डार्क फ्लावर (The Dark Flower)
६. दि फ्री लैण्ड्स (The Free Lands)
७. बियोण्ड (Beyond)
८. फाइव टेल्स (Five Tales)
९. सेण्ट्स प्रोग्रेस (Saint's Progress)
१०. दि फोर्सीट सागा (The Forsyte Saga)
११. दि माडर्न कामेडी (The Modern Comedy)
१२. कारावान (Caravan)

---

१. Justice

२. हिन्दुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग द्वारा प्रकाशित 'हड़ताल' और 'चाँदी की डिबिया' नामक इनके दो अनुवाद छप चुके हैं।

# ईवान एलेक्ज्येविच बुनिन

रूसी लेखक ईवान एलेक्ज्येविच बुनिन को १६३३ ई० में नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया था। सोवियत रूस के एक साहित्यिक को पहले-पहल ही यह सौभाग्य प्राप्त हुआ है कि उसे स्विस एकैडमी ने पुरस्कार प्राप्त करने के योग्य समझा। यह बात निस्सन्देह कही जा सकती है कि रूस का साहित्य और उसके लेखकों की प्राच्य एवं पाश्चात्य विचार-धाराओं से युक्त भावनाएं बहुत पहले से ही संसार में बेजोड़ रही हैं, किन्तु नोबल महोदय के वसीयतनामे में 'आदर्शयुक्त' साहित्य पर पुरस्कार देने का जो उल्लेख है उसका अर्थ एकैडमी ने यही लगाया था कि जिन रचनाओं में आध्यात्मिकता और धार्मिकता का पुट न हो उन्हें आदर्शयुक्त नहीं कहा जा सकता। इसी कारण रूस की इतने दिनों तक उपेक्षा की गई। वैसे तो पुश्किन, टॉलस्टॉय, तुर्गनेव, चेखव और गोर्की के मुकाबले के लेखक संसार में उत्पन्न हुए या नहीं, यह साहित्यिकों में विवादास्पद बात है, फिर भी उनकी रचनाओं को एकैडमी ने पुरस्कार योग्य नहीं समझा और रूस की ओर ध्यान ही नहीं दिया। रूस ही क्यों, पश्चिमी यूरोप के देशों को छोड़कर अन्य देशों को यह पुरस्कार बहुत कम मिला है। अमेरिका और भारत को यह पुरस्कार एक ही बार मिला और चीन को—जिसमें आदर्शयुक्त साहित्य उत्पन्न करने की एक विशेषता है—एक बार भी नहीं। प्रारम्भ में तो पश्चिमी यूरोप के मिशनरी लेखकों का ही इस पुरस्कार पर एकाधिकार-सा रहा है। धीरे-धीरे साहित्यिक आलोचकों की आलोचनाओं के कारण इसे कुछ-कुछ असंकीर्ण बनाया जाने लगा है। फिर भी संसार में इस समय ऐसे लेखकों का समूह विद्यमान है जो पुरस्कार-प्राप्त लेखकों से आदर्शवाद, तथ्यवाद और कला की दृष्टि से कहीं आगे है।

ईवान एलेक्ज्येविच का जन्म १० अक्तूबर, सन् १८७० ई० में वोरोनेश नामक स्थान में हुआ था। उनकी रचनाओं में उनकी ख्याति का कारण है उनकी कविताएं। अपनी श्रेष्ठ कविताओं के कारण इसके पूर्व भी उन्हें रूस का 'पुश्किन पुरस्कार' प्राप्त हुआ था जो उस देश का सर्वोच्च साहित्यिक पारितोषिक माना जाता है।

बुनिन महोदय को अंग्रेजी कविताओं से बड़ा प्रेम है। उन्होंने लांगफेलो, बायरन और टेनिसन की सुन्दर रचनाओं का अनुवाद रूसी भाषा में किया है। उन्होंने कविताओं के अतिरिक्त सुन्दर यथार्थवादी उपन्यास भी लिखे हैं। उनके उपन्यासों का अंग्रेजी

अनुवाद हो चुकने के कारण वे इंग्लैण्ड में पहले ही विख्यात हो चुके थे। उनके कथा-साहित्य में 'सैनफ्रांसिस्को के सज्जन'', 'ग्राम'', 'दि वेल ऑफ डेज़'' और 'पन्द्रह आख्यायिकाएं'' अधिक प्रसिद्ध हैं। इनकी समालोचनाएं पत्रों में प्रकाशित हुई हैं जिनमें इनके गुण-दोषों का विवेचन सुन्दर रीति से किया गया है।

रूस में राज्यक्रान्ति होने के बाद से बुनिन फ्रांस में रहने लगे थे। बुनिन की कविताएं गीति-काव्य न होकर वर्णनात्मक हैं—किन्तु उनमें ओज, सामंजस्य और सादगी इतनी अधिक है कि उनकी गणना उच्चतम कोटि की कविताओं में हो सकती है। उनमें बारीक पर्यवेक्षण और अनुभूति पूर्णतः सन्निविष्ट है।

बुनिन के उपन्यासों में सीधे-सादे तौर पर रूसी चरित्र-चित्रण किया गया है। उनमें रूसी जीवन के दोनों—उत्तम और निकृष्ट—पहलू दिखलाए गए हैं। लगभग इनकी सभी रचनाएं दुःखान्त हैं। उनकी 'बसन्त का सायंकाल'' और 'चांग का स्वप्न और अन्य कहानियां' भी उल्लेखनीय आख्यायिकाएं हैं।

बुनिन की मृत्यु १९५३ ई० में हुई।

---

१. The Gentleman From San-Fransisco
२. The Village
३. The Well of Days
४. Fifteen Tales
५. An Evening in the Spring

# लुइजी पिराण्डेलो

१९३४ ई० का नोबल पुरस्कार इटली के नाटककार एवं उपन्यासकार सिनोर लुइजी पिराण्डेलो को मिला है। पिराण्डेलो का जन्म २८ जून, १८६७ ई० में सिसिली में गिरीगेण्टी के निकटवर्ती एक गांव में हुआ था। १६ वर्ष की अवस्था में वे रोम गए थे और १८९१ ई० तक वहीं रहकर पढ़ते रहे। १८९१ ई० में वे जर्मनी गए और वहां के बोन विश्वविद्यालय से तत्त्वज्ञान की डिग्री प्राप्त की। जर्मनी से वापस आकर पहले-पहल उन्होंने रोम में कन्या पाठशाला के अध्यापक के रूप में काम किया और १९२३ ई० तक वहीं कार्य करते रहे। अध्यापन-कार्य करते हुए उन्होंने कुछ साहित्यिक निबन्ध लिखे जो १८८९ ई० में 'माल जियोकोण्टो' नाम से पुस्तकाकार प्रकाशित हो गए।

उनका पहला उपन्यास 'लिसलुसा' इनके एक मित्र के आग्रह पर १८९४ ई० में प्रकाशित हुआ, किन्तु उसमें चूंकि कुछ कठोर सत्य था अतः वह बहुत प्रसिद्ध नहीं हो सका। उन्होंने संक्षिप्त कहानियों का लिखना भी आरम्भ कर दिया था, किन्तु उनको ख्याति तब तक नहीं हुई जब तक कि उन्होंने 'इल फु मटिया पास्कल' नामक उपन्यास नहीं प्रकाशित कर दिया। यह एक आदमी की असाधारण कहानी है जो अपने आदमियों पर यह प्रकट करता है कि वह मर गया है और फिर वह एक नये शहर में नये ढंग और परिवर्तित नाम से काम करना आरम्भ करता है। और उसे असफलता मिलती है।

पिराण्डेलो ने १९१२ ई० में नाटक लिखना आरम्भ किया था। नाटक लिखने में उन्हें सफलता भी शीघ्रतापूर्वक मिली। उनके नाटकों में मध्यम श्रेणी के व्यक्तियों का चित्रण विशेष रूप से है। आरम्भ में कुछ समालोचकों ने इनके नाटकों में जीवन का यथार्थ रूप चित्रित न करने का आक्षेप किया था। १९२५ ई० में रोम में पिराण्डेलो का एक अपना थियेटर हाल था।

उनकी रचनाओं में से मुख्य-मुख्य का अनुवाद अनेक भाषाओं में हो चुका है। अंग्रेजी में उनके उपन्यासों में 'शूट' (शूट!) और 'पुराना और नया'[1] नाटकों में 'तीन नाटक'[2] तथा 'तीन और नाटक'[3] अधिक प्रसिद्ध हैं।

पिराण्डेलो का देहावसान १९३७ ई० में हुआ।

---

१. The Old and the New २. Three Plays ३. Three Further Plays

# यूजीन ओ' नील

१९३५ ई० का साहित्यिक नोबेल पुरस्कार किसीको भी नहीं दिया गया। नोबेल-समिति ने इस वर्ष किसीकी रचना को इसके योग्य नहीं ठहराया और इसकी रकम सुरक्षित रख दी।

१९३६ ई० का पुरस्कार अमेरिकी नाटककार यूजीन ओ'नील को प्राप्त हुआ। यह एक विलक्षण बात है कि उनकी रचनाएं उनकी मृत्यु के चार वर्ष बाद ही रंगमंच पर चमक उठीं। उनके ऐसे तीन नाटक हैं—'रात्रि में दिन की लम्बी यात्रा'', 'मिस बिगाटन के लिए एक चांद'' और 'बर्फ का आदमी आता है'', जिसे 'शहर में नई लड़की'' का शीर्षक दिया गया।

ओ' नील के अभिनीत नाटकों की संख्या कोई चालीस के लगभग पहुंचती है; अतः उन्हें अन्य अमेरिकियों की अपेक्षा विशेष रूप से पुरस्कार मिला है। उनके नाटकों के लिए उन्हें पुलिट्जर-पुरस्कार भी मिला था। १९२० ई० में उन्हें 'क्षितिज के उस पार'' के लिए, १९२२ ई० में 'अन्ना क्रिस्टी' के लिए और १९२८ ई० में 'अनोखा विश्राम' पर पुरस्कार मिल चुके थे। १९३६ ई० में इन्हें नोबेल पुरस्कार मिला तो इनका नाम अन्य देशों में अधिक हो गया। ये पहले अमेरिकी नाटककार हैं जिन्हें यह सम्मान प्राप्त हुआ।

ओ' नील का जन्म १८८८ ई० की १६ अक्तूबर को न्यूयार्क के बैरेट हाउस में हुआ था जो उस जमाने में एक पारिवारिक होटल था। इनके पिता जेम्स ओ' नील उन दिनों के प्रसिद्ध अभिनेताओं में थे। सात वर्ष तक तो बालक ओ' नील अपने पिता के साथ उनके अभिनय के सिलसिले में स्थान-स्थान पर घूमते रहे। गर्मी में इनके माता-पिता न्यू लन्दन में रहते थे। इनकी मां का नाम एला क्विनलान था।

१९०७ ई० में ही ओ' नील की शिक्षा समाप्त हो गई और उन्हें प्रिंस्टन विश्व-विद्यालय से कोई अच्छे अंक और दर्जा भी नहीं मिला और पढ़ाई बीच में ही छोड़ देनी पड़ी। १९०९ ई० में ये सोने की खोज में अन्य अमेरिकियों की तरह दक्षिण अमेरिका के स्पेनी क्षेत्र में गए। जब ये वहां से लौटकर अन्त में न्यूयार्क आए तो ये एक मल्लाह के

---

१. Long Days Journey into Night
२. A Moon For Miss Bigotten
३. Iceman Cometh
४. New Girl in the Town
५. Beyond the Horizon

काम में भर्ती होकर साउथम्पटन गए। यह अगस्त १६११ की बात है। उसके बाद तो अपने पिता के काम 'काउण्ट ऑफ़ माण्टीक्रिस्टो'[1] के लेखन-कार्य में लग गए और थोड़ी-बहुत यात्रा की। इसके बाद वे 'न्यूलन्दन टेलीग्राफ' के संवाददाता बन गए। किन्तु कुछ ही दिनों में उनका स्वास्थ्य खराब हो गया। २४ दिसम्बर, १६१२ को वे वालिंगफोर्ड गेलार्ट फार्म सेनिटोरियम में भर्ती किए गए क्योंकि उनपर क्षय रोग का आरम्भिक और हल्का आक्रमण हो गया था।

यह वह समय था जिसे ओ' नील ने अपना पुनर्जन्म कहा है क्योंकि यहीं उन्हें विचार करने का मौका मिला और यहीं उन्होंने एकाग्रतापूर्वक नाटककार बनने का निश्चय किया। वहां से निकलकर उन्होंने नाटक लिखने का पक्का इरादा कर लिया था और उन्होंने 'मकड़ी का जाला'[2] लिखना शुरू भी कर दिया। १६१४-१५ में वे प्रोफेसर जॉर्ज पियर्स बेकर के विद्यार्थी बन गए जो हार्वर्ड विश्वविद्यालय के प्रसिद्ध आचार्य थे।

१६१६ ई० की गर्मियों में वे प्राविस्टाउन (मैसाचुसेट्स) गए जहां के अभिनेताओं ने इनका एक नाटक 'काउण्ट ईस्ट फार कारडिफ' रंगमंच पर खेला। इसकी अच्छी समालोचना और चर्चा हुई जिससे ओ' नील शीघ्र ही रंगमंच के प्रसिद्ध आचार्य गिने जाने लगे।

ओ' नील की विधवा पत्नी का नाम कारलोटा माण्टरी है जिसके साथ उनका विवाह १६२६ ई० की २२ जुलाई को हुआ था। इसके पहले उनकी जो दो शादियां हुई थीं उनसे उनके तीन बच्चे हुए थे। १६०६ में उन्होंने कैथलीन जेनकिन्स से शादी की थी जिनसे पैदा हुआ लड़का ओ' नील जूनियर ग्रीक भाषा का बड़ा पंडित बन गया था पर १६५० ई० में उसने आत्मघात कर लिया। पहली शादी की पत्नी को उन्होंने १६१२ ई० में तलाक दे दिया था और छः वर्ष बाद एजनस बोल्टन से शादी की जिससे दो बच्चे हुए जिनमें से उनकी लड़की ऊना ने चार्ली चैपलिन से शादी की और अब भी जीवित है।

---

१. यह पुस्तक 'मॉन्टीक्रिस्टो का ख़ज़ाना' नाम से हिन्दी में निकल चुकी है।
२. Web

# रोजे मार्तें दु गार

१९३७ ई० का नोबल पुरस्कार फ्रांस के साहित्यकार मार्तें दु गार को मिला।

गार का जन्म न्यूली-सर-सीन में १८८१ ई० में हुआ था और इनकी प्रारम्भिक लिखाई-पढ़ाई इकोल-दिस-चार्ट में हुई थी। विद्यार्थी-जीवन से ही इन्हें साहित्य का शौक लग गया और १९०९ ई० में इनका जुमेजी के पुरातत्त्व-सम्बन्धी अध्ययन पर ग्रन्थ प्रकाशित हो गया।

१९१३ ई० में इनका पहला सफल उपन्यास 'जीन बैरोई' प्रकाशित हुआ। फ्रांस में उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में जो नैतिक और बौद्धिक संघर्ष हुए और उनसे जनता का जो विभाजन हुआ उसपर अपने विचार लेखक ने बड़ी खूबी से व्यक्त किए। प्रथम विश्व-महायुद्ध में चार वर्ष तक सैनिक-सेवा करने के बाद इन्होंने एक लम्बा धारावाहिक उपन्यास लिखना शुरू किया जिसका नाम 'थिबोल्ट' हुआ। यह आठ भागों में प्रकाशित हुआ।

वास्तव में इस रचना ने ही गार को नोबल पुरस्कार-विजेता बनाया। उन्होंने बड़े ही चिन्तनपूर्ण और गम्भीर ढंग से फ्रांसीसी समाज का चित्रण किया है। १९४० ई० में इस ग्रन्थ का उपसंहार भी प्रकाशित हुआ।

मार्तें दु गार के अन्य उपन्यास और कहानियां इस क्रम से प्रकाशित हुईं: 'कान्फीडेन्स अफ्रिकेन' (१९३१ई०), 'वीली फ्रान्स' (१९३३ ई०), दो प्रहसन (ले टेस्टामेंट दू पीयर लेलू, १९१४, ला कान्फिल, १९२८ ई०) और एक नाटक (अनटैसीटर्न १९३२ ई०)।

# पर्ल बक

१९३८ ई० में अमेरिका की पहली महिला पर्ल सिडनस्ट्राइकर बक को नोबल पुरस्कार मिला। इनके उपन्यासों की ख्याति उस समय तक काफी हो चुकी थी। उन्होंने चीनियों के जीवन का बहुत निकट से और गहराई के साथ अध्ययन किया और उन्हें जातीय सम्बन्धों की समस्या की अद्वितीय जानकारी प्राप्त हो गई।

पर्ल का जन्म पश्चिमी वर्जीनिया के हिल्सबोरो स्थान में हुआ था। उनके माता-पिता ईसाई धर्म-प्रचारक थे। पर्ल का बचपन चिंगकिआंग में बीता जिससे उन्हें चीनी भाषा सीखने और बोलने का अच्छा अवसर मिल गया—यहां तक कि अंग्रेजी का लिखना-पढ़ना उन्होंने चीनी के बाद में ही सीखा। उनकी पहली रचना 'शंघाई मर्करी' अंग्रेजी में प्रकाशित हुई। १९१४ ई० में रैंडाल्फ मैकान कालेज से स्नातक होकर वे फिर चीन लौटीं। इसी साल उन्होंने एल० बक से विवाह कर लिया जो कृषिशास्त्र के अध्यापक थे। पांच वर्ष तक वे पति के साथ रहीं। चीन में बचपन बिताने के कारण उन्हें उसकी सजीव स्मृति बनी रही। उसीके आधार पर उन्होंने 'गुड अर्थ' या 'धरतीमाता' उपन्यास लिखा जिसे १९३१ ई० में पुलिट्ज़र-पुरस्कार प्राप्त हुआ। इस उपन्यास का अनुवाद अनेकानेक भाषाओं में हुआ। बाद में इस उपन्यास के आधार पर नाटक और चित्रपट भी बने।

पर्ल बक की सबसे प्रसिद्ध रचना उनका चीनी भाषा से 'ई हू चुयान' 'सभी मानव भाई-भाई हैं' का अनुवाद है, जो चार वर्ष के सतत् परिश्रम का परिणाम है।

यद्यपि पर्ल ने १९३५ ई० में दूसरा विवाह जे० वाल्श से किया, जो जॉन डे कम्पनी (प्रकाशक) के अध्यक्ष थे, पर वे पर्ल बक के नाम से अधिक प्रसिद्ध हुईं। नये पति के साथ वे पेंसिलवेनिया के कृषिक्षेत्र में रहीं। यहां इनके पांच दत्तक बच्चे भी इनके साथ रहे। सबसे बड़ी लड़की का मानसिक विकास रुक गया तो उन्होंने ऐसे अक्षम बच्चों की सेवा का कार्य हाथ में लिया। १९४९ ई० में उन्होंने अपने स्वागत-गृह का निर्माण कराया। यह एक ऐसी संस्था बन गई जो अमेरिका और एशियावासियों के संयोग से उत्पन्न बच्चों को गोद लेकर उनकी देखभाल की व्यवस्था में लग गई। बाद में पर्ल बक पेंसिलवेनिया में शिक्षण-कार्य में लग गई हैं और वे अमेरिका के साहित्य-कला-केन्द्र की सदस्या और हार्वर्ड विश्वविद्यालय की सदस्या बन गई हैं।

बक की रचनाओं में उनकी आत्मकथा 'मेरे अनेक संसार' (माई सेवरल वर्ल्ड्स')[1] और 'गुड अर्थ'[2] (धरतीमाता) उपन्यास—अधिक प्रसिद्ध हैं। इस उपन्यास में चीन के देहाती जीवन का जैसा सजीव वर्णन है वैसा कहीं अन्यत्र देखने में नहीं आता। स्वयं चीनी भी अपने देशवासियों का ऐसा चित्रण नहीं कर सके हैं जैसा पर्ल बक ने किया है। उनके वर्णन में चीन के आन्तरिक जीवन के विविध पहलुओं का स्पर्श पूरी सफलता के साथ किया गया है। उन्होंने अमेरिकी और चीनी जीवन की तुलना करते हुए एक जगह लिखा है : "अमेरिका का छोटा-सा घर, स्वच्छ धार्मिक वातावरण का जीवन, जिसमें वह प्यारे माता-पिता के साथ थी और चीन की विस्तृत अतिस्वच्छता से विहीन किन्तु प्रेमपूर्ण जिन्दगी"। दोनों ही में उसने बड़े सुख से जीवन के दिन काटे। कई वर्ष बाद चीन तो क्रान्ति के कारण खण्डित हो गया और पर्ल बक ने चीनी जीवन के कुत्सित और बर्बर एवं सुख-दुःख के प्रति उदासीन पहलू को भी देखा। कई बार तो पर्ल बक मौत के मुंह में जाते-जाते बचीं और घायल हो गईं। किन्तु पर्ल बक चीन तक ही सीमित न रहीं और उन्होंने रूस तथा यूरोप की भी यात्रा की। उसके बाद अमेरिका लौटकर जब वे कॉलिज में गईं तो उन्हें ऐसा लगा जैसे वे विदेश में और किसी भिन्न वातावरण में पहुंच गई हैं। वे जब चीन लौटीं तो उनकी मां मरने के करीब थीं। जापान में उन्होंने निर्वासिता की तरह जीवन व्यतीत किया। फिर अमेरिका आकर न्यूइंग्लैंण्ड में खेत खरीदे और अवांछित बच्चों की मदद में लग गईं। अन्त में नोबल पुरस्कार प्राप्त होने पर किस प्रकार उनके जीवन में एक आमूल-चूल-परिवर्तन आया, इसका वर्णन उनकी आत्मकथा में सनसनी-भरे शब्दों में किया गया है।

वे पहले १९२३-२४ ई० में 'एटलांटिक मंथली' और 'फोरम' में अपनी रचनाएं प्रकाशित कराती रहीं। फिर 'न्यूयार्क टाइम्स' और 'टाइम' में भी उनकी रचनाएं १९२२ ई० के आसपास प्रकाशित हुईं। बाद में उनकी आत्मकथा पुस्तकाकार प्रकाशित हुई।

पर्ल बक के उपन्यासों में 'गुड अर्थ' सर्वाधिक ख्यातिप्राप्त है क्योंकि उसका अनुवाद संसार की अनेकानेक भाषाओं में प्रकाशित हो चुका है और यह माना जाता है कि चीन के देहाती जीवन का चित्रण उससे अधिक सुन्दर रूप में और कहीं नहीं मिल सकता, पर उनके अन्य उपन्यास भी प्रकाशित होकर नाम पा चुके हैं। हिन्दी में उनके अन्य उपन्यासों के अनुवाद उपलब्ध नहीं हैं इसलिए अभी तो अंग्रेज़ी जाननेवाले ही उनसे लाभ उठा सकते हैं। उनके उपन्यासों की नामावली इस प्रकार है :

१. कम, माई बिलवड (मेरे प्रिय, आओ)
२. हिडेन फ्लावर (गुप्त प्रसून)
३. गॉड्स मेन (भगवान के आदमी)

---

१. 'मेरे अनेक संसार' राजपाल एण्ड संज द्वारा प्रकाशित।

२. इसका अनुवाद हिन्दी में प्रकाशित हो चुका है। इसपर अंग्रेज़ी में इसी नाम का चित्रपट भी निर्मित होकर ख्याति प्राप्त कर चुका है।

४. दि बौण्ड मेड (क्रीत दासी)
५. पैवीलियन श्राफ वोमेन (महिलाओं का चत्वर)
६. पोर्ट्रेट श्राफ ए मैरिज (एक विवाह का चित्रण)
७. दि प्राउड हार्ट (गर्वीला हृदय)
८. ईस्ट विंड : वेस्ट विंड (पूर्वी हवा-पश्चिमी हवा)
९. दि मदर (माता)
१०. किनफोक (अपने लोग)
११. फार एण्ड नियर (दूर और निकट)
१२. दि प्रामिस (प्रतिज्ञा)
१३. ड्रैगन-सीड (अजगर-बीज)
१४. टुडे ऐण्ड फार एवर (आज और सदा)
१५. अदर गॉड्स (अन्य देव)
१६. दि पैट्रियट (देशभक्त)
१७. ए हाउस डिवाइडेड (विभाजित घर)
१८. दि फर्स्ट वाइफ (पहली पत्नी)
१९. सन्स (बेटे)
२०. फाईटिंग एंजेल (युद्धरत देवदूत)
२१. एग्जाइल (निर्वासन)

# एमिल सिलांपा

१९३९ में नोवल पुरस्कार एमिल सिलांपा को मिला। वे फिनलैण्ड के एकमात्र साहित्यिक थे। उनका जन्म १८८८ ई० में हुआ था। पश्चिमी फिनलैण्ड के निवासी होने के कारण उन्होंने अपने उपन्यासों में वहीं के पात्र और पृष्ठभूमि लेकर उनका चित्रण किया है। उनके उपन्यास अधिकांशतः ग्राम-जीवन से सम्वन्ध रखते हैं और मात्र अपने ज़िले या क्षेत्र से वाहर नहीं जाते। फिर भी सीमित पृष्ठभूमि में उनकी रचनाएं ऐसी सजीव हैं कि पाठकों को वहुत आकर्पित करती हैं।

इनके पिता फिनलैण्ड के एक किसान थे। उन्होंने पश्चिमी फिनलैण्ड के कृपक-जीवन पर वहुत थोड़ी अवस्था में ही अध्ययन कर लिखना आरम्भ कर दिया था।

सिलांपा के उपन्यासों में 'विनम्र देन'[1] (१९१९), और 'वचपन से ही निद्राग्रस्त'[2] (१९३१ ई०) अधिक प्रसिद्ध हैं और इनका अनुवाद अंग्रेजी में हो चुका है, पर इनकी तीसरी प्रसिद्ध कृति 'पुरुप का ढंग'[3] (१९३२ ई०) है।

आरम्भ में सिलांपा के उपन्यासों की ख्याति उनके देश तक ही सीमित रही, पर जव उनकी ख्याति स्वदेश में वहुत हो गई तो उनका अनुवाद वाद में अनेक यूरोपीय भापाओं में हो गया। उनके सभी उपन्यासों में 'दि मैड सीलजा' अधिक प्रसिद्ध और सर्वप्रिय हुआ है। उनकी अन्य रचनाओं में 'पवित्र कष्ट', 'एक मनुष्य का मार्ग' और 'युवावस्था की निद्रा' अधिक पसन्द की गईं।

सिलांपा को पुरस्कार मिलने के वाद ही गत महायुद्ध में, रूस ने फिनलैण्ड पर आक्रमण कर दिया था और सिलांपा वड़ी कठिनाई से अपने देश की सीमा पारकर पुरस्कार प्राप्त करने के लिए स्टॉकहोम पहुंच सके थे।

कृपक जीवन पर सुन्दर उपन्यास लिखने के अतिरिक्त उन्होंने निवन्ध-रचना और कहानियां लिखने में भी कुशलता दिखाई।

---

१. Meek Heritage

२. Fallen Asleep While Young

३. Man's Way

# जोहान्स जेन्सेन

द्वितीय विश्वव्यापी महायुद्ध के दिनों में—१९४० ई० से १९४३ ई० तक किसीको भी साहित्यिक पुरस्कार नहीं दिया गया और इन वर्षों की रकमें मूल कोषों में जमा कर दी गईं।

१९४४ ई० का नोबल पुरस्कार डेन्मार्क के प्रसिद्ध साहित्यकार जोहान्स विल्हेम जेन्सेन को प्राप्त हुआ। इनकी विशेष ख्याति इसलिए है कि उन्होंने अपनी भाषा में नये मुहावरों का समावेश किया।

जेन्सेन का जन्म उत्तरी जटलैण्ड के हिम्मरफैण्ड शहर में हुआ। इनके पिता पशु-चिकित्सक थे। इन्होंने वहां के केथेड्रल स्कूल से मैट्रिक पास किया और फिर डॉक्टरी की पढ़ाई के लिए कोपेनहेगन गए। परिवार बड़ा होने के कारण इन्हें अपनी पढ़ाई का खर्च खुद कमाना पड़ा। १८९३ ई० में इन्होंने डॉक्टरी पढ़ना शुरू किया और १८९५ ई० से ही कहानियां लिखने लगे जिससे इन्हें वहां के ४५ सिक्के मासिक की आमदनी हो गई और इनकी कथामाला चल पड़ी। १८९७ ई० में उन्होंने डाक्टरी की पढ़ाई छोड़कर अपने-आपको पत्रकारिता और साहित्य-सेवा में लगा दिया। क्योंकि १८९३ ई० में ही इनकी पहली पुस्तक 'डैन्सकेयर' की अच्छी बिक्री हुई और उससे जो धन मिला उसे खर्च कर वे अमेरिका चले गए जिसका उनपर अच्छा प्रभाव पड़ा। १८९८ ई० में स्पेन-अमेरिका युद्ध में वे युद्ध-संवाददाता के रूप में स्पेन भेज दिए गए। उसके बाद वे एक डेनिश पत्र के विशेष संवाददाता के रूप में पेरिस की विश्व-प्रदर्शनी में भेजे गए जहां के नये वातावरण ने उनपर बड़ा प्रभाव डाला।

उनकी औपन्यासिक कृतियों में सबसे पहले 'कोंगेन्स फाल्ड' था जिसका अंग्रेजी अनुवाद १९३३ ई० में प्रकाशित हुआ। यह डेनिश भाषा का सर्वप्रथम प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास बन गया। इसमें पुराना कृषक-जीवन और उनके विरोधी दृष्टिकोण का सुन्दर चित्रण है। इसमें सम्राट क्रिश्चियन द्वितीय के शासन-काल का सुन्दर वर्णन है जो अन्त में अनिश्चितता और सन्देह का शिकार हो जाता है। सम्राट की यह बीमारी न केवल उसीके पतन का कारण बनती है बल्कि डेन्मार्क के जागीरदार द्वारा सेवा में जोते गए जर्मन भाड़े के टट्टुओं द्वारा डेन्मार्क पराजय का मुंह देखता है और उसमें पराजय की भावना छा जाती है। जो किसान अपनी सादगी और विश्वास के कारण सम्राट के पक्ष

में विद्रोह करते हैं उन्हें भी मुंह की खानी पड़ती है।

जेन्सेन ने आगे चलकर अपने उपन्यास में बताया है कि किसान को पराजयवाद से मुक्ति पाने के लिए प्रकृति से निकट सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए क्योंकि केवल इसी प्रकार उसे मुक्ति मिल सकती है। उनकी हिम्मरलैण्ड की कहानियों में भी वहां के निवासियों को पराजयवाद की भावना से मुक्ति दिलाने का प्रयत्न किया गया है।

जेन्सेन की रचनाओं में केवल स्थानीय रंग ही नहीं भरा गया है बल्कि साहस, महोद्यम भी भरा हुआ है जिससे प्रतीत होता है कि उनके मन में ये प्रवृत्तियां पर्याप्त रूप से क्रियाशील थीं। उनकी अमेरिका और मिस्र की यात्राओं ने उनके जीवन और रचनाओं पर काफी प्रभाव डाला है और उन्होंने इन यात्राओं के फलस्वरूप केवल पुरानी कहानियां ही नहीं लिखीं, बल्कि लेख, कहानियां, यात्रा-विवरण आदि भी लिखकर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कराए।

इनकी रचनाओं के बारे में 'दि अमेरिकन स्कैंडिनेवियन रिव्यू' में कहा गया है: "इनके उपन्यास पुराने युग के हैं, पर वे अपने युग के समाज के दर्पण-से हैं। इसमें कथानक की ओर उतना ध्यान देने की आवश्यकता नहीं पड़ती जितना सामयिक चित्रण की ओर।" किन्तु जेन्सेन नवयुग के चमत्कार की ओर इशारा करने से भी नहीं चूके हैं। उन्होंने 'गायिक पुनर्जन्म' और 'डेम वर्डेज' में इसका अच्छा परिचय दिया है।

'जुलेट' और 'मैडम डिओरा' में भी इसी प्रकार के चरित्र-चित्रण मिलेंगे।

जेन्सेन ने अपनी आत्मकथा के रूप में अपनी अमेरिका (यात्रा) की कहानी भी लिखी है। जब जेन्सेन ७६ वर्ष के हो गए थे तो उन्होंने 'अफ्रीका' भी प्रकाशित कराया था। यह केवल यात्रा-वर्णन नहीं, बल्कि उनकी पत्रकारिता और सांस्कृतिक ज्ञान का परिचायक है।

जेन्सेन ने अमेरिका में अपने काफी मित्र और प्रशंसक बनाए। उनके स्वदेशवासी अमेरिकावासी तो उनके पक्के भक्त बन गए। उन्होंने यह चित्रण भी किया कि उनके स्वदेशवासी विदेश जाकर और विभिन्न संस्कृतियों के सम्पर्क में आकर किस प्रकार 'आधुनिक' बन गए हैं। उनकी 'लम्बी यात्रा' में नृवंश-विज्ञान का अच्छा वर्णन है। उसका ऐतिहासिक क्रम भले ही उतना वैज्ञानिक न हो, पर उनकी अभिव्यक्ति बड़ी ही शक्तिशाली है।

इनके यात्रा-वर्णन के बारे में आलोचकों का कहना है कि उनपर डार्विन का ही नहीं, डेनियल डिफो के 'राबिन्सन क्रूसो' और किप्लिंग के 'जंगल-बुक' का भी प्रभाव पड़ा है। इनका 'माइथ' ('मनगढ़न्त') उपन्यास इस प्रकार के विचारों का केन्द्र है।

जेन्सेन का प्रभाव डेनिश भाषा पर विशेष रूप में पड़ा क्योंकि उन्होंने कुल मिलाकर ७० पुस्तकें लिखीं और उनके लेखों की तो कोई संख्या ही नहीं आंकी जा सकती। उनके अनेक विचार ऐसे हैं जिनके बारे में मतभेद की गुंजाइश है, परन्तु उनकी शक्तिशाली अभिव्यक्ति से कोई इन्कार नहीं कर सकता। उनकी अधिकांश रचनाओं में

डारविन के विकासवाद के सिद्धान्त का समर्थन है। इस सिद्धान्त का वर्णन उन्होंने विश्व के सौन्दर्य के साथ, जिसमें स्त्री का सौन्दर्य भी सम्मिलित और सन्निहित है, किया है। धरती से उनका अगाध प्रेम उनकी रचनाओं द्वारा अभिव्यक्त होता है—प्रेम की मृदुल शक्ति और सूक्ष्मतर जीवन-सौन्दर्य का वर्णन उन्होंने जीवन के प्रति श्रद्धा और गहरे आदर्श के साथ किया है। श्रमजीवियों की प्रशंसा की झलक उनकी रचनाओं के कथानकों में प्राय: देखने में आती है।

# गेवरीला मिस्त्राल

१९४५ ई० का पुरस्कार चिली की गैवरीला मिस्त्राल को मिला। इनका वास्तविक नाम लुसीला गोडाय है। इनका जन्म विकुना (चाइल) में १८८९ ई० में हुआ और देहान्त १९५७ ई० में। इनके गीति-काव्य लैटिन अमेरिका में आदर्श प्रेरणा भरते रहे हैं और उनके पाठक और कद्रदान वहां अब भी बहुत बड़ी संख्या में मौजूद हैं।

मिस्त्राल के गीति-काव्यों में सशक्त भावनाएं भरी हैं। दक्षिण अमेरिका की यह पहली ही साहित्यकार थीं, जिन्हें नोबल पुरस्कार प्राप्त करने का सम्मान मिला। इनको जिस रचना पर पुरस्कार प्राप्त हुआ, उसका नाम है—'मृत्यु-गीत'। यह रचना १९१४ ई० में ही प्रकाशित होकर नाम पा चुकी थी। 'डोलोक' उनकी दूसरी रचना है जो १९२२ ई० में निकली। यह भी एक दुःखान्तपूर्ण काव्य-रचना थी। उनकी 'टर नूरा' (१९२४ ई०) और 'ताला' में मानव-हित की विशालता का दिग्दर्शन कराया गया है। बच्चों और दलितों के प्रति मिस्त्राल की रचनाओं में गहरी सहानुभूति पाई जाती है। उनकी गद्यात्मक रचनाओं की भाषा पर उनकी अपनी गहरी छाप है और उनमें प्रबल संवेदनशीलता देखी जाती है। बच्चों के लिए इन्होंने जो कुछ लिखा है उससे मातृत्व का वात्सल्य टपकता है। उनकी कविताओं के अनुवाद अंग्रेज़ी, फ्रेंच इटालियन, जर्मन और स्वीडिश भाषाओं में हुए हैं। उनकी कविता सरल, प्रसादगुण पूर्ण और साथ ही भावनाओं से ओत-प्रोत है, पर इनका गद्य भी कुछ कम नहीं है उनकी चुनी हुई रचनाओं का चिलियन संस्करण सात जिल्दों में १९५४ ई० में प्रकाशित हुआ था। उसके बाद १९५७ ई० में हैम्पस्टीड (न्यूयार्क) में इनका देहान्त हो गया।

# हरमन हेस

१६४६ ई० का नोबल पुरस्कार स्विट्जरलैण्ड के प्रसिद्ध साहित्यकार हरमन हेस को मिला। हेस का जन्म २ जुलाई, १८७७ ई० में जर्मनी में हुआ और इनकी रचनाओं में मानवीय आदर्शों की गुणात्मक शैली का सुन्दर समावेश है। हेस एक कवि के रूप में भी प्रसिद्ध हैं।

हेस ने कितने ही उपन्यास लिखे हैं। इन्होंने भारत की यात्रा की और उसका वर्णन भी लिखा है। १६४२ ई० में उनकी कविताओं का संग्रह प्रकाशित हुआ है।

हरमन हेस के उपन्यासों और गेय गीतों में उनके निजी जीवन की काफी झलक है। उन्होंने जीवन में जो संघर्ष किए थे और उन्हें जिस तरह आत्मिक चिन्तन करना पड़ा था उसका वर्णन उनकी रचनाओं—'पीटर कामेनजिद (१६०४ ई०) और 'अण्टर्म रैंट' (१६०५ ई०) में प्रकाशित हो चुका है। इनकी रचनाओं पर शॉपिन ह्वार और नीत्शे का प्रभाव पड़ा है। यही नहीं, अध्यात्मिक उपदेष्टा सेण्ट फ्रांसिस असीसी और गौतम बुद्ध का भी इनपर स्पष्ट प्रभाव पड़ा है। चीन के प्राचीन तत्त्वज्ञान से भी इन्होंने बहुत कुछ प्रेरणा प्राप्त की है। इनकी रचनाओं में गहरी तात्त्विक मीमांसा और परिणामगत संसार के प्रति निराशा के भाव भरे हैं।

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद हरमन हेस के विचार काफी बदले हैं जिनकी कहीं-कहीं इनके उपन्यासों में चमत्कारपूर्ण अभिव्यक्ति है। उनकी रचनाओं में अधिक द्रष्टव्य हैं—'डिमीन' (१६१६ ई०), 'पिलगसोर लेटज टर समर' (कहानी-संग्रह, १६२० ई०), 'सिद्धार्थ' (१६२२ ई०), 'डेर स्टेपेन वुल्फ' (१६२७ ई०), 'नार्जिश उण्ट गोल्डमण्ड' (१६३० ई०), 'निउ जेडिस्टे' (१६३७ ई०) और 'डेस ग्लासपरलेंसमील' (१६४३ ई०)।

हेस स्विट्जरलैण्ड में रहने लगे थे और १६४६ ई० में जब उन्हें नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ तो वे वहीं थे।

# आन्द्रे जीद

१९४७ ई० का नोबल पुरस्कार आन्द्रे जीद को मिला। आन्द्रे जीद एक ऐसे फ्रांसीसी लेखक हैं जिन्हें फ्रांस के बाहर लोग अच्छी तरह जानते हैं। किन्तु सच यह है कि फ्रांस में नोबल पुरस्कार मिलने तक उनका विशेष सम्मान नहीं हुआ। इसका कारण सम्भवतः यह था कि फ्रांसीसी लोग आन्द्रे जैसे नैतिक दृष्टिकोणवाले घोर उपन्यास के द्वारा कोई न कोई सन्देश देने का प्रयत्न करनेवाले को विशेष महत्त्व नहीं देते।

आन्द्रे जीद का जन्म २२ नवम्बर, १८६९ में हुआ था। इनके पिता पॉल जीद पेरिस विश्वविद्यालय में कानून के अध्यापक थे। वे बड़े धार्मिक थे और अपनी उस वृत्ति को ही उन्नति का कारण मानते थे।

आन्द्रे जीद का विद्यार्थी-जीवन कोई बहुत अच्छा नहीं रहा। स्कूल के दिनों में उन्हें संगीत का बड़ा शौक हो गया। उन्हें स्नायविक बीमारी भी हो गई। वे परीक्षा में भी असफल रहे। अन्त में किसी प्रकार स्कूल के दिन तो पूरे कर लिए, पर कॉलेज में पढ़ने की नौबत न आई।

आगे पढ़ाई न कर सकने के कारण उनके सामने यह प्रश्न था कि आखिर वे करें तो क्या करें। संगीत को पेशा बनाना उनके वश का नहीं था। इससे वे लेखक बनने के लिए कृत-संकल्प हो गए। १८९१ ई० में उन्होंने अपनी पहली पुस्तक अपने ही खर्च पर छपाई, किन्तु वह इतनी अशुद्ध छपी कि रद्दी कागज के भाव पर बिकी। पुस्तक छपी उप-नाम से थी इसलिए उसमें उनकी प्रतिष्ठा बनने या बिगड़ने का कोई प्रश्न नहीं था।

किन्तु इससे जीद ने साहस नहीं छोड़ा। १८९१ ई० में एक दूसरी पुस्तक 'ट्रैट दु नारसिस' प्रकाशित की। इस पुस्तक की भी कोई ख्याति न हुई और १८९३ ई० में इनकी 'वायज यूरियन' (काल्पनिक लोक की माला) प्रकाशित हुई और उसी वर्ष 'ले तेंतिव एमोर्स'।

इसी दौरान जीद ने उत्तर अफ्रीका की यात्रा की। उनके साथ उनका मित्र पाल एलबर्ट लारेन्स भी था जो चित्रकला का एक विद्यार्थी था। इस यात्रा में उन्होंने अपने नित्य के बाइबिल-पाठ का क्रम छोड़ दिया। जीद में कुछ बुरी आदतें थीं। जीद वहां बीमार पड़ गए और उनकी बीमारी का हाल उनके दोस्त ने उनके मां-बाप को लिख भेजा। जीद की मां से न रहा गया और वे अपने बेटे को सम्भालने के लिए बिस्का

के लिए रवाना हो गईं। जीद का स्वास्थ्य कुछ सुधर जाने पर उनकी मां फ्रान्स लौट आईं और दोनों दोस्त सिसली, रोम, फ्लोरेन्स तथा इटली के अन्य शहरों की सैर के लिए चले गए।

इटली से लौटकर पेरिस आने के बाद जीद ने 'पालुदिस' नामक उपन्यास लिखा।

१८९४ ई० में जीद फिर अफ्रीका गए। इस बार वे अकेले थे। वहां वे उसी होटल में ठहरे जिसमें उनके पूर्वपरिचित ऑस्कर वाइल्ड और लार्ड अलफ्रेड डगलस ठहरे थे। उन्होंने बिस्क्रा में उपन्यास लिखना आरम्भ कर दिया, पर १८९५ ई० में उनकी मां ने उन्हें वापस बुला लिया। इसके बाद उनकी मां का देहान्त हो गया। इसका जीद पर बड़ा असर पड़ा और वे अपने अफ्रीका में किए गए कुकृत्यों पर पछताए। इसके पश्चात् उन्होंने 'साउल' नामक नाटक लिखा जिसमें उन्होंने आत्मपतन का अच्छा दिग्दर्शन किया। इसके बाद जीद ने अपनी चचेरी बहन से शादी कर ली; यद्यपि उनके सभी सम्बन्धी इसके विरुद्ध थे।

जीद अपनी पत्नी को साथ ले छः महीने की लम्बी यात्रा पर गए और स्विट्जरलैंड, इटली और उत्तर अफ्रीका हो आए। रोम में जीद को फोटोग्राफी का शौक जरूर हुआ।

१८९६ ई० में फ्रान्स लौटने के बाद जीद ला रोक-बैंगनार्द के नगराध्यक्ष चुन लिए गए। उस समय उनकी अवस्था केवल २६ वर्ष की थी। १९१४ ई० में उन्होंने 'सुवेनीर-द-ला-कोर-द-असिसेज' नामक पुस्तक लिखी, जो उनके अपने अनुभव पर आधारित थी। १९२७ ई० में उन्होंने 'वायस ऑफ़ कांगो' और 'रिटूर टु चाद' दो यात्रा पुस्तकें लिखीं जिनमें उन्होंने फ्रांसीसी उपनिवेशवाद की निन्दा की और इन देशों के मूलनिवासियों के प्रति उनके दुर्व्यहार की तीव्र आलोचना की। इस राजनीतिक करवट ने उनकी प्रतिष्ठा बढ़ा दी और उनका बाहरी जीवन सुखी प्रतीत होने लगा।

१८९७ ई० में इनका 'ले नाउरिटर्स टेरेस्ट्रीज' प्रकाशित हुआ, पर उसकी केवल ५०० प्रतियां बिकीं। इसके बाद छोटी-बड़ी कुछ और कृतियां प्रकाशित हुईं, पर १९०२ ई० में 'ले इम्मार लिस्ट' के प्रकाशित होने तक इनको ख्याति नहीं मिली। 'ला पोर्टी दट्रां इट' इनकी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक थी जो १९१९ में प्रकाशित हुई—इनकी 'सिम्फोनी पैस्टरेल' को भी अच्छी ख्याति मिली।

अपने यात्रा-केन्द्र 'उन एंट्री ई फुदट' पर भी इन्होंने पुस्तक लिखी। १९१४ ई० में उनकी 'ये केव्स द वैटिकन' धारावाहिक रूप में 'नावेल रिव्यू फ्रान्सेज' में प्रकाशित हुई।

१९१४ ई० में प्रथम महायुद्ध छिड़ जाने पर जीद सेना में भर्ती होने के योग्य न होने के कारण स्वेल्जियम के शरणार्थियों की सहायता का काम करने लगे। १९१६ ई० में वे लौट आए।

जीद की अन्य रचनाओं में 'कारीदन' उल्लेखनीय है, यद्यपि इसमें लेखक ने

प्रकारान्तर से अपनी विपरीत यौन-सम्बन्ध की आदत की सफाई दी है। इसको लेखक महोदय अपनी सर्वश्रेष्ठ रचना कहते थे; यद्यपि आलोचकों ने उनपर बहुत-सी फबतियां कसीं। उनकी आत्मकथा जिसका फ्रेंच नाम 'सी-ले-ग्रेन-ने-मुर्त' है, उनकी महत्वपूर्ण रचनाओं में है। उससे उनकी मनोवृत्ति का खाका सामने आ जाता है। उन्होंने अपनी अफ्रीका में किए गए दुष्कृत्यों का वर्णन बहुत स्पष्ट रूप में और प्रशंसात्मक ढंग से किया है। यह १९२६ ई० में प्रकाशित हुई। उनका 'ले फाउन-मोनागुर' १८९२ ई० में प्रकाशित हुआ जिसे आन्द्रे जीद 'मेरा पहला उपन्यास' कहा करते थे। इसके बाद ही उनकी रचनाएं अधिक नहीं पढ़ी गईं। 'स्टकोले-दि-फ़ान्स' 'रॉबर्ट' और 'जेनेवीव' उनकी ऐसी रचनाएं हैं जो अपनी पत्नी पर, अपने-आपपर और अपनी गुप्त पुत्री पर (जो नाजायज सम्बन्ध से रूस में पैदा हुई थी) लिखी। बाद में आन्द्रे जीद कम्युनिस्ट हो गए और रूस की भी सैर कर आए। दूसरे महायुद्ध के दरम्यान वे फ्रान्स में ही रहे, केवल कुछ दिनों के लिए उत्तरी अफ्रीका गए जहां से उन्होंने 'लआर्क' के प्रकाशन में सहयोग दिया। 'फार्नल' को पूरा करने के लिए वे बराबर लिखते रहे। उनकी 'थामस' १९४६ में पहले संयुक्त राष्ट्र अमेरिका से फ्रेंच में निकली। लड़ाई बन्द होने के बाद इन्हें नोबल पुरस्कार मिला। उसके बाद तो इन्हें आक्सफोर्ड से साहित्य-डॉक्टर की उपाधि भी मिली।

इनकी मृत्यु पेरिस में १९ फरवरी, १९५ ई० में हुई। जीद की रचनाओं में 'ले रिटूर-डि-लेन फेण्ट प्रोडीग' बहुत पढ़ी जाती है। यह १९०७ ई० में प्रकाशित हुई थी। इसमें उन्होंने एक उड़ाऊ भूत की कहानी अपने विशिष्ट ढंग से लिखी है। सब कुछ गंवाकर भी उसको कोई पश्चात्ताप नहीं होता, परन्तु निराशा और विरोध के रूप में आकर वह समझता है कि वह सफलता के निकट पहुंचकर उससे वंचित करके कष्ट में ढकेला गया है। वह अपने छोटे भाई को भी अपने रास्ते पर लगाता है और उसके सफल होने पर उसकी सहायता प्राप्त करने की आशा में जीता है।

'ले इम्मारलिस्ट', 'ला सिम्फानी पैस्टोरेल', 'ला पोर्टइट्रू इट्रांइट' और 'एट नक पैनेट इन दे' आदि रचनाएं उनके प्रेम और घर-संसार की विफलताओं की प्रतीक हैं।

'फाउक्स-मोन्याउर्स' उनकी एक विस्तृत रचना है। उसकी कहानी एक उपन्यासकार के जीवन से सम्बन्ध रखती है जो अपने चरित्र-चित्रण को वास्तविक जगत् का प्रतीक समझता है। यह कथा भी आन्द्रे जीद के व्यक्तिगत जीवन को ही चित्रित करती है।

जीद की अन्य रचनाएं अनेक होने पर भी ऐसी नहीं है जिन्हें प्रथम श्रेणी के उपन्यासों में रखा जा सके। इसलिए यहां उनका संक्षिप्त उल्लेख कर देना ही पर्याप्त होगा।

'ले केन्स-डु-विटिकन' को हास्यरस का उपन्यास माना जाता है। 'इसाबेले' में रोमांस-मात्र है। 'लोल-डिस-फीम्स-रावर्ट-जेनेवीव' भी उनकी सामान्य रचनाओं में हैं।

परिपक्व अवस्था में उन्होंने जो कुछ लिखा है, उसमें से 'थामस' का सबसे अधिक

स्वागत हुआ है। इसके कारण ही उनकी गणना फ्रेंच साहित्य के उत्कृष्ट साहित्यिकों में हो गई। इस रचना में सौन्दर्य का ही परिदर्शन नहीं होता, बल्कि एक ऐसे अनुभव का परिचय मिलता है जो आज भी ज्वलन्त सत्य पर आधारित प्रतीत होता है।

जीद ने अपनी रचनाओं में अपने चारित्रिक-व्यवहार का औचित्य यह निमित और प्रदर्शित करके किया है कि जो 'असामान्य' है वही 'स्वाभाविक' है। इस सफाई का कारण यह भी है कि कहीं-कहीं जीद की रचनाएं अपने विशिष्ट विषय के कारण ऐसी अरुचिकर हो उठती हैं कि पाठक उसे 'अपठनीय' कहकर छोड़ देता है।

उनकी 'सीले ग्रेन ने म्यूर्त' उनकी एक विलक्षण आत्मकथा है और उनकी डायरी के पृष्ठ उन्हें समझने के लिए अवश्य पढ़े जाने चाहिए।

# टॉमस इलियट

१९४८ ई० में नोवल पुरस्कार प्राप्त करने के बहुत पहले ही इलियट सारे अमेरिका में एक अच्छे और नई पीढ़ी के कवि के रूप में विख्यात हो चुके थे। १९२१ ई० में उन्होंने 'दि वेस्टलैंड' (वीरान) के नाम से एक ऐसी कविता लिखी जिसकी आलोचना और चर्चा व्यापक रूप में हुई। सबसे पहले जब यह कविता प्रकाशित हुई तो न्यूयार्क के 'हेराल्ड ट्रिब्यून' ने उसकी कटु आलोचना करते हुए उसे 'नये युग की प्रवंचना' कहा। उसके पहले इलियट का कोई विशेष नाम नहीं हो पाया था। क्लाइव बेल नामक प्रसिद्ध अमेरिकन आलोचक ने इलियट को 'बहुत चालाक लेखक' कहकर प्रकारान्तर से उनकी रचनाओं का उपहास किया था।

टॉमस स्टेन्स इलियट अंग्रेजी के उन साहित्य-स्रष्टाओं में से हैं जिन्होंने काव्य की रुचि उत्पन्न करने में युग-प्रवर्त्तक का काम किया है। उन्होंने ऐसी कविताएं लिखी हैं जो संगीत के ही समान सीधे हृदय को वेध देती हैं।

इलियट के पूर्वजों में एक का नाम एण्ड्रयू इलियट था जो सत्रहवीं शताब्दी में अमेरिका के समरसेट प्रदेश से मैसाचुसेट्स आ बसे थे। वे व्यापारी थे, पर बड़ी ही धार्मिक प्रवृत्ति के थे जिससे वे पादरी के रूप में प्रसिद्ध हो गए। १८३४ ई० में इलियट के पितामह मिसूरी प्रदेश के सेण्टलुई स्थान में जा बसे जहां उन्होंने पहला यूनिटेरियल गिरजाघर स्थापित किया। ये व्यापारी होते हुए भी धर्म और शिक्षा के प्रति ऐसा अनुराग रखते थे कि आगे चलकर वाशिंगटन विश्वविद्यालय के संस्थापक बन गए और उसके कुलपति के पद पर आसीन रहे। १८६८ में उन्होंने बोस्टन चार्लोट स्टर्न्स नाम की लड़की से विवाह किया। इलियट अपने परिवार की अन्तिम और सातवीं सन्तान थे। उनका जन्म २६ सितम्बर, १८८८ ई० में सेण्टलुई में हुआ और वे सत्रह वर्ष तक वहीं रहे। वहां वे नदी के तट पर घूमते और उसके सुन्दर दृश्य से अनुप्राणित होते थे। उनकी कविताओं पर विशाल नदी का सुन्दर प्रभाव देखा जाता है। प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन उनकी रचनाओं में स्थान-स्थान पर मिलता है।

स्कूल की पढ़ाई समाप्त कर उन्होंने कॉलेज जाने की तैयारी की और दूसरे ही वर्ष हार्वर्ड चले गए, जहां से १९०९ ई० में इन्होंने कॉलेज की पढ़ाई समाप्त कर उपाधि प्राप्त कर ली। इसके पश्चात् वे अध्यापन-कार्य करने लगे और समाज में

'लजीली प्रकृति के युवक' प्रसिद्ध हो गए। इसके शीघ्र ही बाद ये ग्रावसफोर्ड गए और इंग्लैंड हाँ में बस गए। १९१५ में इन्होंने वीनियन हे नामक लड़की से विवाह किया और इसके बाद स्कूल में अध्यापन-कार्य करने के कुछ ही समय पश्चात् लन्दन के एक बैंक में काम करने लगे। परन्तु कुछ भी हो, उनकी साहित्यिक प्रतिभा कहीं छिपने-वाली नहीं थी, इसलिए १९२३ ई० में वे 'दि क्राइटेरियन' पत्र के सम्पादक हो गए। १९२७ ई० में वे ब्रिटिश प्रजा बन गए। फिर तो वे लन्दन के साहित्य-क्षेत्र में प्रविष्ट हो गए। इस प्रकार एक अमेरिकन युवक लन्दन के भिन्न वातावरण में अपने को खपाने की पूरी क्षमता दिखा सका और उसकी साहित्यिक प्रतिभा चमक उठी।

उनकी रचनाएं तो अनेक और विभिन्न विषयों की हैं, पर कुछ ऐसी हैं जिनसे उनके गुणों का और साथ ही प्रगतिशीलता का पता चल जाता है। अपनी सांस्कृतिक परम्परा को न भूलते हुए भी वे जहां और जिस समाज में गए वहीं उसका पर्यवेक्षण उन्होंने सुन्दर रीति से किया। अपना अमेरिकीपन न छोड़ते हुए भी वे दूसरे और विलग समाज में घुल-मिल जाने की क्षमता रखते थे। 'कज़िन नैन्सी' इसका एक नमूना है। उनके विश्वास-रक्षक 'मैथ्यू और वाल्डो' रचना भी ऐसी ही है। वास्तव में इलियट एक ऐसे रहस्यपूर्ण अमेरिकन हैं जो इंग्लैंड में बसकर अन्ततः अंग्रेज-से हो गए हैं और कैथो-लिक अर्थात् पुराने ढर्रे के आंग्ल-ईसाई भी। फिर भी इंग्लैंड में ये एक ऐसे विदेशी की भांति रहते हैं जो अंग्रेजी भाषा लगभग पूर्णतः शुद्ध बोलता है। उनकी रचनाओं से उनके बुद्धि-वैभव का पता लगता है। उनकी प्रकृति-सम्बन्धी एक रचना की एक बानगी देखिए :

> प्रकाश कैसे फैलता है—
> खुले मैदान में—गलियों को छोड़कर
> (वृक्ष की) शाखाओं से छनकर—
> अपराह्न की अंधियारी घिरी छाया में—
> उष्ण धुंधले (वातावरण) में—
> प्रकाश की किरणें पूरे पत्थर से टकराकर
> इस वातावरण में लीन हो जाती हैं।

कवि इलियट की रचनाएं पहले हार्वर्ड की 'ऐडवोकेट' पत्रिका में प्रकाशित हुई थीं। उन्होंने अपने एक लेख में लिखा है : "कविता का विषय व्यक्तित्व का प्रकाशन नहीं, उसका गोपन या उससे मुक्ति होना चाहिए—कविता चित्त के अन्तर्वेग का, उसकी भावनाओं का संगोपनपूर्ण मोड़ नहीं, उसकी मुक्ति है। व्यक्तित्व और चिन्तन के अन्तर्वेग या भावना को पूर्ण व्यक्ति ही जान सकता है। ऐसा मनुष्य ही जान सकता है कि इनसे मुक्ति का—बचने का अर्थ क्या है। बात यह है कि भावनाओं में विद्रोह नहीं आना चाहिए—उनपर नियंत्रण होना चाहिए।

१९३१ ई० में केवल चालीस वर्ष की अवस्था में इलियट की 'दि वेस्ट लैंड'

कविता प्रकाशित होने पर आलोचक एडमंड विलसन ने 'ऐश वेन्सडे' पत्रिका में लिखा कि केवल चालीस वर्ष की अवस्था में कठोर कार्य के समान यह रचना नहीं करनी चाहिए थी, पर इलियट ने इसमें गर्व का अनुभव किया और लिखा कि "चालीस वर्ष का बच्चा बड़े व्यक्तियों के समान परिपक्व और परिपूर्ण रचना कर दिखाए, यह तो गौरव की बात है।"

इलियट स्वयं अपने बारे में एक कविता में लिखते हैं :

इलियट से मिलना कैसा असुखकर है !
उसका पादरी का सा चेहरा,
उसकी तनी भौहें—
उसका कपट-विनययुक्त मुंह
उसकी सुन्दर सुनियंत्रित बातें—
'अगर' 'मगर' और 'शायद' से भरे—ऐसे इलियट से मिलना—
कैसा असुखकर है—
फिर चाहे उसका मुंह खुला हो या बन्द।

उनकी एक और कविता का नमूना लीजिए :

रिमझिम वर्षा होती है—
चिमनी की टूटी नाली पर।
और सड़क के उस कोने पर—
बेचारा एकाकी मानव—
घोड़ा-गाड़ी लिए खड़ा है—
और अश्व अपनी टापों से
उसी सड़क को पीट रहा है।
(फिर क्षण-भर में) दीप प्रकाशित हो उठता है।

उनकी फुटकर कविताओं में निम्नलिखित रचना अधिक सजीव है

चाह नहीं है स्वर्गलोक की—
क्योंकि वहां सर फिलिप मिलेंगे,
और कारिआकानस जैसे
वीर नरों से बातें होंगी—

आगे चलकर वे फिर कहते हैं :

नहीं जानता खुदा कौन है,
किन्तु हमारी यह श्रद्धा है—
पूरी नदी हमारी जो है
वह जनार्दन का स्वरूप है।

'खोखला आदमी' शीर्षक कविता में वे कहते हैं :

है दुनिया का अन्त यही तो—
शोर नहीं; दिल थाम सिसकना।

'ऐश वेन्सडे' की एक कविता है :

नहीं जानते; नहीं समझते
अभिनय भी तो दुःख है;
कष्ट झेलना दुःख उठाना
यह भी तो अभिनय है।
अभिनेता को कष्ट न होवे—
रोगी यदि न दुःख से रोवे;
किन्तु सदा ये दोनों रहते
अभिनय औ तरंग में डूबे।

'गिरजाघर में खून' (मर्डर इन ए कैथेड्रल) में उन्होंने कहा है :

सहसा समृद्धिवान जो बनता,
चढ़ता उच्च शिखर पर—
उसका दर्प चूर्ण हो जाता,
जब संकट आ जाता।
एक व्यक्ति कुलपति बन जाता—
पाता नरपति से सम्मान ;
उसका गुण ही उसे बनाता—
वही उसे निष्पक्ष बनाता—
दर्प दयालु उसे कर देता—
यदि वह है सच्चा प्रभुभक्त !

प्रकृति-वर्णन में तो कवि ने कमाल कर दिखाया है। मध्यशीत ऋतु का वर्णन करते हुए वह कहता है :

मध्यशीत-ऋतु सदा अनोखी—
सूर्य ढले तक गीली धरती
छोटे दिन, कुहरे से पूरित
सूर्यदेव मध्यम प्रकाश से
हिम-सरोवरों और खाइयों
को देते हैं क्षीण प्रकाशन—
देता शीतभरे हृदयों को—
क्वचित् उष्णिमा और स्पन्दन—
यही वर्ष की धुंधली ऋतु है।

भूमि गन्ध से हीन हो गई
सभी चराचर जीव सिकुड़कर
जैसे उसमें समा गए हैं
सब कुछ जमकर ठोस बन गया।
× × ×
किन्तु वसन्त निकट आ पहुंचा—
वर्फ गली—सूरज फिर चमका और झाड़ियों ने ली अंगड़ाई
देखो सहसा पल्लव दल से
यह सुन्दर प्रसून खिल आया
और सुसौरभ से जगतीतल—
को फिर से इसने महकाया।

इलियट की जीवन-दर्शन-सम्बन्धी एक कविता बहुत प्रसिद्ध है : 'मेरे अन्त में ही मेरा आदि है' (इन माइ एंड इज़ माइ बिगिनिंग) जो उनकी अनन्त और अनन्य कालदर्शक ऐहिक भावना का परिचायक है।

अमेरिका में गांवों के किसान जब फसल तैयार होने पर नाचते-गाते और आनन्द मनाते हैं, उस अवसर का वर्णन इलियट ने स्पष्ट और खुले रूप में इस प्रकार किया है :

तालमेल के साथ नाचते—
औ' सजीव ऋतु को ये हैं अधिक सजीव बनाते।
नील गगन, नक्षत्र चमकते,
प्रचुर दूध गौओं से मिलता—
शस्य-श्यामला धरती ने हैं
प्रचुर अन्न-भण्डार भराए—
नर-नारी नित प्रेम-मुग्ध हो
अब स्वच्छन्द मौज करते हैं
चौपाये भी इन्हीं दिनों—
मस्ती में आकर खाते-पीते
और अन्त में खाद बनाकर—
अपना जीवन पूरा करते।

इस प्रकार इलियट ने सांसारिक और प्राकृतिक दोनों ही विषयों पर सुन्दर रचनाएं की हैं और उनकी कविताएं प्रसादगुण सम्पन्न होने के कारण संसार के अंग्रेजी समझनेवाले प्रत्येक देश में चाव से पढ़ी जाती हैं।

# विलियम फॉकनर

१९४९ ई० का साहित्यिक नोबल पुरस्कार विलियम फॉकनर को प्राप्त हुआ। पुरस्कार लेने के समय उन्होंने जो भाषण किया था, वह स्वयं एक उच्च कोटि का साहित्य था। वास्तव में फॉकनर इस शताब्दी के उच्चतम लेखकों में गिने जाते हैं और उनकी साहित्य-सेवा अपनी पीढ़ी और युग के अन्य साहित्यिकों से भिन्न और निराली है। यद्यपि इन के साहित्य की कद्र बहुत विलम्ब से हुई, पर अन्ततः उन्हें सम्मान मिला ही।

विलियम फॉकनर मिसीसिपी, दक्षिण अमेरिका के निवासी थे। इनकी रचनाओं में वहां की किम्वदन्तियों का सुन्दर सामंजस्य है। फॉकनर भूतकाल के गौरव का सम्मान करते थे और कहा करते थे कि भूतकाल कभी मरता नहीं ; वह भूत होता ही नहीं। अपने एक पात्र के मुंह से उन्होंने यह बात कहलवाई भी है।

फॉकनर एक उपन्यासकार के रूप में प्रसिद्ध हुए हैं। उनके पितामह का जन्म टेनेसी में हुआ था। बाद में उनका परिवार मिसूरी आ गया। उनके पिता की मृत्यु यहीं हुई थी। उस समय विलियम फॉकनर किशोरावस्था में ही थे और उन्हींपर परिवार का भार आ पड़ा।

उनके प्रारम्भिक जीवन की घटनाओं में एक यह है कि उन्होंने किसी बात पर अपने छोटे भाई को इतना पीटा कि घरवालों के डर के मारे घर से पैदल भागकर कई सौ मील चले और रिप्ली पहुंचे जहां उनके चाचा रहते थे। वहां मालूम हुआ कि उनके चाचा जेल में हैं। इससे वे घबराकर एक सराय के बाहर बैठकर रोने लगे और एक छोटी लड़की ने उन्हें ढाढस बंधाकर मकान-मालिक से उन्हें उस समय के लिए खाने-रहने का प्रबन्ध करा दिया। पीछे जब वे लौटकर अपने घर आए और बाद में विवाह का अवसर आया तो उन्होंने रिप्ली जाकर उस लड़की को ही अपनी जीवन-संगिनी बनाया।

उनके चाचा की राम-कहानी भी निराली ही थी। वे जेल में कानून पढ़ते थे और जिस मुकदमे में वे फंसे थे, उसमें अपनी वकालत स्वयं करते थे। बाद में वे जब जेल से छूटे तो उन्होंने अपने कानून के अध्ययन को पूरा कर लिया और उसमें परीक्षा देकर वकील बन गए। पीछे वे रिप्ली में ही वकालत करने लगे। कुछ समय बाद उनकी वकालत ऐसी चमकी कि वे जज नियुक्त हो गए। बाद में विलियम फॉकनर भी रिप्ली जाकर वकालत पढ़ने के लिए अपने चाचा के दफ्तर में बैठने लगे। वहीं मैकलीन नामक

एक अभियुक्त को उन्होंने पकड़वाया जिसने कुल्हाड़े से एक समूचे परिवार की हत्या उसका घर लूटने के लिए कर दी थी। मैकनॉन की सारी जीवन-गाथा सुनकर फॉकनर ने उसका उपयोग अपनी एक कहानी की वस्तुकथा के लिए किया। मैकनॉन एक बार जीते जलाए जाने से भी भागकर बच निकला था।

विलियम फॉकनर ने वकालत पढ़ी और वकील भी बन गए। पर उनकी प्रवृत्ति लेखन-कार्य की ओर विशेष थी इसलिए पहले उन्होंने मैकनॉन की जीवन-गाथा को ही कथा का आधार बनाया। अन्त में मैकनॉन को अपने जघन्य कृत्यों के लिए फांसी की सज़ा हुई, पर इसी बीच फॉकनर ने उसकी जीवन-गाथा पूरी लिखकर छपवा ली थी; इसलिए जिस दिन उसे फांसी हुई उस दिन उस पुस्तक की हज़ारों प्रतियां हाथों-हाथ बिक गईं जिससे फॉकनर को एक हज़ार डालर से अधिक का मुनाफा हुआ।

जब दक्षिणी अमेरिका का युद्ध (मैक्सिकन वार) छिड़ा तो फॉकनर उसमें भाग लेने को तैयार हो गए और फर्स्ट लैफ्टिनेंट के दर्जे पर नियुक्त होकर टिप्पा गए। वहां वे अपने सैनिक-कर्तव्य में लगे हुए घायल हो गए जिससे उन्हें शारीरिक अक्षमता का जेबखर्च मिलने लगा।

मैक्सिको का युद्ध समाप्त हो जाने पर वे रिप्ली लौटे और वहां वकालत करने लगे। वहां उनपर एक गुण्डे हिण्डमैन ने व्यक्तिगत शत्रुता के कारण गोली चलाई और उसके दो निशाने व्यर्थ गए। तीसरी बार भी उसने प्रयत्न किया; पर इससे पहले ही फॉकनर ने एक कटार से उसका काम तमाम कर दिया। इस अभियोग में फॉकनर जब जेल में थे, उन्हीं दिनों उनकी पत्नी के लड़का पैदा हुआ जिसका नाम जॉन रखा गया।

फॉकनर के मामले में जूरी ने यह निर्णय दिया कि उन्होंने आत्मरक्षा के लिए प्रहार किया था अतः वे निर्दोष छूट गए। परन्तु जेल से निकलते ही उनके दुश्मन के भाई हिण्डमैन ने उनपर आक्रमण कर दिया। फॉकनर ने उसका पक्ष लेने वाले मॉरिस को उसी समय गोली से उड़ा दिया। फिर मामला चला और फिर आत्मरक्षा के आधार पर वे दोषमुक्त हो गए। अन्त में हिण्डमैन-परिवार वहां से अर्कन्सास चला गया। इस बीच फॉकनर ने दूसरा विवाह कर लिया।

अमेरिका में दूसरी बार गृहयुद्ध छिड़ने पर फॉकनर उसमें लड़ने भी गए। युद्ध समाप्त होने पर उन्होंने कई पुस्तकें लिखीं। उन्होंने कुछ दिन तक नई रेलवे लाइन पोण्टोटोक और मिडिलटन के बीच खोलने का ठेका लिया; पर बाद में उनके साझी-दार अलग हो गए तो उनका यह काम ठप्प हो गया। एक बार ये व्यवस्थापिका-सभा के लिए चुनाव में भी खड़े हुए और उन्होंने अपने प्रतिपक्षी थरमाण्ड को हराया। अपने 'अपराजित' उपन्यास में उन्होंने इन घटनाओं का वर्णन अनोखे ढंग से किया है।

विलियम फॉकनर का जन्म २५ सितम्बर, १८९७ ई० में न्यू अलबानी में हुआ था। स्कूल के दिनों में वे एक अच्छे विद्यार्थी माने जाते थे। बचपन में वे कहानियां बढ़ा-

चढ़ाकर कहते और अपने साथी विद्यार्थियों को आश्चर्यचकित कर दिया करते थे। हाईस्कूल के अध्यापकों के लिए वे ज़रा कड़े विद्यार्थी सिद्ध हुए। फुटबाल खेलते समय एक बार उनकी टांग में गहरी चोट लगी। दसवीं कक्षा में पहुंचते ही वे स्कूल छोड़कर अपने पितामह के बैंक में काम करने लगे।

विलियम को बहुत थोड़ी अवस्था से ही लिखने का शौक था। उन्होंने पहले कुछ पत्र भी लिखे। सत्रह वर्ष की अवस्था में उन्होंने कविता लिखना प्रारम्भ किया। एल-निवासी फिलिपस्टोन का उनपर बड़ा प्रभाव पड़ा। स्टोन उनसे चार वर्ष बड़ा था और वह उनकी कविता और गद्य में संशोधन किया करता था।

जब १६१८ ई०में संयुक्त राज्य अमेरिका प्रथम विश्वव्यापी महायुद्ध में सम्मिलित हुआ तो फॉकनर ने फिर सेना में जाने का विचार और प्रयत्न किया। पहले तो वे एक शस्त्रालय के कारखाने में काम करने लगे। पीछे इंग्लैण्ड जाकर अंग्रेज़ों के लिए सैनिक भर्ती करने में लग गए। इसके बाद वे हवाई उड़ान का अभ्यास करने लगे। युद्ध तो समाप्त हो गया और सेना भी भंग हो गई, पर उन्हें आनरेरी सैकिण्ड लैफ्टिनेंट का पद मिल गया। फिर तो वे लिखने के काम में ही लग गए। उन्होंने इस बीच अमेरिकन रंग-ढंग छोड़कर अंग्रेज़ी शिष्टाचार अच्छी तरह सीख लिया और वे अंग्रेज़ों की ही तरह अंग्रेज़ी बोलने के अभ्यस्त हो गए।

फॉकनर का पहला उपन्यास था 'सिपाही की तनख्वाह' (सोल्जर्स पे) जो न्यू-ऑलियन्स में लिखा गया। फिर फ्रेंच क्वार्टर में उन्होंने 'छलिया' (डबलडीलर) और 'टाइम्स पिकायून' के कुछ अंश लिखे।

१६२५ में फॉकनर ने जेनेवा, इटली, फ्रांस और जर्मनी के कुछ भागों की यात्रा की। इनके न्यूयार्क पहुंचने तक 'सिपाही की तनख्वाह' उपन्यास प्रकाशित हो चुका था। इसके बाद मिसीसिपी जाकर इन्होंने 'मच्छर' (मॉस्क्यूटोज़) नामक उपन्यास लिखा जिसपर अल्डुअस हक्सले का प्रभाव था। १६२७ ई० में यह प्रकाशित हुआ। इसकी आलोचना अच्छी हुई; पर 'सिपाही की तनख्वाह' की अपेक्षा इसकी प्रतियां कम बिकीं।

उनका तीसरा उपन्यास 'सार्टरीज़' था जिसमें व्यापारिक सफलता का सुन्दर दिग्दर्शन कराया गया है। यह सन् १६२६ ई० में प्रकाशित हुआ। इसमें एक उड़ाके की कहानी है। बेयर्ड सार्टरीज युद्ध में अपने उड़ाके भाई की मौत से दुःखी होकर वायुयान में उड़ाके का काम करता है और बार-बार वायुयान उड़ा-उड़ाकर आत्मघात का प्रयत्न करता है। अन्ततः वह इसमें सफल हो मृत्यु-मुख में जाता है और उनकी विधवा स्त्री तथा एक बच्चा उसके पीछे रह जाते हैं।

विलियम फॉकनर ने अब लेखन-कार्य को पूरी लगन और तत्परता के साथ करना प्रारम्भ कर दिया। इस बार तीन वर्ष के लम्बे श्रम के बाद उन्होंने 'ध्वनि और आक्रोश' (साउण्ड ऐण्ड फ्यूरी) नामक सुन्दर उपन्यास लिखा। इस उपन्यास से ही विलियम फॉकनर सारे अमेरिका में चमक उठे। इस उपन्यास में फॉकनर के साहस या

सम्यक् रूप देखने को मिलता है। इस उपन्यास के चार भाग हैं जो धारावाहिक रूप में चलते हैं।

इसके प्रथम भाग में ७ अप्रैल, १९२८ ई० तक की घटनाओं का वर्णन है और इसमें आदि से अन्त तक सनसनी-भरी बातों का वर्णन है। दूसरे भाग में एक नवयुवक में ऐसी विकृत दुराग्रहपूर्ण अन्धता दिखाई गई है कि वह अपनी बहिन की ही इज़्ज़त लेने को उतारू हो जाता है। किन्तु लेखक ने इस अवांछनीय युवक की आत्महत्या कराकर अपने नैतिक दृष्टिकोण का परिचय दिया है। इसके तीसरे भाग में लेखक ने एक परिवार के पथभ्रष्टकर्ता जैसन काम्पसन जैसे स्वार्थी, चरित्रभ्रष्ट व्यक्ति का चित्रण किया गया है। अन्तिम भाग में परिवार के इस मुखिया के चरित्र की बखिया अच्छी तरह उधेड़ी गई है। इस उपन्यास में एक ओर तो चोरी, व्यभिचार और अनाचार का चित्रण कर उनके दुष्परिणाम दिखाए गए हैं और दूसरी ओर इसमें कुछ पात्र ऐसे हैं जो भोले, सच्चे और सुघरे चरित्र के हैं और जो सब कुछ सहकर भी मानव-चरित्र की उच्चता और सौंदर्य का निर्वाह अच्छी तरह करते हैं। फॉकनर के चरित्र-चित्रण में यह विशेषता है कि भ्रष्ट और दुष्ट की करतूत पर भी पाठक उसपर करुणा करता है और वह द्रवीभूत होकर उसपर दो आंसू बहाए बिना नहीं रहता।

विवाह के बाद कुछ आर्थिक तंगी में आ जाने के कारण फॉकनर ने बिजली का कुछ काम किया जिसमें उन्हें प्रातः चार बजे काम पर जाना पड़ता था। वहां बिजली के डायनमो की आवाज़ सुनते-सुनते उन्हें एक नया विचार आ गया और उन्होंने केवल छः सप्ताह में एक नया उपन्यास लिख डाला जिसका नाम रखा 'मरण शय्या पर'[१]—जिसको उन्होंने अपनी सर्वोत्तम कृति कहा। समालोचकों ने भी यही सम्मति प्रकट की। इस उपन्यास में भी भले-बुरे का अद्भुत समावेश है। इसमें उन्होंने मानव-स्वभाव की दृढ़ताओं, भयंकर भूलों, दुष्टताओं आदि के चित्रण में कमाल कर दिया है। इसमें प्रेम, स्वार्थ, उत्तरदायित्व के बीच संघर्ष कराकर, कष्ट, कठोरता और विकट परिस्थितियों को जन्म दिया है। मनुष्य उग्र भावावेश में किस प्रकार पागल हो उठता है और अपने अन्धतापूर्ण स्वप्न का परिणाम भोगता है, यह बात इस उपन्यास में अच्छी तरह दर्शाई गई है। अन्त में मानव को तब तक अन्धा ही दिखाया जाता है, जब तक वह अपने अच्छे-बुरे कर्मों की समीक्षा का दर्पण नहीं प्राप्त कर लेता। इस उपन्यास में अनेक छोटे-छोटे परिच्छेद हैं और प्रत्येक में एक व्यक्ति का विशिष्ट चरित्र चित्रित करते हुए उनके अन्तर-सम्बन्ध और घटनाओं के तारतम्य को निभाया गया है। इसमें ऐडी कण्ड्रेन नाम की स्त्री की मृत्यु का वर्णन है जो पहले एक शिक्षिका थी और बाद में उसने एक किसान से विवाह कर लिया था। उससे उसे चार बच्चे पैदा हुए। एक पहले विवाह से था। ऐडी की इच्छा थी कि वह मरने पर जेफर्सन में दफना दी जाए। उसकी लाश जेफर्सन ले जाने के लिए कितनी कठिनाइयां पड़ती हैं—बाढ़-पूरित नदी और ऊंचे पहाड़ पार करने पड़ते हैं, जिससे उसके

१. As I Lay Dying

लड़कों में से एक का पांव टूट जाता है। इसके अतिरिक्त दूसरे दिन वह लाश दफनाने के लिए रात को एक खलियान में रखी जाती है तो खलियान में ही आग लग जाती है और बड़ी कठिनाई से खतरे में जान डालकर एक लड़का लाश को बचा पाता है। इस दुःखपूर्ण वर्णन में भी लेखक बीच-बीच में कहीं-कहीं सुख की—हास्य की झलक दिखा देता है जिससे यह करुण कहानी अपठनीय नहीं बनती। १९३० के अन्त में यह पुस्तक प्रकाशित हुई और लोग इसकी ओर बहुत आकर्षित हुए।

इसके पश्चात् फॉकनर का 'पवित्र स्थल' नामक उपन्यास प्रकाशित हुआ जिसमें भयंकरतम काल्पनिक घटनाएं भरकर लेखक ने आशा की कि उसकी बिक्री बहुत होगी। उसके प्रकाशक हैरिसन स्मिथ ने पहले तो उसे प्रकाशित करने से इन्कार कर दिया क्योंकि उनका ख्याल था कि उसके प्रकाशक और लेखक दोनों को ही जेल की हवा खानी पड़ेगी। प्रकाशकों और समालोचकों का मत था कि फॉकनर क्रूरता और कठोरता के वर्णन में सीमा को पार कर जाते हैं।

'पवित्र स्थल' में उन्होंने मिसीसिपी की एक ऐसी लड़की का चित्रण किया है जो सनसनी की ही खोज में फिरा करती है। अन्त में यह लड़की वेश्यालय तक पहुंच जाती है और वहां के जीवन को पसन्द करती है। पात्रों की क्रूरता और घटनाओं की सनसनी के कारण कुछ पाठक इस उपन्यास से बेहद चौंकते हैं, किन्तु जिस वातावरण और अंचल के घटनाचित्र फॉकनर ने उपस्थित किए हैं, उनको देखते हुए यह अस्वाभाविक नहीं लगते। दूसरी बात यह है कि घटनाओं या पात्रों में लेखक ने क्रूरता इसलिए नहीं भरी है कि वह कोई जासूसी उपन्यास लिखता है बल्कि इसलिए डाली है कि उस समाज में उतनी क्रूरता भी अस्वाभाविक नहीं, बल्कि यथार्थतापूर्ण है। उनका यौन-सम्बन्ध और हिंसा का समावेश भारत में तो अनैतिक लगेगा, पर देशकाल और पात्र का ध्यान रखते हुए यह अयथार्थ और अनुचित नहीं है।

'पवित्र स्थल' प्रकाशित होते ही बहुत बिकी। इस कृति से फॉकनर की ख्याति इतनी बढ़ी कि हॉलीवुड ने उसपर फिल्म बनाना प्रारम्भ कर दिया। इससे फॉकनर को आर्थिक कष्ट सदा के लिए दूर होने की आशा हो गई और वे फिल्मों के लिए लिखने लगे।

१९३१ ई० में फॉकनर की लघुकथाओं का संग्रह 'ये तेरह' (दीज़ थर्टीन) के नाम से प्रकाशित हुआ। अनन्तर १९३२ ई० में उनकी 'अगस्त में प्रकाश' (लाइट इन अगस्ट) पुस्तक प्रकाशित हुई और १९३४ ई० में 'हरित पल्लव' (ग्रीन बो) जो उनकी कविताओं का संग्रह था। इसके पश्चात् उनकी अन्य लघुकथाओं का एक संग्रह 'डा० मार्टीनो' के नाम से प्रकाशित हुआ। १९३५ ई० में उनका 'पाइलॉन' उपन्यास प्रकाशित हुआ जिसमें तीन व्यक्तियों का चित्रण है जो एक हवाई सर्कस में काम करते थे। इसमें [illegible] नायक छतरी (पैराशूट) से कूदनेवाली लड़की यौन-सम्बन्ध के आवेग की प्रतीक बनाई गई है। उसके पीछे जो दो उड़ाके लगे थे उनमें विकट संघर्ष होता है और एक मारा जाता है।

१९३६ ई० में उनका 'अवसालोम, अवसालोम' उपन्यास निकला जिसमें जेफर्सन का चरित्र चित्रित किया गया है। १९३८ ई०में इनका 'अपराजित' उपन्यास प्रकाशित हुआ जिसमें दक्षिण अमेरिका के गृहयुद्ध की घटनाओं का चित्रण है।

१९३९ में उनका 'जंगली ताड़' (वाइल्ड पाम) प्रकाशित हुआ जिसमें दो लघु-उपन्यास हैं। उनके अन्य उपन्यास और कहानी-संग्रह भी हैं जिनमें 'हेमलेट', 'गोदाउन मासेज', 'इंट्रूडर इन डस्ट', 'नाइट्स गैम्बिट' (१९४९ ई०) 'रिकिम फारनन' (१९५१ ई०) और 'ए फेकल' आदि उल्लेखनीय हैं।

इसी वर्ष, सन् १९६२ में, इस कृती साहित्यकार का देहावसान हो गया है।

# बर्ट्रेण्ड रसल

१९५० ई० का नोबल पुरस्कार ब्रिटेन के प्रसिद्ध दार्शनिक साहित्यिक अर्ल बर्ट्रेण्ड रसल को प्रदान किया गया। रसल केवल दार्शनिक ही नहीं, वैज्ञानिक और साहित्य स्रष्टा भी हैं और हाल में उन्होंने शान्ति-आन्दोलन में भी सक्रिय भाग लिया है। १९५७ ई० में उन्हें भारत के कलिंग प्रतिष्ठान (उड़ीसा) के संचालक श्री पटनायक के दान से दिया जानेवाला 'कलिंग पुरस्कार' भी प्राप्त हुआ। १९६१ ई० में उन्हें अणवास्त्र-निर्माण विरोधी गतिविधि के कारण गिरफ्तार कर उनसे मुचलका मांगा गया जिसके न देने पर एक महीने की सजा हुई।

बर्ट्रेण्ड रसल सारे संसार में एक द्रष्टा के रूप में प्रसिद्ध हैं। वे अन्य विषयों के विद्वान तो हैं ही, गणित के भी प्रशिक्षित अधिकारी हैं।

रसल इंग्लैण्ड के एक प्रसिद्ध अमीर (अर्ल) घराने से सम्बन्ध रखते हैं। उनकी बड़ी पट्टी के लोग सत्रहवीं शताब्दी से ही बेडफोर्ड के ड्यूक के नाम से प्रसिद्ध हैं। राजनीति में यह घराना सदा से मौलिक विचार रखता आया है। इनके पूर्वजों में से एक लार्ड विलियम रसल को सम्राट चार्ल्स द्वितीय के विरुद्ध विद्रोह करने के अभियोग में जान से हाथ धोना पड़ा था। ये महाशय बर्ट्रेण्ड रसल के पितामह थे। ये लार्ड जॉन रसल के नाम से मशहूर थे और वे अपनी श्रेणी में पहले अर्ल थे जो सम्राज्ञी विक्टोरिया के प्रधान मंत्री के रूप में प्रसिद्ध थे और जिन्होंने १८३२ ई० में ही ब्रिटेन के शासन में उल्लेखनीय सुधार किया था।

बर्ट्रेण्ड रसल का जन्म १८ मई, १८७२ ई० को हुआ था। उनके माता-पिता का देहान्त तभी हो गया था जब वे तीन वर्ष के बच्चे थे। उनका पालन-पोषण उनके पितामह को करना पड़ा। कैम्ब्रिज के ट्रिनिटी कालिज की पढ़ाई में बर्ट्रेण्ड इतने तेज निकले कि इन्हें खुली प्रतिस्पर्धा में छात्रवृत्ति मिली और फिर उन्हें गणित और नीति-विज्ञान में प्रथम श्रेणी का पुरस्कार मिला। उन्होंने गणित पर पुस्तकें लिखनी शुरू कीं और तर्कशास्त्र एवं दर्शन पर ऐसी रचनाएं कीं जो सर्वोत्तम मानी गईं। इन्हें अपने ट्रिनिटी कॉलेज में ही प्राध्यापक बनाया गया। १९०८ ई० में वे रॉयल सोसायटी के 'फेलो' (सहधर्मी) बना दिए गए जबकि इनकी अवस्था केवल छत्तीस वर्ष की थी। इनके पूर्व कोई इतनी कम अवस्था में यह सम्मान नहीं प्राप्त कर सका था। इनके प्रमुख सिद्धान्त-

पूर्ण कार्यों के साथ-साथ उन्होंने राजनीति में दिलचस्पी लेनी शुरू कर दी और फेबियन सोसाइटी, स्वतन्त्र व्यापार आन्दोलन, और स्त्रियों के मताधिकार आदि में रस लेने लगे। ये एक-दो बार पार्लियामेंट के चुनाव में भी खड़े हुए, पर सफल नहीं हो सके।

जब जर्मनी में नाज़ी-आन्दोलन आरम्भ हुआ तो बर्ट्रेण्ड को अपना शान्तिवादी विचार बदलना पड़ा और प्रथम विश्वयुद्ध में उन्हें अपने विचारों के कारण कष्ट उठाना पड़ा। उन्हें उनके प्राध्यापक पद से अलग कर दिया गया। १९१८ ई० में उन्हें जेल भी जाना पड़ा और उन्होंने जेल में बहुत कुछ साहित्य लिखा। 'गणित-सिद्धान्त की भूमिका' नामक पुस्तक उन्होंने ब्रिक्सटन जेल में ही लिखी।

युद्ध के बाद बर्ट्रेण्ड रसल ब्रिटेन के श्रमिक दल के सदस्य के रूप में एक प्रतिनिधि मण्डल में रूस गए और रूस में जो कुछ देखा, उसपर एक पुस्तक—'बोलशेविज़्म का सिद्धान्त और उसका क्रियान्वय' नाम से लिखी। ट्रिनिटी कॉलेज ने उन्हें उनके प्राध्यापक पद पर बहाल करना चाहा, पर उन्होंने इन्कार कर दिया। १९२० ई० में वे चीन गए और वहां पेकिंग विश्वविद्यालय में आचरणवाद (बिहेवियरिज़्म) पर एक व्याख्यानमाला के वक्ता बने। उन्होंने चीनी जीवन और विचारों का अध्ययन किया और वहां से लौटने के बाद 'चीन की समस्या' नामक पुस्तक लिखी और बीसवीं सदी में चीन के सम्भावित कार्यों पर विश्लेषणात्मक तर्क उपस्थित किए।

बर्ट्रेण्ड रसल ने चालीस से अधिक पुस्तकें लिखी हैं, जिनमें से अधिकांश गणित, दर्शन आदि विषयों पर हैं, पर कुछ ऐसी भी हैं जिनका सम्बन्ध सामाजिक समस्याओं से है। पहले विश्वयुद्ध में उन्होंने 'सामाजिक पुनर्रचना के सिद्धान्त' नामक पुस्तक प्रकाशित कराई थी। उनकी द्वितीय पत्नी का नाम डोरा रसल है जिनके साथ अपना नाम देकर उन्होंने १९२३ ई० में 'औद्योगिक सभ्यता की सम्भावनाएं' शीर्षक पुस्तक प्रकाशित कराई। शिक्षा में उन्होंने बड़ी दिलचस्पी ली और उसपर अनेक पुस्तकें लिखीं। हैम्पशायर में पीटर्सफील्ड के पास उन्होंने डोरा रसल के साथ लड़के-लड़कियों का एक संयुक्त स्कूल नये और अग्रगामी ढंग का चलाया, जिसमें बच्चों को खेलने और काम करने की पूरी आज़ादी दी।

१९३१ ई० में जब उनके बड़े भाई का देहान्त हो गया तो बर्ट्रेण्ड रसल को तीसरे अर्ल की पदवी मिली। उन्होंने पहले ही से भारत की स्वतन्त्रता के बारे में बड़ी सहानुभूति के साथ लिखा और भाषण दिए। युनाइटेड किंगडम में स्थापित इण्डिया लीग के ये अध्यक्ष बनाए गए और उन्होंने भारतीयों को स्वराज्य दिलाने की बड़ी हिमायत की।

दूसरे विश्वयुद्ध के कुछ पहले ये संयुक्त राज्य अमेरिका गए जहां इन्होंने पहले-पहल शिकागो विश्वविद्यालय में भाषण दिया। उसके बाद केलिफोर्निया विश्वविद्यालय के लॉसएंजिल्स में भाषण देने गए। मार्च १९४० ई० में उन्होंने न्यूयार्क कॉलेज में प्राध्यापक का पद स्वीकार किया। किन्तु सामाजिक मामलों में उनके विचार इतने आगे

चढ़े हुए थे कि उनकी 'विवाह और नैतिक चरित्र' (१९२९ ई०) नामक पुस्तक प्रकाशित होते ही कुछ क्षेत्रों में इनके प्रति विद्वेष की भावना भड़क उठी और उनकी नई नियुक्ति के बारे में वितण्डावाद खड़ा हो गया यद्यपि सर्वोच्च न्यायालय ने उनकी नियुक्ति के पक्ष में निर्णय दिया। इसके बाद लार्ड रसल सिलवेनिया के वार्नेस प्रतिष्ठान में व्याख्यान-दाता होकर गए। दो वर्ष बाद उनकी नियुक्ति समाप्त कर दी गई। रसल ने प्रतिष्ठान पर दावा करके मुकदमा जीत लिया।

१९४४ ई० में वे इंग्लैण्ड लौट गए। उनके पुराने ट्रिनिटी कालिज ने उन्हें अपना साहचर्य (फेलोशिप) पद प्रस्तावित किया और उन्हें कॉलेज में व्याख्यान देने या न देने की छूट भी दे दी जिसे स्वीकार करके वे कई वर्ष के बाद केम्ब्रिज लौटे।

स्वदेश लौटकर वे अधिक सक्रिय बन गए। उनमें व्याख्यान देने की अद्भुत प्रेरक शक्ति है और उन्होंने अनेक नये काम किए हैं। ब्रिटिश रेडियो ब्राडकास्टिंग के ब्रिटेन ट्रस्ट के आप सदस्य हैं। १९४७ ई० में उन्हें रीथ-व्याख्यानमाला के लिए आमंत्रित किया गया। दूसरे युद्ध के बाद उनकी रचनाओं में 'पाश्चात्य दर्शन का इतिहास' अधिक प्रसिद्ध है जो उनकी पचहत्तरवीं वर्षगांठ पर प्रकाशित हुआ था। इस ग्रन्थ को इस शताब्दी की सर्वश्रेष्ठ रचना माना गया और यह प्रकाशित होने के पहले ही बिक गया। उन्होंने कुछ लघुकथाएं भी लिखीं। १९५४ ई० में उनकी 'नैतिकता और राजनीति में मानव समाज' पुस्तक प्रकाशित हुई और १९५६ ई० में 'स्मृति-चित्र' (मुख्यतः आत्म-कथा के रूप में) प्रकाशित हुई।

लॉर्ड रसल विश्व-शासन के ब्रिटिश संसदीय दल के सदस्य हैं और उन्होंने संघीय शासन-आन्दोलन कांग्रेस में भाग लिया है। उन्होंने आणविक अस्त्रों के निर्माण और परीक्षण का सदा से घोर विरोध किया है।

लॉर्ड रसल की चार शादियां हो चुकी हैं और उनके तीन बच्चे हुए। इनके उत्तराधिकारी वाइकाउण्ट एम्बरले का जन्म १९२१ ई० में हुआ था। इनकी चौथी शादी पहली की तरह एक अमेरिकन एडिथफिंच से हुई।

१९४९ ई० में उन्हें 'ऑर्डर ऑफ़ मेरिट' पुरस्कार प्राप्त हुआ था और दूसरे ही वर्ष नोबल पुरस्कार मिला।

बर्ट्रेण्ड रसल को आधुनिक 'वाल्तेयर' कहा जाता है और उन्होंने अपने अध्ययन-कक्ष में इस विख्यात फ्रांसीसी की अधोवक्ष-मूर्ति रख छोड़ी है। दोनों में आध्यात्मिक सान्निध्य के अतिरिक्त भौतिक एकरूपता भी दिखाई देती है।

बर्ट्रेण्ड रसल का मानवता में बुनियादी विश्वास है और उनमें जितने ही अद्भुत गुण हैं। इस आणविक युग में शान्ति-रक्षा के लिए प्रयत्नशील व्यक्तियों में उनका नाम सर्वोच्च और अग्रगण्य है। उन्होंने मानवता के विकास में 'स्वर्णयुग' के आने की अभिलाषाएं की हैं और वे सचमुच एक आधुनिक ऋषि हैं।

# पार लागरक्विस्त

१९५१ ई० का नोबल पुरस्कार स्वीडन के साहित्यकार पार लागरक्विस्त को मिला जो अपनी कलात्मक शक्ति और मानसिक स्वातन्त्र्य के लिए विख्यात हुए।

लागरक्विस्त का जन्म २३ मई, १८९१ ई० को हुआ था। उनकी रचनाओं में काव्य-कृतियां ही अधिक हैं, जिनके द्वारा उन्होंने अनन्त-सतत प्रश्नों का समाधान करने का प्रयत्न किया है।

लागरक्विस्त की शिक्षा उपसाला विश्वविद्यालय में हुई और उसके बाद कुछ वर्षों के लिए वे विदेश गए। वे बचपन से धार्मिक वातावरण में रहे जिसका उनपर अच्छा प्रभाव पड़ा। वे बहुत ही सीधे-सादे और अकृत्रिम स्वभाव के हैं और उनके इस स्वभाव का असर उनकी रचनाओं पर भी पड़ा है। साहित्य में उन्होंने समानान्तर रूप से आधुनिक अभिव्यक्ति-कला का दिग्दर्शन भी कराया है। प्रथम विश्वव्यापी महासमर के दुःखान्त की अनुभूति उन्होंने गहरे रूप में की, जो उनके 'यंत्रणा' (अंगेस्त) और 'कैवोज' नाटकों में अभिव्यक्त हुई है जो क्रमशः १९१६ और १९१९ ई० में प्रकाशित हुए हैं। ये लाक्षणिक भी हैं और तथ्यात्मक भी। इनमें आशा और निराशा की तरंगें बहती हैं। लेखक मनुष्य के अन्दर दैवी तत्त्व में विश्वास करता है।

जब १९३० ई० के बाद ही हिंसा के सिद्धान्तों की घोषणा हुई तो लागरक्विस्त उसके संकट से अवगत हो गए। उनकी रचनाओं में 'जल्लाद' (बोडेलन) और 'बंधी मुट्ठी' हिंसा का प्रबल विरोध करती हैं। ये दोनों १९३४ ई० में प्रकाशित हुई थीं। १९४४ ई० में उनका 'बौना' (ड्वारफेन) नामक उपन्यास प्रकाशित हुआ जिसमें यह दिखाया गया है कि मनुष्य की अन्दरूनी बुराई उसकी भलाई को नष्ट करने का किस प्रकार प्रयत्न करती है। ये १९४३ ई० में स्वीडिश एकादेमी के सदस्य बने।

इनकी अन्य उल्लेखनीय रचनाओं में, जो अंग्रेजी में अनूदित हुई हैं, 'बारब्बास', 'इविल टेल्स', 'मैरिज फीस्ट' (विवाह-भोज) 'गेस्ट ऑफ़ रियलिटी' (वास्तविक मेहमान), 'आनेस्ट स्माइल' (सच्ची हंसी) और 'मिड-समर ड्रीम इन दि वर्कहाउस' (कारखाने के मध्य ग्रीष्म का स्वप्न) अधिक प्रसिद्ध हैं।

# फ्रांसुग्रा मारिग्राक

फ्रांसुग्रा मारिग्राक को बहुत दिनों तक अन्तर्राष्ट्रीय जगत् में कोई ख्याति नहीं मिली और उनकी रचनाएं एक प्रकार से अपने देश में ही सीमित रह गईं। लेकिन १९५२ में उन्हें नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ।

मारिग्राक का जन्म १८८५ ई० में बोडिड के एक मध्यवित्त श्रेणी के घराने में हुआ था। उनकी शिक्षा-दीक्षा बोडिड विश्वविद्यालय के कैथोलिक स्कूलों में हुई। बाद में ये उच्च शिक्षा के लिए पेरिस गए। १९०९ ई० में उन्होंने अपनी एक कविता की किताब स्वयं प्रकाशित की जिससे साहित्यिकों और प्रकाशकों का ध्यान उनकी ओर गया। बाद में उनके और कई काव्य-संकलन और नाटक प्रकाशित हुए किन्तु उनकी वास्तविक ख्याति तब हुई जब उन्होंने उपन्यास लिखे। उनका पहला उपन्यास १९१४ ई० में प्रकाशित हुआ। उन्होंने अपने उपन्यासों से फ्रांसीसी भाषा का भण्डार भरा।

मारिग्राक का प्रसिद्ध उपन्यास १९३२ ई० में प्रकाशित हुआ था। उसके दूसरे ही वर्ष वे फ्रेंच एकादेमी में चुन लिए गए। यद्यपि कुछ पुराने ढर्रे के साहित्यिकों ने उनके चुनाव का विरोध किया किन्तु अधिकांश नये साहित्यिकों को उनकी रचनाएं बहुत पसन्द आईं। उनकी चर्चा और प्रशंसा काफी हुई जिससे दूसरे ही वर्ष—अर्थात् १९३३ ई०में उनका एक उपन्यास अंग्रेजी में अनूदित हो गया, किन्तु उस समय उसकी बिक्री अधिक नहीं हुई जिससे उसे असफल माना गया। इसका कारण यह समझा गया कि यह उपन्यास जन-सामान्य की समझ के बाहर की चीज था—उसमें शैलियों ने अपील की गई थी। उनसे कहा गया था कि उनके पाठक साम्यवाद और स्पेन के गृह-युद्ध के चक्कर में पड़कर उनके उपन्यासों में फ्रेंच-परम्परा के अनुसार मजा न लें और उन्हें मनोविनोद का सहारा न मान बैठें। इससे फ्रेंच पाठकों को उनकी इस रचना से, जिसमें राजनीति का गहरा पुट था, निराशा-सी हुई।

द्वितीय महायुद्ध का दौर निकट आ जाने के कारण लोगों ने उनकी ओर ध्यान नहीं दिया। उनकी रचनाओं में ऐन्द्रिक पराधीनताओं को पोषण नहीं मिला जो युद्ध के दबाव बढ़ने पर और भी उग्र बन जाया करती हैं।

फ्रांसुग्रा मारिग्राक का जन्म बोडिंग में ११ अक्तूबर, १८८५ ई० में हुआ था और वे अपने पिता की पांच सन्तानों में सबसे छोटे थे। उनके तीन भाइयों ने ले एक

गार्डिड विश्वविद्यालय के डीन बन गए थे। उनका घराना समृद्धिशाली उच्च मध्यम वर्ग का अर्थात् खाता-पीता था जिससे वे अपने चारों ओर सम्पत्तिशाली जीवन की झलक बचपन से ही पा सके थे और अपने उपन्यासों में उसका चित्रण कर सके थे।

फ्रांशुआ अभी दो घंटे के भी नहीं हुए थे कि उनके पिता का देहान्त हो गया। उनके पितामह तब मरे जब ये पांच वर्ष के हो चुके थे। दोनों की मौतें विचित्र ढंग से हुईं। पिता तो दिन-भर जायदाद का निरीक्षण करके शाम को घर लौटे तो सिर में दर्द हो गया और दूसरे दिन समाप्त हो गए और पितामह गिरजाघर से लौटते हुए बेहोश होकर गिर गए। फ्रांशुआ ने अपनी रचनाओं में सहसा मृत्यु का चित्रण भी सम्भवतः उसी प्रभाव के कारण किया है। 'ले माल' उपन्यास में फ्रांशुआ ने अपनी माता को मेडम दे-सीमैंरिज़ के नाम से चित्रित किया है और उन्हें परम धार्मिक सिद्ध किया है।

'कमेन्समेण्ट्स इन बी' में वे लिखते हैं : "ज्यों ही घड़ी में नौ बजते, हमारी मां प्रार्थना के लिए उठ पड़ती और हम सब उसके पास इकट्ठे हो जाते। वह प्रार्थना के प्रथम शब्दों का उच्चारण करती—'भगवन् ! तुझे साष्टांग दण्डवत् है ! तुझे शतशः धन्यवाद है कि तूने मुझे ऐसा हृदय दिया जिससे मैं तुझे जान सकती हूं और प्रेम कर सकती हूं।...'"

पांच वर्ष की अवस्था में फ्रांशुआ किंडरगार्टन स्कूल भेज दिए गए। उन्होंने अपनी आत्मकथा में लिखा है : "मैं एकान्त-सेवन का ऐसा प्रेमी था कि दस वर्ष की अवस्था में घण्टों पाखाने के अन्दर बैठा रहता था। मैं ऐसे ही खेल-कूद में भी लग जाता था, जो अकेले हो सकते थे।"

किंडरगार्टन स्कूल से वे आगे पढ़ने भेजे गए। हाईस्कूल में उन्होंने जिन अध्यापकों से शिक्षा प्राप्त की उनके बारे में उनका कहना है कि वे बड़े ही समझदार और सहानुभूतिपूर्ण थे।

इसके बाद वे बोर्डिड विश्वविद्यालय भेज दिए गए जहां उन्होंने 'लाइसेंस ऑफ़ लेटर्स' की परीक्षा पास की और उसके पश्चात् १९०६ ई० में वे आगे पढ़ने के लिए पेरिस भेजे गए। वहां उन्हें ऐतिहासिक संशोधन के काम में लगाया गया, यद्यपि उनकी उसमें कोई रुचि नहीं थी। परन्तु एक यही ऐसा विषय था जिसमें गणित का विषय अनिवार्य नहीं था इसलिए उनके लिए अधिक अनुकूल था।

प्रकाशन के कार्य में प्रविष्ट होने पर उन्होंने सोचा कि यदि प्रकाशक के पास उनकी पुस्तकें प्रकाशित करने के लिए पर्याप्त धन नहीं है तो उसके लिए वे अपनी पूंजी लगाएं। और उन्होंने ऐसा ही किया भी। उनकी कविताएं 'रेवस प्रेजेण्ट' और 'ला रिव्यू-दला-फ्यूनेस' नाम की पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगीं। उनका पहला कविता-संग्रह 'ला मेम्स ज्वाइण्टिस' नामक पत्रिका में १९०९ ई० में प्रकाशित हुआ। 'ला रिव्यू-द-ला-फ्यूनेस' में भी उनकी कविताएं निकलीं। उनकी कवित्व-शक्ति निरन्तर विकसित होने लगी। उनकी कविता के प्रशंसकों और उनका उत्साह बढ़ानेवालों में मारिसबेरी

विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। मारिस्राक की कविताओं का दूसरा संग्रह 'एड्यू एडोलेसेंस' १९११ ई० में प्रकाशित हुआ। तीसरी जिल्द 'ओरामिरा' के नाम से १९२५ ई० में निकली। तब तक तो मारिस्राक विख्यात उपन्यासकार भी बन चुके थे। इनकी चौथी काव्य-पुस्तक 'ल सैंग द-एती' १९४० ई० में प्रकाशित हुई।

मारिस्राक के पहले दो उपन्यास 'ल इंफेन्द चार्ज द-चेनस' और 'ला रोप प्रिटेक्स्ट' क्रमशः १९१२-१३ ई० में निकले थे। बाद में उनका विवाह जीनलाफोन से हो गया। फिर तो ये चार बच्चों के बाप हो गए।

पहले महायुद्ध में उन्हें मेडिकल सर्विस में सम्मिलित होकर सैलोनिका के मोर्चे पर जाना पड़ा, परन्तु वहां वे कोई ख्याति नहीं प्राप्त कर सके। युद्ध की समाप्ति के बाद ये लेखन-कार्य में पूरे मन से जुट गए। उनके दो विख्यात उपन्यास—'ला चेयर एट ले सैंग' और 'प्रिसिडेन्सेज' उन्हीं दिनों प्रकाशित हुए।

मारिस्राक को अपने सभी समकालीन लेखकों की अपेक्षा अधिक शीघ्रतापूर्वक सफलता प्राप्त हुई और उनका विरोध भी कम हुआ। ये १९२२ से १९३२ ई० के बीच में पूर्ण सफलता के शिखर पर पहुंच गए। उनके पांच उपन्यासों ने फ्रेंच साहित्य में इनकी धाक जमा दी। उनके उपन्यास 'ले बेसर आलिप्रे' (१९२२ ई०), 'जेनेट्रिक्स' (१९२३ ई०), 'ले डेजर्ट द-लेमोर' (१९२५ ई०), 'थेरीज डेस्क्येको' (१९२६ ई०), और 'ले नाउ द-वाइपरे' ने इनकी ख्याति में चार चांद लगा दिए। लगभग इसी अवधि में इन्होंने चार और उपन्यास लिखे जिनमें 'ले डेजर्ट द-लेमोर' के लिए उन्हें 'ग्रेण्ड प्रिक्सडू-रोमन' पुरस्कार मिला। १९३२ ई० में तो ये फ्रेंच साहित्य-संस्था के सभापति चुन लिए गए और उनका फ्रेंच एकैडेमी में प्रवेश हो गया।

इन ख्यातियों से उनकी साहित्यिक प्रतिभा निरन्तर व्यस्तता के साथ विकसित होती गई और उन्होंने २५ उपन्यास लिख डाले जिनमें 'ले मिस्टरी फ्राण्टेना' (१९३३ ई०) की ओर विद्वान पाठकों का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित हुआ। अब तक लोग उनके उपन्यासों को एक ही शैली और तकनीक का मानते थे, पर इस उपन्यास ने लोगों की धारणा बदल दी और वे उनके रचना-कौशल के वैविध्य के कायल हो गए।

गत महायुद्ध के अन्त में उन्होंने साहित्य-जगत् को जो उपन्यास दिए उनमें तीन लघु उपन्यास अधिक पसन्द किए गए जिनके नाम 'ले सेगोइन' (१९५७ ई०), 'गलि-मार्ट' (१९५२ ई०) और 'ले एग्न्यू' (१९५४ ई०) उच्च श्रेणी के माने जाते हैं, परन्तु इनका सम्मान विद्वान् मण्डली में ही होकर रह गया।

मारिस्राक ने नाटक भी लिखे, जिनमें 'आस्मोदी' १९३८ ई० में रंगमंच पर लाया गया। बाद में १९४५, ४८ और ५१ ई० में भी इन्होंने तीन सफल नाटक अभिनय के लिए लिखे जिनका सुन्दर प्रदर्शन हुआ और व्यापक चर्चा हुई। मारिस्राक ने समालोचनाएं और जीवनियां भी लिखीं, पर इनकी सर्वोच्च ख्याति उपन्यासकार के रूप में ही हुई।

मारिग्राक ने राजनीति में भी भाग लिया और जर्मनी के फ्रांस पर अधिकार जमाने के समय उसका प्रबल प्रतिरोध किया। उन्होंने 'ले फिगारो' पत्र में अत्यन्त उग्र भाषा में जर्मनी के विरुद्ध लेख लिखे।

६ नवम्बर, १९५२ ई० को उन्हें नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ।

मारिग्राक की रचनाओं में से कुछ उदाहरण देने का लोभसंवरण हम यहां नहीं कर सकते, क्योंकि उनमें संसार के नये लेखकों—विशेषकर उपन्यासकारों के लिए मार्ग-दर्शन और सन्देश है :

"मैं ऐसे उपन्यास की कल्पना नहीं कर सकता जिसके ढांचे का हर कोना मेरे मस्तिष्क में बैठ नहीं जाता। उसके हर टुकड़े, प्रत्येक भाग से मुझे अवगत हो जाना चाहिए और उसके चतुर्दिक की मुझे पूरी जानकारी हो जानी चाहिए—फालतू बातों को मैं उसमें घुसेड़ना नहीं चाहता। मेरे साथियों में से कुछने किसी अज्ञात नगर में जाकर वहां के किसी होटल में एक कमरा लेने और फिर वहां का अध्ययन करके उपन्यास लिखने का क्रम चलाया है, परन्तु मैं ऐसा नहीं कर सकता। मैं किसी भी देश के अज्ञात भाग में जाकर वहां इस प्रकार के पर्यवेक्षण और अध्ययन से लाभ नहीं उठा सकता। मैं तो उसी वातावरण और उसकी घटनाओं का वर्णन सजीव रूप में कर सकता हूं जिसमें मैं पड़ा रहता हूं और जो नित्य मुझे प्रभावित करती हैं। मैं अपने पात्रों का निर्माण अपने नित्य के देखे हुए व्यक्तियों के चरित्रों से ही कर सकता हूं। मैं उनको स्पष्ट नहीं, तो छाया के रूप में तो देख ही पाता हूं, और मुझे उस स्थान की गंध मिल जाती है जहां वे चलते-फिरते हैं। मैं उनकी प्रत्येक गतिविधि से परिचित होता हूं।

"इससे मुझमें एक जैसे वातावरण के चित्रण तक ही सीमित रहने का दोष आ सकता है और एक उपन्यास के वातावरण के चित्रण से दूसरे के चित्रण में साम्य आ सकता है। इससे बचने के लिए मैं उन सभी मकानों और बगीचों को क्रमशः लेता हूं जहां मैं बचपन से ही रह चुका हूं। किन्तु इस काम के लिए अपना और अपने मित्रों का घर ही पर्याप्त नहीं होता। इसलिए मैं पड़ोसियों के घरों और उनके चतुर्दिक एवं वातावरण को ले लेता हूं। इस प्रकार बचपन से ही वृद्धा महिलाओं ने मेरे प्रति जो दयालुता और सौजन्य दिखाया है, प्रभातकाल से रात को सो जाने तक जो खाद्य, पेय मुझे दिए गए हैं और उन स्थानों में प्रभात कैसे आया, सन्ध्या कैसे ढली, यह सब जो मैंने देखा है, उसका वर्णन निश्चय ही सजीव वातावरण उपस्थित करता है।...मैं ऐसे नाटक को सजीव नहीं कह सकता जिसकी कथा-वस्तु का अनुभव मेरे जीवन में अभिनीत नहीं हुआ हो। मैं अपने प्रत्येक पात्र से पूर्णतः परिचित होना चाहता हूं और उसकी हर गतिविधि से भी।...मेरी आध्यात्मिकता ठोस रूप धारण करने को आतुर रहती है—मैं उसका प्रत्यक्ष और स्पर्श्य बोध कर लेना चाहता हूं।

"प्रायः मैं अपने समालोचकों से लिखने की प्रेरणा प्राप्त करता हूं, किन्तु मैं अपने सधे-बंधे पात्रों से भिन्न प्रकार का चरित्र-चित्रण नहीं कर पाता। मैं मानव की

कमजोरियों को उसके वास्तविक में ही दिखाने के लिए बाध्य हो जाता हूं और उसके गुणों को भी।

"मैं ऐसे पात्रों का चरित्र-चित्रण अपनी अनेक रचनाओं में फिर-फिर इसलिए करता हूं कि एक उपन्यास में वह पात्र आकर भी समाप्त नहीं हो जाता। प्रत्यक्ष जगत् में उसका पुनर्जन्म होता रहता है। मेरी रचनाओं में एक पात्र के सम्पूर्ण चित्रण के लिए उसके पुत्र और पौत्र पैदा हो जाते हैं।"

एक उपन्यासकार का जीवन अपनी रचना किस प्रकार सजाता है, इसकी स्वीकारोक्ति मारिआक ने उपर्युक्त शब्दों में की है। उनके अधिकांश पात्र मध्यम वर्ग के सफेदपोश परिवारों के हैं और यह वर्ग आजकल संसार में सबसे अधिक समस्याग्रस्त बना हुआ है। उच्च और निम्न श्रमजीवी-वर्ग के पात्र मारिआक के उपन्यासों में कम उभरते हैं। फ्रांसीसी उपन्यासकारों में जहां एक ओर आन्द्रे जीद जैसे पुरुष-जाति के ही बीच परस्पर अप्राकृतिक सम्बन्ध के प्रबल समर्थक और धार्मिक भावना का उपहास करनेवाले हो गए हैं, वहां मारिआक जैसे धर्म-बंधन की प्रतिष्ठा भंग न करनेवाले भी हो गए हैं। मारिआक के अपने शब्दों में ही 'वे सनातनी ईसाई परिवार में पैदा होने के कारण जो प्रकाश परिस्थितिवश प्राप्त कर सके हैं, उसका त्याग नहीं कर सकते, क्योंकि वे उसपर श्रद्धा करते और उसे सत्य समझते हैं।'

मारिआक की गद्य-शैली का एक उदाहरण देना यहां अप्रासांगिक नहीं होगा। वे कहते हैं :

"हमारे सम्मुख फैला हुआ विस्तृत मैदान सूर्य की तपन के लिए भी उसी प्रकार भूखा पड़ा है जिस प्रकार स्निग्ध चन्द्र-ज्योत्स्ना से आप्लावित होने के लिए।

"देवदार और सिन्दूर-फल के वृक्ष दूरवर्ती कृष्णकुंज के उस पार शोभायमान हैं और उनकी सुगन्ध से रात भर गई है।..."

मारिआक ने अपने पूर्ववर्ती उपन्यासकारों में बालजक, बादलेअर और रिम्बाद की प्रशंसा की है और उनसे प्रभाव प्राप्त किया है, किन्तु उनकी रचनाओं पर सबसे अधिक प्रभाव रेसाइन[1] का पड़ा प्रतीत होता है क्योंकि इनके उपन्यासों के पात्र रेसाइन की रचनाओं के पात्रों से बहुत मिलते-जुलते हैं। यद्यपि मारिआक के पात्रों में ऐसे अधिक हैं जो धर्म के प्रति दिखाऊ आस्था रखते हैं, परन्तु यह आस्था मौखिक-मात्र है—व्यवहार में अपने पारिवारिक जीवन, सामाजिक स्थिति और अपने वृक्षों एवं अंगूर के बगीचों और नगद-नारायण को अधिक महत्त्व देते हैं। इन पात्रों में ऐसे व्यक्ति भी हैं जो उच्च सामाजिक स्थिति अथवा आर्थिक दुर्दशा को सुधारने के लिए अपनी बेटियां उचित उच्च वंशोद्भव धनाढ्यों को बिना हिचकिचाहट के सौंप देते हैं। ऐसे एक प्रसंग के वार्तालाप को मारिआक के ही शब्दों में देखिए :

"मैं उस आश्चर्य को कभी नहीं भूल सकता जो मुझे तुम्हारी मां ने अनिंद्य ...

1. Racine

देखकर हुआ था—वह मुझसे एक वर्ष बड़ी थी, पर अपने लावण्य के कारण वह मुझसे छोटी लगती थी। उसकी सुन्दर और विपुल केशराशि और लम्बी गर्दन, बच्चों की-सी निरीह आँखें ऐसी थीं जो उसके सौंदर्य को और भी बढ़ाती थीं। ऐसी भोली सुन्दरी लड़की को तुम्हारे पिता ने बैरन फिलिबर्ट को बिना आगा-पीछा सोचे, पद और धन के लोभ से, सौंप दिया। मुझे इस घटना से गहरा धक्का लगा। साठ-साला फिलिबर्ट के मरने के बाद मैंने जाना कि वह बहुत ही दुःखी व्यक्ति था। उसने अपनी बच्चों-सी पत्नी से अपना बुढ़ापा छिपाने के लिए क्या नहीं किया होगा। वह कपड़े बहुत कड़ाई से फिट करवाकर पहनता—गर्दन की झुर्रियां ऊंची कालर में विलीन करने का प्रयत्न करता। मूंछों को रंगते रहने में उसे कितना श्रम और सावधानी करनी पड़ती और गलमुच्छों के द्वारा गालों की झुर्रियां छिपाने में वह किस कौशल से काम लेता। वह जब तक घर में रहता सदा शीशे की ओर देखने में ही समय गुजारता और इस व्यस्तता के कारण वह कान पड़ी बात की ओर ध्यान भी नहीं दे पाता। निरन्तर अपनी शक्ल शीशे में देखने की आदत डाल लेने से उस बुड्ढे की बड़ी हंसी होती थी, पर वह इसकी परवाह नहीं करता था। वह कभी मुसकराता नहीं था क्योंकि उससे उसके नकली दांत दिख जाते थे। अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति से वह अपने ओठों को एक-दूसरे से थोड़ा भी अलग नहीं होने देता था। वह सिर के बाल बढ़ाकर रखता और इसके लिए हैट का उपयोग आवश्यकता से कहीं अधिक करता था।"

इसी प्रकार एक और पात्र का जो बुढ़ापे में विवाह कर लेता है, चित्रित करते हुए मारियाक लिखते हैं : "इस युगल जोड़ी को देखते ही लोग शर्म से गड़ गए। जीन पेलोमरे ने अपने को सुन्दर और सुडौल दिखाने के लिए दर्पण के साथ लम्बा संघर्ष किया था। वह अपनी नवोढ़ा के साथ जो भी व्यवहार करता उसीमें कृत्रिमता दिखाई देती और वह बेचारी उसके उन क्रिया-कलापों के प्रति कुछ भी ध्यान न देकर मूर्तवत् अडिग बनी रहती।"

वासना के अतिरेक का वर्णन करते हुए लेखक 'ले फिल्यू द-पयू' में लिखता है :

"वह कैसा मधुर किन्तु प्रचण्ड समय था जब दो प्राणी एक-दूसरे से प्रतिरोध करने का पाखण्ड करते हुए भी आत्मसमर्पण कर देते हैं। उनके निश्चित अंग नरक में नहीं डूबे हैं, पर वे उसकी गहराई की ओर धंसते हुए यह संकल्प करते दिखाई देते हैं कि संसार की कोई शक्ति उन्हें पृथक् नहीं कर सकती।"

उपन्यासों के नायकों के बारे में मारियाक कहते हैं।

"महान उपन्यासों के नायक, लेखक के इन्कार करने पर भी एक ऐसी सचाई से निर्मित होते हैं जिसे हम अपने जीवन पर लागू कर सकते हैं। ये एक ऐसे आदर्श जगत् की सृष्टि करते हैं जिसे लोग अपने ही हृदय में अधिक सचाई के साथ देख सकते हैं।"

फ्रेंच लेखकों की यह विशेषता है कि वे सत्य की खोज में अपने हृदय का मन्थन

करने की अधिक आकांक्षा अपनी रचनाओं में प्रदर्शित करते हैं। माण्टेन से लेकर अब तक के लेखकों में यही प्रवृत्ति रही है। मारिआक में गम्भीरता भी है और एकाकी चिन्तन भी। उनकी वह अन्तर्दृष्टि उनके उपन्यासों में विशेष रूप में परिलक्षित होती है जो फ्रेंच-परम्परा की एक विशेषता मानी जाती है। वे चिंतन में काफी गहराई तक उतरते हैं। उनके धार्मिक विचार उनके चिंतन में प्रेरक और सहायक होते प्रतीत होते हैं। इस दृष्टि से वे अपने सभी समसामयिकों को पाठ सिखाने की क्षमता रखते हैं।

उद्धृत करते हैं :

"लेखन-कार्य में प्रविष्ट होने पर मैंने उपन्यास से आरम्भ किया। मेरे विचार से एक बार आरम्भ करने पर मेरे उपन्यास का कथा-प्रवाह चल पड़ा। मैंने किसी राज्य—बालकन या दक्षिण अमेरिका के जनतंत्र में विद्रोह की कल्पना की और वहां के मनमाने शासन का अन्त करनेवाले उदार दल के नेता को समाजवादी क्रान्ति का शिकार बनाया। मेरे अधिकारी भाइयों ने इस कथा के विकास में आनन्द लिया और उसमें प्रेम-प्रसंग के विकास का सुझाव दिया जिसे मैंने स्वीकार नहीं किया। परन्तु क्रान्ति दबाने के लिए दर्रे-दानियाल का सा युद्ध कराया। लगभग दो ही महीने में मैंने यह उपन्यास समाप्त कर लिया जो पहले 'मेकमिलन मैगजीन' (पत्रिका) में 'सावरोला' के नाम से प्रकाशित होकर बाद में अनेक संस्करणों में प्रकाशित हुआ, जिससे कई वर्षों में मुझे रायल्टी द्वारा केवल कुछ सौ पौंड की ही आमदनी हुई।"

चर्चिल की दूसरी रचना 'मालकन्द फील्ड फोर्स' थी। किन्तु साहित्यिक जगत् में इसकी कोई बड़ी कद्र नहीं हुई। चर्चिल की रचनाओं में उनकी 'आत्मकथा' और प्रथम महायुद्ध का इतिहास 'विश्व संकट' अधिक प्रसिद्ध हुई। इन रचनाओं पर चर्चिल की प्रशंसा हुई है। इन दोनों की अपेक्षा उनकी 'नदी-युद्ध' (रिवर वार) और अधिक प्रसिद्ध हुई जिसमें मिस्र की नील नदी को घटना-प्रसंग बनाकर वहां के १८८१ ई० के विद्रोह को ऐतिहासिक उपन्यास का रूप दे डाला गया है। इस उपन्यास में (लार्ड) किचनर का चित्रण विस्मयजनक रूप में किया गया है। फ्रांस के साथ संघर्ष के बाद दरविश साम्राज्य का अन्त किस नाटकीय ढंग से हुआ, इसका वर्णन सुन्दर ढंग से किया गया है। यह पुस्तक पहले १८९९ ई० में प्रकाशित हुई और इसकी पुनरावृत्ति १९०२ ई० में हुई।

१९०० ई० में चर्चिल अनुदार दल की ओर से ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के सदस्य चुन लिए गए। एक तो दक्षिण अफ्रीका के युद्ध में चर्चिल ने क्रियात्मक रूप में भाग लिया था, दूसरे इधर लेखक और पत्रकार के रूप में उनकी ख्याति हो चली, इसलिए चर्चिल के राजनीति-प्रवेश का द्वार खुल गया। इसके पश्चात् चर्चिल ने लार्ड रेण्डाल्फ की जीवनी लिखी जिसकी उन दिनों अनुदार दलवालों को बड़ी आवश्यकता थी। यह वास्तव में उनके पिता लार्ड रेण्डाल्फ चर्चिल की जीवनगाथा थी जो दो जिल्दों में प्रकाशित हुई। उसके बाद यद्यपि उसका कोई तात्कालिक प्रतिफल चर्चिल को नहीं मिला, पर दो ही वर्ष बाद जब उदार दलवालों की सरकार बनी तो चर्चिल पार्लियामेण्ट के सदस्य-मात्र न रहकर तीस वर्ष की अवस्था में ही मंत्रिमंडल के सदस्य बन गए। यहां उन्हें लायड जॉर्ज से मुकाबला करना पड़ा। अनुदार दल से अलग होकर भी चर्चिल का महत्त्व नहीं घटा और उन्होंने शासन के कामों में पहले लायड जॉर्ज के सहायक के रूप में और फिर स्वतंत्र रूप में अनेक सुधार किए। इस प्रकार चर्चिल १९०५ से १९११ ई० के बीच जब क्रान्तोद्धार और शासनविधान में लगे थे उसी बीच जर्मनी से युद्ध की

तैयारी कर ली और उसे उन्होंने १९१४ में एकाएक छेड़ भी दिया। चर्चिल की विलक्षण राजनीतिक प्रतिभा का परिचय उन्हीं दिनों मिला। युद्ध में ब्रिटेन की विजय लायड जॉर्ज और चर्चिल दोनों के पराक्रम का परिणाम थी और उसके वाद १९१९-२१ ई० में चर्चिल अच्छी तरह चमके। उन्होंने न केवल भारत के असहयोग-आन्दोलन को दवाने में काफ़ी सफलता पाई, बल्कि वे रूस के वोलशेविज़म के विरुद्ध आन्दोलन और आयर्लैण्ड के गृहयुद्ध के कारण वने। वाद में लायड जॉर्ज अनुदार दल से अलग हो गए तो उस समय चर्चिल का महत्त्व भी जाता रहा। चर्चिल जितना चमके थे, उतने ही धूम्राच्छादित हो गए। आस्टिन चेम्वरलेन और वोनार ला जैसे उच्च श्रेणी के लोगों ने कहा कि अव चर्चिल जैसे मूर्ख को सैनिक और नाविक विषयों में टांग अड़ाने का अवसर नहीं दिया जाना चाहिए। इस प्रकार १९२२ ई० में चर्चिल को राजनीति से अवकाश मिला तो वे 'विश्व-संकट १९१७-१८' ई० के शीर्षकान्तर्गत प्रथम महायुद्ध पर चार जिल्दों की वड़ी पुस्तक लिखकर प्रकाशित करने का अवसर पा गए। उन दिनों इस ग्रंथ की वड़ी चर्चा हुई। प्रथम महायुद्ध का ऐसा सजीव और तथ्यात्मक वर्णन और कहीं प्रकाशित नहीं हुआ। आज भी उसकी घटनाओं का वर्णन पढ़ने से लगता है कि द्वितीय विश्वव्यापी महायुद्ध वैसा भीषण नहीं था जैसाकि प्रथम महायुद्ध, क्योंकि उस युद्ध में सैनिकों को शौर्य प्रदर्शित करने का अवसर मिला था जवकि द्वितीय महायुद्ध न्यूनाधिक रूप में यांत्रिक युद्ध सिद्ध हुआ जिसमें वैयक्तिक वीरता-प्रदर्शन की कोई गुंजाइश नहीं थी—केवल यांत्रिक एवं सामूहिक संहार ही व्यापक रूप में हुआ।

चर्चिल अपनी इस विख्यात पुस्तक के प्रकाशित होने के पहले ही अनुदार दल की सरकार में फिर प्रविष्ट हो गए। इस प्रकार वे १९२४ से १९२९ ई० तक वाल्डविन की सरकार में राज्यकोश के महामात्य वने रहे। १९२९ ई० के चुनाव में अनुदार दल पराजित हो गया और श्रमजीवी दल की सरकार ब्रिटेन की अधिष्ठात्री वनी। मैकडॉनल्ड इसके प्रधान मंत्री वने। भारत की स्वाधीनता का सवाल उन दिनों ब्रिटिश सरकार के सामने आया। मैकडॉनल्ड ने गोलमेज़ परिषद करके इस समस्या को हल करने का प्रयत्न किया। वाल्डविन भारत की स्वाधीनता के विरोधी वने। १९३१ ई० में वाल्डविन और मैकडॉनल्ड का तो समझौता हो गया और उन्होंने ब्रिटेन की संयुक्त राष्ट्रीय सरकार वना ली; पर चर्चिल को दूध की मक्खी की तरह निकाल वाहर फेंका गया। मैकडॉनल्ड और वाल्डविन के वाद चेम्वरलेन को प्रधानमंत्रित्व मिला जिससे दस वर्ष तक चर्चिल को आगे वढ़ने का अवसर नहीं मिला। उनकी वातें ब्रिटेन में तव सुनी गईं, जव उन्होंने अपनी लेखनी और वाणी द्वारा दस वर्ष वाद नाज़ी संकट की विभीषिका से ब्रिटेन को चौंकाया। पर हमें यह देखना है कि साहित्यिक चर्चिल ने इन दस वर्षों के अवकाशकाल में क्या किया।

१९३० ई० में चर्चिल ने अपने प्रथम पचीस वर्षों की जीवन-गाथा 'मेरा वाल्य जीवन' (माई अर्ली लाइफ) प्रकाशित कराया था, जो वास्तव में एक वड़ी ही मनोरंजक

और प्रमोदपूर्ण आत्म-कथा है यद्यपि उसकी बिक्री बहुत व्यापक रूप में नहीं हुई। १९३२ ई० में उनकी 'विचार और महोद्योग' (थाट्स एण्ड एडवेंचर्स) नामक पुस्तक प्रकाशित हुई, और १९३७ ई० में 'महान समकालीन' (ग्रेट कांटेम्पोरेरीज) जिसमें चर्चिल ने पचीस प्रसिद्ध समकालीनों और पूर्ववर्तियों का परिचय सुन्दर भाषा में लिखा। जर्मनी के सम्राट विलियम कैसर की जीवनी लिखते हुए उन्होंने जो कुछ लिखा है उसका एक अल्पांश यहां दिया जाता है :

"सम्राट विलियम द्वितीय का चरित्र लिखते हुए कोई यह नहीं सोच सकता कि वैसी स्थिति और अवस्था में होने पर वह स्वयं क्या करता। यदि आपका बचपन से ही ऐसे वातावरण में पालन-पोषण होता, जिसमें आपपर यह छाप पड़ती कि आपको भगवान ने एक शक्तिशाली राष्ट्र का शासक नियुक्त किया है और आप जिस वंश के हैं वह सामान्य नश्वर जीवों से ऊंचा रहता आता है, यदि आपको तीस वर्ष की अवस्था के पहले ही बिस्मार्क की तीन विजयों का गौरव, प्रशंसा और अधिकार-प्राप्त हो चुका होता, यदि आपकी सेवा में निरन्तर वृद्धि, शक्ति-समृद्धि और अभिलाषा-प्राप्त जर्मन जाति होती, जनता आपको वफादारी और कौशलपूर्ण चाटुकारिता और दरबारदारी का प्रदर्शन किया करती'''तो प्रिय पाठक, क्या आप कैसर के समान ही न बन जाते।''' मुझे १९०६-१९०८ ई० में उस समय सैन्य-व्यूह संचालन देखने का सौभाग्य एक मेहमान के रूप में मिला था, जब वह अपने उच्चतम शिखर पर विद्यमान थी। बारह वर्ष बाद उसी व्यक्ति की क्या दशा होती है—उस सीमा के एक स्टेशन पर रेल के एक डिब्बे के अन्दर वह सिर झुकाए घण्टों पर घण्टे चुपचाप बिताने को बाध्य होता है और इस बात की प्रतीक्षा करता है कि उसे एक शरणार्थी के रूप में वहां से उन लोगों के दुर्वचनों से बचता हुआ भाग निकलने दिया जाए, जिनकी सेनाओं का नेतृत्व करके उसने उनसे बेहद कुर्बानी करवाने के बाद उन्हें असीम पराजय दी थी।

"कैसा घोर दुर्भाग्य था। यह उनका अपराध था या अक्षमता? कभी-कभी अक्षमता और अविवेक का ऐसा बुरा सम्मिश्रण बन जाता है कि उन्हें अपराध के सिवा और कुछ कह ही नहीं सकते। तो भी, इतिहास को उनके प्रति अधिक उदार दृष्टिकोण रखना चाहिए'''वह उसका दोष नहीं, भाग्य था।"

१९३९ ई० के सितम्बर महीने में दूसरा विश्वव्यापी महासमर आरम्भ हो गया। इसमें चर्चिल अपने उसी पद पर पहुंच गए जिसपर वे १९१४ ई० में थे। वे ब्रिटिश नौसेना के गवर्नर बन गए। इस युद्ध में जर्मन आक्रमण ने फ्रांस, बेलजियम और हालैंड को तहस-नहस कर दिया। चेम्बरलेन प्रधान मंत्री के पद से त्यागपत्र देकर अलग हो गए और चर्चिल को इस काल में ब्रिटेन का प्रधान मंत्री बनने का अवसर मिल गया, जिससे वे ब्रिटिश युद्ध-नीति के सम्पूर्ण संचालक बन गए। मई १९४५ ई० में इस महायुद्ध का अन्त हुआ। इसके बाद एटली, बेविन आदि श्रमदलीय सदस्यों के प्रबल हो जाने के कारण चर्चिल ने ब्रिटिश सरकार का पुनर्निर्माण पूर्णतः अनुदार दलीय ढंग पर कर दिया।

किन्तु उसी साल के अन्त में जब फिर चुनाव हुआ तो चर्चिल उसमें परास्त हो गए। इससे चर्चिल को राजनीति से अवकाश मिल गया और वे 'द्वितीय महायुद्ध' लिखने में लग गए। १९४८ ई० में इस ग्रन्थ का पहला भाग प्रकाशित हुआ और फिर क्रमशः पांच और भाग निकले। इस विस्तृत ग्रन्थ को लिखने के लिए चर्चिल को प्रचुर सामग्री उपलब्ध हुई और वे इस युद्ध के संचालकों में एक होने के कारण उसके सूत्रों और घटनाओं से बहुत निकटता के साथ परिचित थे। वास्तव में उन्हें इस रचना के कारण ही नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ। चर्चिल ने युद्धकाल में कितने साहस और धैर्य के साथ दिन-प्रतिदिन सामने आनेवाली समस्याओं का हल किया और अन्त में अपने राजनीतिक और सैनिक ज्ञान का उपयोग किया, यह इस ग्रन्थ के पढ़ने से स्पष्ट हो जाता है।

यहां हम इस विस्तृत ग्रन्थ से युद्ध-समाप्ति-सम्बन्धी एक अनुच्छेद देकर चर्चिल की गद्य-रचना की बानगी पाठकों को दिखाते हैं :

"जब मैं उस रात लगभग तीन बजे बिस्तर पर गया तो मुझे कष्ट-मुक्ति का अनुभव पूर्णरूप से हुआ। मुझे इस समूचे दृश्य (युद्ध में आदेश) के संचालन का अधिकार था। मुझे ऐसा लगा जैसे मैं भाग्य को साथ लेकर चल रहा हूं और जैसे मेरा सारा पूर्व-जीवन मेरी इस घड़ी की परीक्षा के लिए तैयारी में ही व्यतीत हुआ है। ग्यारह वर्ष की राजनीतिक व्याकुलता ने मुझे सामान्य दलगत विरोध से मुक्त कर दिया था। गत छः वर्षों में मैंने जितनी विस्तृत चेतावनियां दी थीं वे अब प्रकाश में आ चुकी हैं और कोई मेरी इस बात का खंडन नहीं कर सकता। मैं न तो युद्ध करने के लिए अपमानित किया जा सकता हूं और न उसकी तैयारी के अभाव के लिए। मैं समझता था कि मैं उसके बारे में काफी जानता हूं और मुझे निश्चय था कि मैं इसमें असफल नहीं हूंगा। इसीलिए मैं प्रातःकाल उठने के लिए अधीर होकर भी गहरी नींद सोया।"

# अर्नेस्ट हेमिंग्वे

अर्नेस्ट हेमिंग्वे को १९५४ ई० का साहित्यिक नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ। इसके पहले ही वे अपनी लौह लेखनी के द्वारा एक प्रसिद्ध उपन्यासकार के रूप में विश्वव्यापी नाम प्राप्त कर चुके थे। उन्हें अपनी सर्वश्रेष्ठ रचना 'दि ओल्ड मैन ऐण्ड दि सी' (बुड्ढा आदमी और समुद्र) पर ही यह पुरस्कार प्रदान किया गया।

पुरस्कार-प्राप्ति के पहले हेमिंग्वे के सम्बन्ध में तीन पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी थीं और वे स्वयं एक साहित्यिक संस्था बन चुके थे। १९५०ई०में उनकी रचना 'एक्रास दि रिवर ऐण्ड इण्टू दि ट्रीज' (नदी पार के निकुंज में) प्रकाशित होने पर उनकी काफी चर्चा हो चुकी थी। एक अमेरिकन उपन्यासकार ने तो उन्हें शेक्सपियर के बाद सबसे महत्त्वपूर्ण लेखक लिख डाला। इसपर पत्रों में बड़ा विवाद छिड़ा और हेमिंग्वे को अनायास ही पत्र-प्रसिद्धि प्राप्त हो गई। इसके पहले भी उनकी कहानियों पर चित्रपट तैयार हो चुके थे। उनके व्यक्तित्व की भी बहुत चर्चा हो चुकी थी। उनकी रचनाओं में मुख्यतः उनकी आत्मकथा निरन्तर झलकती रही है। जिन लोगों और स्थानों से उनका प्रेम था, वे ही उनके उपन्यासों में प्रतिभासित होते हैं। उनके पाठक उनके आख्यायिका-पात्रों में इस प्रकार उलझ जाते हैं कि उनसे अलग होना कठिन हो जाता है। उन्होंने अपने सारे जीवन का, यहां तक कि अपनी भावी मृत्यु-शय्या तक का वर्णन दो उपन्यासों 'दि स्नोज ऑफ़ किलिमंजारो' (किलिमंजारो की बरफ) तथा 'नदी पार के निकुंज' में स्पष्ट रूप से कर दिया है।

अर्नेस्ट मिलर हेमिंग्वे का जन्म अमेरिका के इलीनोई प्रदेश के ओक पार्क में २१ जुलाई, १८९९ ई० में हुआ था। उनके पिता एक देहाती डॉक्टर थे जिनका चरित्र-चित्रण उन्होंने अपनी 'निक ऐडम्स' कहानियों में किया है।

हेमिंग्वे हाईस्कूल से कई बार भागे और उच्चशिक्षा के तो निकट भी नहीं गए। जब वे अठारह वर्ष के थे तो प्रथम महायुद्ध चल रहा था इसीलिए वे सेना में भर्ती होना चाहते थे, पर डॉक्टर ने उन्हें अशक्त कहकर टाल दिया। इसके बाद वे कन्सास सिटी में पत्र-संवाददाता का काम करते रहे। १९१८ ई० में रेडक्रास के एम्बुलेंस-ड्राइवर के काम से लग गए और इटली के मोर्चों पर भेज दिए गए। 'शस्त्र-विदाई' (फेयरवेल टु आर्म्स) में उन्होंने अपने इस अनुभव का वर्णन बड़े सुन्दर ढंग से किया है और यह एक प्रख्यात-

दर्शी का तथ्यात्मक वर्णन है। वे वेनिस से बीस मील पर एक नदी के किनारे घायल हो गए थे जिससे उन्हें मिलान के अस्पताल में भेज दिया गया। इटली की सरकार ने उन्हें तमगा दिया और १९१९ई०में वे अमेरिका लौट आए। युद्ध के अनुभवों को लेकर हेमिंग्वे ने 'ए वे यू विल नेवर वी' (जैसे आप कभी न होंगे) में 'निक ऐडम्स' का जो चरित्र-चित्रण किया है उससे पाठकों का अनुमान है कि युद्ध के आघात और आतंकपूर्ण घटनाओं से उनमें एक सनक-सी आ गई थी। उसके बाद तो वे हिंसा और उससे उत्पन्न स्थितियों को कथा-वस्तु बनाकर ही उपन्यास लिखने लगे।

१९२० ई० में वे फिर पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रविष्ट हुए और इस बार उन्होंने उसमें जमकर १९२६ई०तक काम किया। बाद में भी वे अनेक बार पत्रकारिता से सम्बद्ध रहे। शिकागो में उनकी मुलाकात शेरवुड एण्डर्सन से हुई जो उनके प्रथम साहित्यिक गुरु बने। एण्डर्सन का प्रभाव इनकी बाद की रचनाओं—विशेषकर 'टारेण्ट्स ऑफ़ स्प्रिंग' (वसन्त-प्रवाह) पर पड़ा।

इस रचना के बाद हेमिंग्वे टोरंटो चले गए और वहां एक विदेशी पत्र के सम्वाददाता के रूप में काम करने लगे। पीछे पेरिस में उन्होंने जब हर्स्ट-पत्रमाला के लिए काम किया था तो वहां उनका परिचय कुमारी गरट्रूड स्टीन से हुआ जिन्होंने अपने अनुभवों से उन्हें प्रभावित किया। एज़रा पाउण्ड ने भी इन्हें साहित्यिक सहायता दी और उपन्यासकार सिक मैडोक्स फोर्ड ने भी। जेम्स ज्वायस से भी इनका परिचय हो गया था। कुमारी स्टीन से इनकी घनिष्टता बढ़ी, किन्तु हेमिंग्वे ने उसका आत्म-चरित 'एलिस की आत्म-कथा' (आटोबायोग्राफी आफ एलिस टोकलाज) में लिखते हुए जो कुछ लिख मारा है, वह अतिशय अतिरंजित है अतः अविश्वसनीय भी।

हेमिंग्वे ने पेरिस में कुछ वर्ष गरीबी के साथ काटे और अमेरिका लौटकर एक साल और पत्र का काम करके उससे अलग हो गए और स्वतन्त्र लेखन में लग गए। इस लेखमाला में सबसे पहले १९२३ ई० में उनकी 'थ्री स्टोरीज ऐण्ड टेन पोयम्स' (तीन कहानियां और दस कविताएं) प्रकाशित हुई और १९२५ ई० में 'इन आवर टाइम' (हमारे समय में) शीर्षक कहानी। किन्तु इनमें से कोई भी आकर्षक न सिद्ध हुई। इसके बाद जब इन्होंने १९२६ ई० में 'सन आलसो राइजेज़' (सूर्य भी उगता है) प्रकाशित कराया तो इन्हें आर्थिक सफलता मिली। इनका १९२० ई० के बाद का जीवन ही इसका मुख्याधार था—इसका घटनास्थल पेरिस का एक पत्र-कार्यालय; ब्रिटिश और अमेरिकन एवं बोहेमियन पत्रकारों से वार्तालाप और स्पेन में लम्बी छुट्टी बिताने के स्थानों में रखा गया है।

कुमारी स्टीन ने हेमिंग्वे को सांड और मनुष्य की लड़ाई देखने का चस्का लगा दिया था। १९३७ ई० में 'दोपहर के बाद मौत' (डेथ इन दि आफटरनून) लिखते समय इन्होंने अपनी इस जानकारी का उपयोग भली भांति किया। अपराजित (दि अनडिफी-टेड) कहानी में भी इस अनुभव का लाभ उठाया गया है। १९२७ ई० में इनकी 'स्त्री के

बिना पुरुष' (मेन विदाउट वोमेन) प्रकाशित हुई। इसके बाद तो उनकी रचनाओं की मांग बढ़ गई और पत्रिकाओं में उनकी कहानियां प्रचुर संख्या में निकलने लगीं।

१९२८ ई० में वे अमेरिका लौटने के बाद वहां जमकर दस वर्ष रहे। अब वे अनेक कहानियां लिखने का लोभ छोड़कर एक अच्छा उपन्यास लिखने के लिए जम गए। वहां वे फ्लोरिडा में रहने लगे और १९२९ ई० में जब वे केवल तीस वर्ष के थे 'शस्त्र-विदाई' जैसा उपन्यास प्रकाशित करा दिया जिसकी धूम मच गई और इन्हें व्यापक रूप से यश प्राप्त हुआ। इसके बाद तो वे दो वर्ष तक इधर-उधर सैर करते रहे—स्विट्ज़रलैंड और स्पेन गए और ब्रिटिश ईस्ट अफ्रीका में शिकार खेलने के लिए भी गए। इसके सिलसिले में हेमिंग्वे ने अपनी यात्रा-पुस्तक 'अफ्रीका की हरी पहाड़ियां' (दि ग्रीन हिल्स आफ अफ्रीका) लिखी जो १९३५ ई० में प्रकाशित हुई। उन्होंने उसी पृष्ठभूमि को लेकर दो सुन्दर कहानियां लिखीं जो (विजेता कुछ नहीं लेते) 'विनर्स टेक नथिंग' संग्रह में १९३३ ई० में प्रकाशित हुई। १९३७ ई० में इन्होंने 'हैव एण्ड हैव नाट्' (अमीर और सर्वहारा) उपन्यास साम्यवादी कथा-वस्तु को आधार बनाकर लिखा और प्रकाशित कराया। स्पेन के गृह-युद्ध के बाद उन्होंने 'स्पेनिश अर्थ' (स्पेनी-भूमि) और 'फार हूम दि बेल टॉल्स' (घंटा किसके लिए बजता है) उपन्यास लिखे जो १९४० ई० में प्रकाशित हुए।

१९४१ ई० में युद्ध-संवाददाता बनकर वे चीन चले गए। वहां से लौटने के बाद हवाना में बस गए और उसीको उन्होंने अन्त तक अपना निवासस्थान बनाए रखा। १९४२ से १९४४ ई० तक वे अपनी मोटर लांच में बैठकर क्यूबा से पनडुब्बियां भगाने का काम करते रहे। १९४४ ई० में वे यूरोपीय युद्धक्षेत्र में जा पहुंचे। पेरिस पहुंचनेवालों में उनकी सेना पहली थी। वे जर्मनी भी गए और ब्रिटेन के रायल एयर फोर्स के साथ अनेक सैनिक उड़ानों में गए।

युद्ध के बाद कई वर्षों तक हेमिंग्वे के बारे में किसीने कुछ नहीं सुना। वे हालीवुड में अपनी कहानियों की फिल्म बनवाने का लाभप्रद काम करते रहे। इन फिल्मी कहानियों में 'मैकोम्बर' और 'किलर' बहुत प्रसिद्ध हुई। 'फार हूम दि बेल टॉल्स' तथा 'दि स्नोज़ आफ किलिमंजारो' की कहानियों पर भी चित्रपट बने जिनमें अन्तिम का रूप बदलकर डाइरेक्टर ने अश्लील कर दिया।

१९५० ई० में प्रकाशित 'एक्रास दि रिवर एण्ड इण्टू दि ट्रीज' में उन्होंने मृत्यु का वर्णन कर अपनी मृत्यु की कल्पना की थी। यह पुस्तक बहुत अधिक बिकी, किन्तु 'दि ओल्ड मैन एण्ड दि सी' (१९५४) को नोबल पुरस्कार समिति ने उनकी सर्वश्रेष्ठ रचना घोषित किया। उसी वर्ष (१९५४) ई० में वे पूर्वी अफ्रीका की यात्रा पर भी गए।

हेमिंग्वे को अपनी इन रचनाओं के लिए बड़ा सम्मान प्राप्त हुआ। उनकी 'अफ्रीका की हरित पहाड़ियां' व्यापक रूप में पढ़ी गई। हेमिंग्वे अपनी व्यक्तिगत विशेषता को रखते थे। अमेरिका और यूरोप के सैनिक श्रेणी के अधिकारी उन्हें अपने अन्दर खपनेवाला नहीं समझते थे। बात यह थी कि हेमिंग्वे इनकी तरह रंगीन जातियों से घृणा नहीं करते थे।

चरित्र-चित्रण करते हुए उन्होंने बताया है कि वह मद्यप-सी महिला विवाह तो मादक कैम्पबेल से करनेवाली है जोकि उसीकी सामाजिक श्रेणी का अंग्रेज है, और सोती राबर्ट कोहन के साथ है। फिर भी वह प्रेम इनमें से किसीसे नहीं करती।

'शस्त्र-विदाई' के एक पात्र फ्रेडरिक हेनरी के मुंह से हेमिंग्वे ने सैनिक जीवन के अन्त का वर्णन कटुतापूर्ण शब्दों में करते हुए कहा है : "तुम्हें कुछ सीखने-समझने का समय ही नहीं मिला। अन्त में तुम्हें नियमोपनियमों के फन्दे में फांस लिया गया—और अब तो तुम्हें मौत का आलिंगन करना ही पड़ेगा। अगर बच गए तो गर्मी-आतशक आदि का शिकार बनकर मरना है।" भाग्यवाद का पुट होते हुए भी वह उपन्यास शून्यवाद या अमानवता का समर्थन नहीं करता। इटली के सैनिकों का उन्होंने स्नेहसिक्त वर्णन किया है—पियक्कड़ रिनाल्डी, अब्रुज्जी का नवयुवक पुरोहित, एम्बुलेन्स गाड़ियों के तीन ड्राइवरों के ऐसे चित्र हैं जो भुलाए नहीं जा सकते। घोर कष्ट उठाकर और वीरतापूर्ण पराजय के बाद भी उनमें हंसी-खुशी की गर्मी शेष रहती है।

'घंटा किसके लिए बजता है' ( फार हूम दि बेल टॉल्स ) में १९३७ ई० की घटना है और सो भी चार दिनों के अन्दर घटित। घटनास्थल स्पेन का युद्धस्थल है जहां फ्रांको-लाइन के पीछे एक पुल तोड़ने का प्रयत्न किया जाता है। पर इसे उसमें बड़े खतरे के बाद सफलता मिलती है। प्रयत्न में राबर्ट जोरडन नामक अमेरिकन घुड़सवार घोड़े से गिरकर संकट में पड़ जाता है और पुल तोड़नेवाले दल का नेता पैबलो अपने अनुयायियों-सहित भाग निकलता है। वह अपने कर्तव्य, अपनी टोली और अपनी प्रेयसी मरिया की (जो उस टोली की एक सदस्या है) बातें सोचता है। उसके अन्त को हेमिंग्वे ने ऐसे सुन्दर वर्णन पवारों के ढंग पर लिखा है कि पाठक मुग्ध हुए बिना नहीं रह सकता।

'अमीर और अकिंचन' (हैव ऐण्ड हैव नाट), 'नदी के उस पार निकुंज में' (एक्रास दि रिवर एण्ड इंटू दि ट्रीज़), 'बुड्ढा और समुद्र' (दि ओल्डमैन एण्ड दि सी) आदि उपन्यासों में हेमिंग्वे ने बड़े ही कला और कौशलपूर्ण ढंग से कथावस्तु और वर्णन का सौन्दर्य निभाया है। सच पूछा जाए तो संसार के उपन्यासकारों में केवल हेमिंग्वे ही ऐसे हैं जिनके गद्य में पद्य का आनन्द मिलता है और जिनका प्रत्येक शब्द अत्यन्त स्वाभाविक, जादू-भरा और अपने स्थान पर जड़ा प्रतीत होता है। उनके उपन्यासों में जो दूसरी महत्त्वपूर्ण बात है वह यह कि उनमें कथान्तरों का वैविध्य है। कहीं तो आप उन्हें मैड्रिड के साण्डों के साथ मनुष्य की लड़ाई के मैच में देखेंगे तो कहीं बर्फीली घाटियों में प्रकृति के सुरक्षित सौंदर्य के बीच, कहीं आप उन्हें युद्ध की पहली पंक्ति में देखेंगे तो कहीं बूढ़े और दोरों-सम्बन्धी स्वप्नों में तरंगित होते पाएंगे।

परन्तु संसार को अपने उपन्यासों और चित्रपटों से वैचित्र्य का दर्शन करानेवाला यह महान उपन्यासकार (१९६१ ई० में) अपने घर बैठे बन्दूक साफ करते हुए न जाने कैसे अपने ही हाथों गोली का शिकार हो गया।

# हाल्डोर फिलजन लैक्सनेस

१९५५ ई० का नोवल पुरस्कार आइसलैण्ड के महाकवि हाल्डोर फिलजन लैक्सनेस को मिला। उन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा आइसलैण्ड की एक पुरानी काव्यात्मक शैली का जीर्णोद्धार किया और इस दृष्टि से उनका बहुत अधिक महत्त्व हो जाता है।

लैक्सनेस का जन्म १९०२ ई० में हुआ था। उन्होंने अपनी पहली रचना सत्रह वर्ष की अवस्था में एक उपन्यास के रूप में लिखी थी, किन्तु उसमें इनकी शैली परिपक्व नहीं हुई थी। पीछे जब उन्होंने यूरोप की यात्रा की और प्रथम विश्व-युद्ध के सिलसिले में जगह-जगह घूमे तो उनका अनुभव बढ़ गया। ये रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय के अनुयायी बन गए और कई वर्ष तक लगातार भ्रमण की अवस्था में ही रहे। इनकी अधिकांश यात्रा का समय फ्रांस और संयुक्तराज्य अमेरिका में व्यतीत हुआ। इन्होंने इन धार्मिक आदेशों को मजबूती से पकड़ा कि मनुष्य को अपने पड़ोसियों से प्रेम करना चाहिए। उन्होंने साम्यवाद का भी अध्ययन किया, जिसका परिचय इनकी बाद की रचनाओं में मिलता है।

१९३० ई० तक इन्होंने अपना भ्रमण और लेखन-शैली दोनों परिपक्व कर लेने के बाद जो लेखनी उठाई तो इनकी रचनाएं अधिक महत्त्वपूर्ण बन गईं। वे आइसलैण्ड के पहले निवासी थे जिन्होंने 'सल्का वल्का' उपन्यास १९३४ ई० में प्रकाशित कराकर नाम कमा लिया। इनकी भाषा और शैली दोनों में सजीवता आ गई। आइसलैण्ड में जिन गांवों में मछलियां मारी जाती हैं, उनका चित्रण उन्होंने बड़ी खूबी से किया है।

इस प्रकार की और भी रचनाएं उन्होंने कीं जिनमें 'स्वतन्त्र लोग' (सजालफरेट फोक) १९३५ ई० में प्रकाशित हुई। इसमें आइसलैण्ड के निवासियों को प्रकृति और समाज के विरुद्ध कैसा संघर्ष करना पड़ता है, इसका सुन्दर वर्णन है—साथ ही उन्हें अपना स्वतन्त्र अस्तित्व कायम रखने के लिए क्या-क्या करना पड़ता है, इसका भी।

'आइसलैण्ड का घंटा' (आइसलैण्ड क्लुकान) १९४३ ई० में प्रकाशित हुआ जिसमें यह दिखाया गया है कि डेन्मार्क के शासनान्तर्गत १८वीं शताब्दी में आइसलैण्ड की कैसी दुर्दशा हो गई थी। वर्तमान युग का आभास भी उनकी रचनाओं में अच्छी तरह मिलता है। लैक्सनेस ने अपनी मातृभाषा में कोमल भावनाओं से भरा कथा-साहित्य भरकर उसके भण्डार की वृद्धि और अपने छोटे-से देश का नाम उजागर किया है।

# जुआन रामोन जिमेनेज़

१९५६ ई० का पुरस्कार स्पेन के कवि जुआन रामोन जिमेनेज को प्राप्त हुआ।

जिमेनेज का जन्म पोर्टोरिको (अमेरिका) में १८८१ ई० में हुआ था और १९५८ ई० में उनका देहान्त हो गया। उनके गीत स्पेनी भाषा में हैं और वे गेय होने के कारण स्पेन-भाषी क्षेत्रों में बड़े प्रेम से गाए जाते हैं। उनकी कविताओं में उच्च भाव और कलात्मक शुद्धता भरी हुई है।

१९१२ ई०से १९१६ ई० तक जिमेनेज अन्य स्पेनी कवियों के साथ रहे जिनमें अण्टोनियो मकाडो के साथ उनका अच्छा सम्बन्ध रहा। १९१६ ई० में इनका विवाह जेनोबिया कैम्परुवी के साथ हुआ जिन्होंने श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की रचनाओं का अनुवाद स्पेनी भाषा में किया था। स्पेन के गृह-युद्ध के समय जिमेनेज मैद्रिद में ही रहे। इसके बाद उन्होंने देश-त्याग कर दिया और विदेशों में रहने लगे। क्यूबा में इन्होंने काफी समय गुजारा और २९ मई, १९५८ ई० को सेन जुआन में उनका देहान्त हो गया।

जिमेनेज ने अपने जीवन का अधिकांश समय लिखने में ही लगाया। उन्होंने कविताएं तो लिखीं ही, प्रकाशन-सम्बन्धी अन्य कामों में भी व्यस्ततापूर्वक समय काटा। फ्रेंच साहित्यिकों में उनकी रचनाओं की काफी चर्चा हुई। उनका 'अध्यात्म गीत' (सोनेटोज स्पिरिचुएल) जो १९१४-१५ ई० में ही प्रकाशित हुआ था, अधिक चर्चा का विषय बना क्योंकि उसने सोलहवीं सदी के स्पेनी गीतों की याद दिला दी।

विवाह के बाद जिमेनेज की साहित्य-रचना ने और भी ज़ोर पकड़ा और फिर तो उनके ग्रन्थ सिलसिलेवार निकलते ही गए। प्रकाशन का यह क्रम १९५५ ई० तक चलता ही गया। उनकी गद्य-रचना में तीन उल्लेखनीय हैं—'प्लेटेरोय और मैं' 'एस्पानोल्स डि ट्रेस मुण्डोज़' और 'राइडर्स टु द सी'।

# आलबेयर कामू

१९५७ ई० का नोवल पुरस्कार फ्रांसीसी साहित्यकार आलबेयर कामू को मिला।

कामू का जन्म ७ नवम्बर, १९१३ ई० को अलजीरिया में हुआ था। प्रथम विश्वव्यापी महासमर मे उनके पिता काम आ गए थे। उनके पिता अलसेशियन और माता स्पेनी थीं। जिन दिनों उनका जन्म हुआ, घर में गरीवी और कठिनाई से दिन व्यतीत हो रहे थे। अलजीरिया विश्वविद्यालय में वे दर्शनशास्त्र का अध्ययन कर रहे थे, पर बीमारी के कारण पढ़ना-लिखना छूट गया। १९३९ ई० तक वे उत्तर अफ्रीका में ही रहे। फिर वे पत्रकार और अभिनेता के रूप में काम करते रहे। खेल-कूद और रंगमंच उनकी दिलचस्पी के विषय बन गए।

उनकी रचनाओं में सर्वप्रथम—'ला ऐन्वर्स ए-लॅंड्राइट' १९३७ ई० में प्रकाशित हुआ। उसके वाद 'नोसेज' १९३८ ई० में। ये दोनों ही निवन्ध-संग्रह थे, जिनसे उनकी लेखन-शक्ति और उत्तरी अफ्रीका के प्रति भावना स्पष्ट हो जाती है।

१९४२ ई०में कामू फ्रांसीसी रक्षक-दल में सम्मिलित हो गए और एक गुप्तपत्र—'कामेट' के लिए लिखने लगे। उसका सम्पादन उन्होंने १९४५ ई० तक किया। इसके वाद उनके चार पत्र पुस्तकाकार प्रकाशित हुए। इन पत्रों द्वारा युद्ध के वारे में कामू के विचार सहज ही समझ में आ जाते हैं।

कामू की पहली मुख्य रचना 'ले एंट्रेंजर' थी जो १९४२ ई० में प्रकाशित हुई। १९४६ में इसका अंग्रेजी अनुवाद 'दि आउटसाइडर' और 'स्ट्रेंजर' (अमरीकन संस्करण) के नाम से प्रकाशित हुए। इस रचना में उनकी एकाकीपन की भावना व्यक्त हुई है। इससे वे बीसवीं सदी के रहस्य-ज्ञाता के रूप में प्रसिद्ध हो गए। 'जीवन' का निरर्थक रूप में प्रयोग करने के वारे में उनकी दूसरी रचना 'ले माइथ डि सिस्फी' १९४२ ई० में निकली जो वाद में अंग्रेजी में अनूदित होकर प्रकाशित हुई।

इसके वाद नाटकों का तांता शुरू हुआ तो 'ले मालेनतेन्द्र (१९४४ई०), 'कैलिगुला' (१९४५ ई०), 'ले रेट-डी-सीज' (१९४८ ई०), 'ले जस्टिस' (१९५०ई०) प्रकाशित हुए जिनका मिश्रित स्वागत हुआ। ये सभी नाटक रंगमंच पर अभिनीत हुए और इनमें दूसरे और चौथे के चार-चार सौ से अधिक प्रदर्शन हुए।

१९४७ ई० में उनका 'ले पेस्टे' प्रकाशित हुआ जिसका अंग्रेज़ी संस्करण 'प्लेग'[1] के नाम से निकला। इसमें यह दिखाया गया है कि उत्तर अफ्रीका में प्लेग फैलने पर उसकी मनुष्य पर क्या प्रतिक्रिया होती है, किन्तु इसका गहरा और अन्तर्निहित अर्थ भी है। कामू ने यहां समाज के प्रति व्यक्ति के कर्तव्य का दिग्दर्शन किया है। इस विषय को उन्होंने अपने एक दूसरे उपन्यास 'विद्रोह' (ले होम रिवोल्ट) में अधिक विस्तार के साथ प्रतिपादित किया है। इसमें क्रान्ति के आदेश पर विस्तृत तर्कयुक्त व्याख्या प्रस्तुत की है।

१९५६ ई० में उनका 'ला शूट' प्रकाशित हुआ जिसका अंग्रेजी अनुवाद 'फाल' (पतन) के नाम से १९५७ ई० में निकला। यह एक लघु उपन्यास है जिसमें लेखक की एक अद्भुत आशा की झलक मिलती है। इनकी छः कहानियों का एक संकलन 'ले एग्जाइल एट ले रोमूम' (१९५७ ई०) के नाम से प्रकाशित होकर अधिक ख्याति प्राप्त कर चुका है।

कामू ने धार्मिक विश्वास के अभाव में एक स्वीकृत मानदण्ड की स्वीकृति पर जोर डाला है। उनकी रचनाओं में आशावाद की झलक सर्वत्र दिखाई देती है। उन्होंने बौद्धिक और आध्यात्मिक समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न किया है और इनके लिए मानवीय एकता पर ज़ोर दिया है। उन्होंने मानव-दुखों की अनुभूति अपने हृदय से उंडेलकर कागज पर रख दी है और हिंसा, क्रूरता, प्रपीड़न और अत्याचार के विरुद्ध चुनौती दी है। इस हैसियत से उन्होंने एक विशिष्ट लेखक का स्थान प्राप्त कर लिया है और वे उसके अधिकारी बन गए हैं।

१. हिन्दी में भी यह इसी नाम से अनूदित होकर प्रकाशित हो चुका है।

# बोरिस पास्तरनाक

१९५८ ई० का नोबल पुरस्कार रूस के बोरिस लियोनन्दोविच पास्तरनाक को देने की घोषणा हुई, पर रूसी कम्युनिस्ट सरकार की राजनीतिक कट्टरता के कारण उन्होंने उसे लेने से इन्कार कर दिया।

पास्तरनाक की रचनाओं में अधिकांश समसामयिक काव्य हैं और उन्हें रूसी महाकाव्य-परम्परा के क्षेत्र में अद्भुत सफलता प्राप्त हुई है, पर उनके उपन्यास 'डॉ० जिवागो' में उन्होंने अपने विचार इस स्वतंत्रता से व्यक्त किए जो रूसी सरकार को सहन नहीं हुए।

पास्तरनाक का जन्म १० फरवरी, १८९० ई० को मास्को में हुआ था। उनके पिता एक कलाकार थे जिन्होंने लियो टॉलस्टॉय की रचनाओं का भी चित्रण किया था और उनके परिवार का भी।

बोरिस पास्तरनाक ने १९१२ ई० से लिखना शुरू किया और उनका पहला कविता-संग्रह 'बादलों में जुड़वां' (ब्लिजनेत्स वौ० तुचाख) १९१४ ई० में प्रकाशित हो गया था। उनके कविता-संग्रहों में 'प्रतिबन्ध के पार' (पोवर्स बैरीरोव) १९१७ ई० में, 'कथावस्तु और भिन्नताएं' (तेमी इवरियात्सी) १९२३ ई० में और 'दूसरा जन्म' (तोरो रोजदेनी) १९३२ ई० में प्रकाशित हुए। इनकी कुछ कविताएं और कहानियां अंग्रेजी में भी अनूदित हुई हैं।

उन्होंने उराल के एक कारखाने में काम किया और वे सदा विचारों की उलझन और निष्कर्ष में तल्लीन रहे। 'मेरी बहन, जीवनी' शायद उनके कविता-संग्रहों में सबसे अधिक पसन्द किया गया। यह १९२२ ई० में ही प्रकाशित हो गया था। 'लेफ्टिनेंट स्मित' (१९२६ ई०) इनकी बाद की रचना है। १९२७ ई० में उन्होंने कुछ कहानियां और अपनी आत्मकथा प्रकाशित कराई। १९३० से १९४० ई० के बीच उनका कोई महत्व-पूर्ण ग्रन्थ नहीं निकला और गेटे, शेक्सपीयर, क्लीस्ट, वर्लेन और बेन जान्सन की रचनाओं का रूसी अनुवाद उन्होंने उन्हीं दिनों किया। १९३७ ई० में उन्होंने सैनिकों की एक टुकड़ी को विद्रोह के लिए प्राणदण्ड देने का विरोध किया।

१९५३ ई० में रूस के तत्कालीन जोसेफ स्टालिन की मृत्यु के बाद उन्होंने कोई महत्त्वपूर्ण रचना की तो वह 'डॉक्टर ज़िवागो' उपन्यास था, पर उसे १९५६ में

'नोवीमीर' मासिक ने प्रकाशित करने से इन्कार कर दिया। इसका कारण यह बताया गया कि उसमें समाजवादी क्रान्ति का विरोध दिग्दर्शित किया गया है।

इस प्रकार निराश होकर पास्तरनाक ने अपनी यह रचना एक इटालियन साम्यवादी प्रकाशक को, जो रूस आया था, सौंप दी, और वह रूसी के बदले नवम्बर १९५७ ई० में पहले इटालियन में और फिर अंग्रेज़ी में प्रकाशित हुई। बाद में इसका फ्रेंच संस्करण निकला। २२ अक्तूबर को स्वीडिश एकेडमी ने उन्हें नोबल पुरस्कार देने की घोषणा की। ये पहले ही रूसी थे जिन्हें उनकी 'सुरम्य काव्य-कला और अन्य रचनाओं' के लिए यह पुरस्कार घोषित हुआ; पर उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया। इवान बुनिन नामक जिस रूसी को १९३३ ई० में यह पुरस्कार मिला था, वे एक जिलावतन रूसी थे।

पास्तरनाक इस पुरस्कार की घोषणा से प्रसन्न हुए थे; परन्तु जब रूसी पत्रिका 'लिटरेचरन्या गजेटा' में यह प्रकाशित हुआ कि यह पुरस्कार पास्तरनाक को उनके 'डाक्टर जिवागो' में प्रतिपादित साम्यवाद-विरोधी विचारों के कारण राजनीतिक प्रोत्साहन के रूप में दिया गया है तो २९ अक्तूबर को पास्तरनाक ने पुरस्कार लेने से इन्कार करते हुए स्वीडिश एकेडमी को सूचित किया कि वे इस पुरस्कार को लेने के योग्य नहीं हैं। शायद रूस उन्हें जिलावतनी की सज़ा भी दे देता, पर उन्होंने ख्रुश्चेव से प्रार्थना की कि उन्हें देश से न निकाला जाए, क्योंकि ऐसा करने का अर्थ होगा उन्हें मृत्यु-दण्ड देना। ३० मई, १९६० ई० को उनका देहान्त हो गया।

पास्तरनाक पहले और एकमात्र ऐसे बड़े कवि थे जिन्होंने क्रांति (१९१७ ई०) के बाद भी रूस को नहीं छोड़ा। साम्यवादियों ने उनकी कड़ी टीका की। १९३० ई० के बाद तो उनकी रचनाएं अंग्रेज़ी, फ्रेंच, जर्मन और अन्य भाषाओं की श्रेष्ठ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगीं। उन्होंने अंग्रेज़ी, फ्रेंच, जर्मन आदि भाषाओं से रूसी में अनुवाद भी किए। इन अनुवादों में शेक्सपीयर, गेटे की श्रेष्ठ रचनाएं सबसे ऊंची हैं। उनका अपना विख्यात उपन्यास, जिसकी धूम सारे संसार में मची, 'डॉक्टर ज़िवागो' ही है जो नवम्बर १९५० ई० में प्रकाशित होकर विख्यात हुआ।

# साल्वातोर काज़ीमोदो

१९५९ई० का नोवल पुरस्कार इटली के सिसिली द्वीपवासी प्रसिद्ध कवि सीन्योर साल्वा-तोर काज़ीमोदो को मिला। उनकी रचनाओं में यह विशेषता है कि उनमें जीवन के दुःखपूर्ण अनुभव आग्नेय भाषा में व्यक्त किए गए हैं। कविता-लेखन के अतिरिक्त उन्होंने समीक्षा के रूप में भी बहुत कुछ लिखा है।

साल्वातोर का जन्म सिसिली द्वीप के मोदिका नामक स्थान में २० अगस्त, १९०१ ई० को हुआ था। उनकी शिक्षा विधिवत् हुई थी और वे अपने समसामयिक तकनीकी प्रगति से भली भांति अवगत प्रतीत होते हैं। उनकी बाद की रचनाओं में इसका आभास अच्छी तरह मिल जाता है। रोम के एक शिल्प महाविद्यालय में इन्होंने शिक्षा प्राप्त की थी और उसके बाद इटली सरकार की सेवा में इंजीनियर की हैसियत से काम करते हुए उन्होंने सारे इटली देश की यात्रा दस वर्ष तक की। १९३५ ई० में वे मिलान में बस गए और वहां अपनी साहित्यिक गतिविधियों के कारण काफी विख्यात हो गए। कुछ दिनों बाद वे इटालियन भाषा के प्राचार्य नियुक्त हो गए। अध्यापन-काल में उन्होंने नाटकों की समीक्षाएं विशेष रूप में लिखीं जो अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रका-शित हुईं। उनके विचार वामपक्षीय थे इसलिए वे 'इर्मेतिस्मो' में काफी आगे आए। उन्होंने गेय कविताओं की परम्परागत गायन-पद्धति में नये सुधार सुझाए और अभिव्यक्ति की नई शृंखलाओं की ओर इंगित किया। उन्होंने बताया कि संगीत के प्रभाव में शब्द की अपेक्षा ध्वनि और लय विशेष काम करते हैं। इसी दृष्टि ने पहले उनगारेत्ती और भाण्टेल की शिष्यता करके बाद में उन्होंने उनकी धुनों से अपनी निजी शैली विकसित की।

उनकी रचनाओं में 'जल और थल' (एक्वेसतेअर) १९३० ई०में प्रकाशित हुई और 'निराली धरती' (ला तेरा इम्प्रेगियेविल) १९५८ ई० में। इन दोनों के कारण उन्हें 'वियारगो पुरस्कार' प्राप्त हुआ। इनकी कविताएं जीवन के गहरे स्तर को स्पर्श करती हैं।

काज़ीमोदो ने ग्रीक, लैटिन और अंग्रेज़ी (शेक्सपीयर के 'टेम्पेस्ट') से अनुवाद भी किए हैं और उन्हें आधुनिक अभिरुचि का भी पूरा ज्ञान है।

इटली में मुसोलिनी की तानाशाही के दिनों में वहां के साहित्यिक—सिलोने, अलवर्तो मोरोविया और वितोरिनी दबे-से पड़े थे। तानाशाही के पतन के बाद ही उनकी

बातें सुनी जा सकीं और उनकी रचनाओं की कद्र हुई। इसका अधिकांश श्रेय साल्वातोर काजीमोदो को है। उनकी कविताओं का संग्रह पांच जिल्दों में प्रकाशित हुआ है जिनके नाम अंग्रेजी अनुवाद-सहित इस प्रकार हैं :

(१) और शाम हो गई (And Suddenly it is Evening)
(२) दिन पर दिन (Day-By-Day)
(३) अब जीवन स्वप्न है (Life is Now Dream)
(४) नकली हरियाली और असली (The False Green and The Real)
(५) निराली धरती (The Matchless Earth)

उन्हें 'एतनाताओमीना पुरस्कार' नामक अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार भी उनकी श्रेष्ठ कविताओं के लिए मिल चुका है।

# एलेक्सिस सेण्ट लेजर

१९६० ई० का नोबेल पुरस्कार एलेक्सिस सेंट लेजर को मिला जिनका उपनाम 'सेण्ट जॉन पर्से' है। उनकी कविताओं में कल्पना की उड़ान बहुत है और ये वर्तमान युग का सुन्दर चित्रण करती हैं। ये जीवन को गम्भीरतापूर्वक नहीं, स्वप्न की भांति देखते और उसपर अपनी कल्पना की उड़ान भरते हैं। कविता में इनकी तुलना ह्विटमैन, इलियट और एजरा पाउण्ड से की गई है।

पर्से या लेजर का जन्म ३१ मई, १८८७ ई० को फ्रांस के एक द्वीप 'सेजर ले फ्यूले' में हुआ। उनकी शिक्षा-दीक्षा एक वृद्ध धर्माचार्य के द्वारा हुई थी। उनकी दाई एक हिन्दू स्त्री थी जो शैवमत की गुप्त अनुगामिनी थी। उनकी प्रारम्भिक कृतियों में 'समुद्र और तूफान' ही अधिक उभरते हैं और गर्म देशों के पेड़-पौधे हरियाली आदि भी।

ग्यारह वर्ष की अवस्था में ये अपने पारिवारिक टापू से फ्रांस लाए गए, जहां उन्होंने साहित्य, औषधिशास्त्र और कानून का अध्ययन किया। १९१४ ई० में ये दूता-वास की सेवा में ले लिए गए। उनकी मित्रता कुछ चीनी दार्शनिकों से हो गई। पहाड़ों के बीच में उन्होंने एक मन्दिर किराये पर ले लिया था और उसमें उन्हें बड़ा आनन्द आता था। छुट्टी के दिनों में वे गोबी के रेगिस्तान की सैर को जाया करते थे। वे फीजी और न्यूहेब्रिड्स के बीच में दक्षिण समुद्र की अनुसंधान-यात्रा पर भी जाते थे।

१९२२ ई० में शान्तिदूत एरिस्टाइड ब्रिआंद के अनुरोध पर सेण्ट लेजर वाशिंग-टन में हुई निशस्त्रीकरण परिषद् में भाग लेने अमेरिका गए क्योंकि ये सुदूरपूर्व के विशे-षज्ञ माने जाते थे। बाद में तो ब्रिआंद उनके साथ फ्रांस आ गए और वहां उनके दाहिने हाथ बन गए। ब्रिआंद की १९३२ ई० में मृत्यु हो जाने के बाद लेजर वैदेशिक सचिव बन गए। फिर भी रात का समय वे काव्य-रचना में ही लगाते रहे।

इन दिनों लेजर अमेरिका में रहते हैं, जहां ये 'लाइब्रेरी ऑफ़ कांग्रेस' के 'फैलो' बना लिए गए हैं। फ्रांसीसी काव्य-धारा के बारे में ये लाइब्रेरी के परामर्शदाता हैं।

सेण्ट लेजर की पहली रचना १९०९ ई० में 'इमेजेज ए'-क्रूसो' के नाम से प्रका-शित हुई। उनका दूसरा कविता-संग्रह 'इलोजेज' शीर्षकान्तर्गत १९१० ई० में निकला।

'नोवेले रिव्यू फ्रांसीस पोमे' नवम्बर १६२२ ई० में प्रकाशित हुआ, 'एमिती दू प्रिंस' १६२२ ई० में और 'अनाबेस' १६२४ ई० में प्रकाशित हुआ जिसका अनुवाद कवि एस० इलियट ने अंग्रेजी में करके १६३० ई० में प्रकाशित कराया। इस रचना का अनुवाद जर्मन, इटालियन, रूमानियन और रूसी में भी प्रकाशित हुआ। यही उनकी सर्वश्रेष्ठ कृति भी मानी जाती है। 'निर्वासित' (एग्ज़ाइल) भी इनकी अच्छी रचनाओं में है।

# आइवो एण्ड्रीक

१९६१ ई० का नोबल पुरस्कार यूगोस्लाविया के प्रसिद्ध साहित्यिक आइवो एण्ड्रीक को प्राप्त हुआ।

एण्ड्रीक का जन्म बोसिया क्षेत्र में १८९२ ई० में हुआ था। उनकी शिक्षा सारा-जेवो और जागरेब में हुई थी। साहित्य के अतिरिक्त उन्हें राजनीति में भी दिलचस्पी थी और वे बाद में राजदूत हो गए। द्वितीय विश्व-महासमर के दिनों में वे बर्लिन (जर्मनी) में यूगोस्लाव-राजदूत थे।

यूगोस्लाविया के इतिहास को लेकर उन्होंने अपने क्षेत्र बोसिया की तत्कालीन विभूतियों का ऐसा सजीव वर्णन किया है कि उसे महाकाव्य की टक्कर का कहा जा सकता है। इतिहास के पात्रों और दृश्यों का इन्होंने शक्तिशाली ढंग से चित्रण किया है।

एण्ड्रीक की रचनाओं में, जो अंग्रेज़ी में अनूदित होकर ख्याति प्राप्त कर चुकी हैं, दो—'दि ब्रिज ओवर ड्रायना' तथा 'ए क्रॉनिकल एबाउट ट्रावनीक' अधिक प्रसिद्ध मानी जाती हैं और वास्तव में यही उनकी सर्वश्रेष्ठ रचनाएं हैं।

# जॉन स्टेनबेक

१९६२ ई० का नोबल पुरस्कार अमरीकी उपन्यासकार जॉन स्टेनबेक को प्राप्त हुआ। इनका जन्म १९०२ ई० में हुआ था और इनकी शिक्षा-दीक्षा स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय में हुई थी। ये विद्यार्थी-जीवन में मजदूरी करके खर्च चलाते थे इसलिए इनको विशेष विद्यार्थी का दर्जा मिल गया था। लेखन-कार्य का प्रयोग इन्होंने अपने छात्र-जीवन से ही आरम्भ कर दिया था। १९३५ ई० में इन्होंने 'टार्टिला फ्लैट' नामक उपन्यास लिखा जोकि प्रयोग के रूप में इनका चौथा प्रयत्न था। उसमें उन्होंने अमेरिका के दक्षिणी-पश्चिमी आवारा मजदूरों का अच्छा चित्रण किया है।

१९३६ ई० में स्टेनबेक ने 'इन डुब्बियस बैटिल' लिखा जिसमें मजदूरों की हड़ताल का विषय विस्तारपूर्वक चित्रित किया गया है। १९३७ ई० में उनका 'ऑफ़ माइस एण्ड मेन' प्रकाशित हुई जो एक भावुकतापूर्ण रोमांचक नाट्य-रचना है। १९३८ ई० में उनका 'लांग वेली' नामक कहानी-संग्रह प्रकाशित हुआ। १९३९ ई० में उनका 'ग्रेप्स ऑफ़ रैथ' नामक उपन्यास निकला जिसपर पुलिट्ज़र पुरस्कार प्राप्त हुआ। १९४२ ई० में इनका 'द मून इज डाउन' उपन्यास छपा जिसमें नार्वे आक्रमण का वर्णन है। 'कैनेकी रो' १९४५ ई० में प्रकाशित हुआ जो कैलिफोर्निया के समुद्र-तट की कहानी है। इस रचना के उपसंहार-स्वरूप एक दूसरी रचना 'स्वीट थर्सडे' के नाम से १९५४ ई० में प्रकाशित हुई जो मानवीय सहानुभूति की भावनाओं से ओत-प्रोत है। इसके पूर्व १९४७ ई० में इनकी दो रचनाएं—'वेवर्ड बस' और 'पर्ल' नाम से प्रकाशित हुई थीं जिनका चित्रण जे० सी० ओर्जको नामक कलाकार ने किया था। १९५२ ई० में इनका 'ईस्ट ऑफ़ अदन' नामक उपन्यास प्रकाशित होकर अच्छा नाम पा गया।

जॉन स्टेनबेक की अवस्था अब साठ वर्ष की हो गई है। इनकी रचनाओं में भावोद्वेग का उभार काफी होता है और प्रायः बीच-बीच में हास्य-रस की झलक आ जाती है। अमेरिका का जो समाज सभी वर्गों से परे या 'जाति-बाहर' गिना जाता है उसका चित्रण इन्होंने अच्छी तरह किया है। इस दृष्टि से वे अमेरिका के अन्य नोबल पुरस्कार-विजेताओं—सिनक्लेयर लुईस, पर्ल बक, यूजेन ओ'नील, विलियम फॉकनर और अर्नेस्ट हेमिंग्वे से भिन्न प्रकार के औपन्यासिक हैं। इन सभी साहित्य-स्रष्टाओं में अन्तिम

दा से इनकी अधिक घनिष्ठता रही है।

स्टेनबेक गत महायुद्ध के पहले तो सर्वप्रिय लेखक थे, पर महायुद्ध के बाद इनके अनुभव और तकनीक में परिवर्तन आ गया और उच्च स्तर की रचनाओं के लिए उनकी प्रशंसा की अपेक्षा भर्त्सना अधिक होने लगी—फिर भी इनका नाम तो प्रथम श्रेणी के उपन्यासकारों में पहले भी था और अब भी है। १९५० ई० से ही इनकी रचनाओं पर पुरस्कार देने के लिए नोबल पुरस्कार समिति हर साल विचार करती रही है।

डा० आस्टरलिंग जैसे समीक्षक ने इनकी रचनाओं की समीक्षा में १९४० ई० से १९५० ई० तक की और फिर १९५० ई० से आगे की अवधि में प्रकाशित रचनाओं —'कैनेकी रो' से 'स्वीट थर्सडे' तक सभी रचनाओं में क्षीणतर शक्ति का अनुभव किया है। किंतु गतवर्ष इनके 'द विंटर ऑफ अवर डिस्कंटेण्ट' (असन्तोषजनक शीत) जैसे विस्तृत उपन्यास पर अधिक अनुकूल टीका-टिप्पणियां हुई हैं। 'ग्रेप्स ऑफ रैथ' से इनका उच्च स्तर कायम रह सका है जिसमें आवारे का ओकलोहामा से स्थानान्तरित होकर केलीफोर्निया जाना चित्रित किया गया। अकेले अमेरिका में इस उपन्यास की बीस लाख प्रतियां बिकी हैं। इस उपन्यास का अनुवाद तैंतीस भाषाओं में प्रकाशित हो चुका है। प्रेसिडेण्ट रूजवेल्ट ने इनकी इस रचना की कद्र और प्रशंसा की है।

स्टेनबेक का जन्म कैलिफोर्निया के एक साधारण परिवार में हुआ था जो सैलिनास घाटी में रहता था। इनके विद्यार्थी-जीवन से ही इनका घुमक्कड़ जीवन आरम्भ हो गया था। ये एकसाथ कई काम करने के आदी शुरू से ही हो गए—खेतों में, अखबार में और पहरेदारी के काम में अपने विद्यार्थी-जीवन से ही लग गए थे और उनका 'कप ऑफ गोल्ड' (सोने की प्याली) उपन्यास भी ऐसे ही समय में लिखा गया था। इसके बाद तो स्टेनबेक प्रथम श्रेणी के औपन्यासिक बन गए। फॉकनर के उपन्यासों के मुकाबले में स्टेनबेक का 'डुब्वियस बैटिल' ही रखा जा सकता है जिसके कथावस्तु में हड़ताल को मुख्य बनाया गया है। यह १९३६ ई० में प्रकाशित हुआ था। 'आफ माइस एण्ड मेन' में विनोद और विषाद दोनों का सामंजस्य है और यह एक सर्वथा निर्दोष रचना मानी जाती है। यह १९३७ ई० में प्रकाशित हुई थी। 'लांग वेली' कथा-संग्रह उसके बाद १९३८ ई० में प्रकाशित हुआ और 'ग्रेप्स ऑफ रैथ' तो उनकी तत्कालीन विख्यात रचना मानी जाती है। स्टेनबेक इस रचना के बाद साहित्य-संसार में जम गए। वे प्रतिदिन २००० से ३००० शब्द ही लिखने लगे और वह भी सप्ताह में छः दिन। उनकी 'क्यूट', 'सेंटीमेंटल' और 'प्रिटेन्शस' उन्हीं दिनों की रचनाएं हैं जिनकी बिक्री बहुत तेज़ी के साथ हुई। 'ट्रैवेल्स विद चार्ली' उनकी नवीनतम रचना है जो उनकी २७वीं कृति है। पुरस्कार-समिति ने उनकी रचनाओं में 'द विंटर ऑफ अवर डिस्कंटेण्ट' उपन्यास को उच्चतम स्तर का माना है।